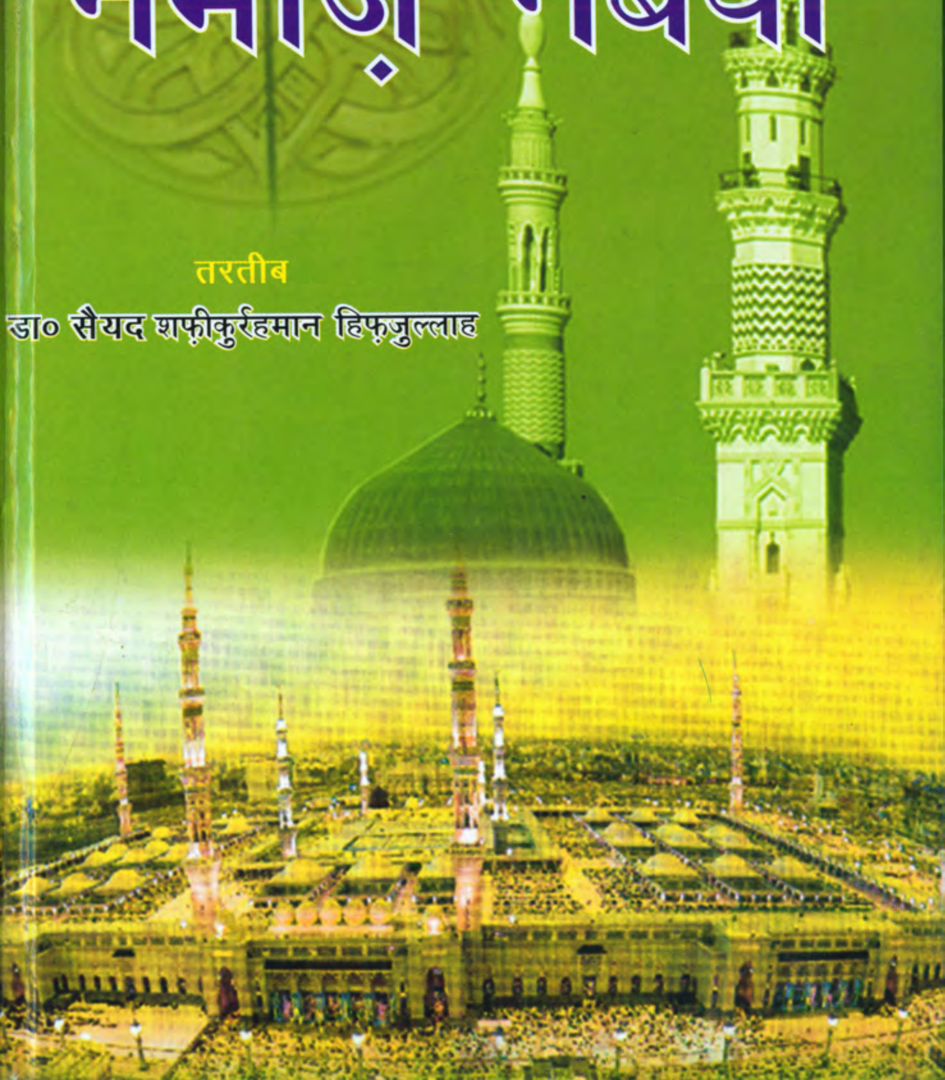
"नमाज़ उसी तरह पढ़ो जिस तरह मुझे पढ़ते हुए देखते हो"
(अलहदीस)

नमाज़े नबवी ﷺ

तरतीब
डा० सैयद शफ़ीकुर्रहमान हिफ़ज़ुल्लाह



नमाज़ इसी तरह पढ़ो जिस तरह मुझे पढ़ते हुए देखते हो —अलहदीस

नमाज़े नबवी

सहीह अहादीस की रोशनी में

संकलन

डा० सैयद शफ़ीकुर्रहमान हिफ़ज़ुल्लाह

तहक़ीक व तख़रीज

अबू ताहिर जुबेर अली हिफ़ज़ुल्लाह

तस्हीह व तन्क़ीह

शेख हाफ़िज सलाहउद्दीन· यूसुफ

प्रकाशक

अल किताब इन्टर नेशनल

मुरादी रोड, बटला हाउस, जामिया नगर, नई दिल्ली-25

पुस्तक का नाम : नमाज़े नबवी

संकलन : डा० सैयद शफ़ीकुर्रहमान हिफ़ज़ुल्लाह

ज़ेरे निगरानी : सैयद शौकत सलीम

संख्या : एक हज़ार

प्रकाशन वर्ष : 2007

मूल्य : 120

प्रकाशक

अल किताब इन्टर नेशनल

मुरादी रोड, बटला हाउस, जामिया नगर,

नई दिल्ली-110025

विषय-सूची

प्रकाशक की ओर से

नमाज़ इस्लाम के पांच बुनियादी स्तंभों में से एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्तंभ है। यह अमल भी है और अक़ीदा भी। मोमिन की पहचान भी है और मेराज भी। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हमारे और उन (काफ़िरों) के बीच अन्तर नमाज़ है। यही वजह थी कि कुफ़्र की तरफ़ संबंधित होने के भय से कपटी भी मस्जिदे नबवी में आकर नमाज़ें पढ़ते थे।

नमाज़ में केवल ज़बान ही अल्लाह से बात नहीं करती, बल्कि दिल भी उसकी बारगाह में सम्मान व मुहब्बत, भय व डर और उम्मीद के शिष्टाचार बजा लाता है। किसी ने ख़ूब कहा है :

"जब अल्लाह की बातें सुनने को जी चाहता है तो क़ुरआन पढ़ता हूं। जब अपनी सुनाने को दिल चाहता है तो नमाज़ शुरू करता हूं।" क्योंकि नमाज़ी जब सूरह फ़ातिहा पढ़ता है तो अल्लाह तआला हर हर आयत का जवाब देता है।

निःसन्देह नमाज़ एक सम्पूर्ण इबादत है जो शारीरिक, ज़बानी और हार्दिक इबादात का सुन्दर समन्वय है। लेकिन इसकी स्वीकार्यता इस बात पर निर्भर है कि इसे रसूलुल्लाह सल्ल० की सुन्नत के मुताबिक़ अदा किया जाए। नमाज़ से संबंधित हर किताब की पेशानी पर यह हदीस नबवी "सल्लू कमा रऐतुमूनी उसल्ली" (नमाज़ इसी तरह पढ़ो जिस तरह तुमने मुझे नमाज़ पढ़ते हुए देखा है) ज़रूर लिखी जाती है, लेकिन इन किताबों के अध्ययन से यह कड़वी हक़ीक़त सामने आती हैं कि वह मसनून तरीक़े पर नहीं लिखी गईं बल्कि सुन्नते नबवी की बजाए अपने अपने मत का प्रचार करने के लिए लिखी गई हैं। किताब व सुन्नत की बजाए अपने मत के बचाव के अमल के दौरान हदीसों के चयन में न केवल मुहद्दिसीन के प्रमाणिक उसूलों की अवहेलना की जाती है बल्कि नफ़्स अम्मारा (तामसमन) की सन्तुष्टि के लिए हदीसों की ग़लत व्याख्या करने और उन्हें ज़ईफ़ क़रार देने की भी हर संभव कोशिश की जाती है।

अतएव जब पाठक सुन्नते नबवी को सहीह किताबों के होते हुए सतही क़िस्म की किताबों में तलाश करता है तो वह नमाज़े नबवी के तरीक़े से दूर

होता चला जाता है। इसलिए ज़रूरी था कि नमाज़ को सुन्नत के मुताबिक़ अदा करने का सही तरीक़ा हदीसे नबवी की प्रमाणिक किताबों से सीधे मुरत्तब किया जाए, अलहम्दुलिल्लाह अल्लाह तआला ने हिन्दुस्तान में पहली बार अल किताब इन्टर नेशनल दिल्ली को ऐसी ही किताब "नमाज़े नबवी सल्ल०" के नाम से प्रकाशित करने का सौभाग्य प्रदान किया जो आपके हाथों में है।

"नमाज़े नबवी" डॉक्टर सय्यद शफ़ीक़ुर्रहमान साहब ने तर्तीब दी है जो सम्पूर्ण, सरल और आसान होने के साथ साथ सैकड़ों अहादीसे रसूल व निशानात से सजी है। नमाज़ के बारे में तमाम बातों को समेटे हुए निःसन्देह यह किताब अपने विषय पर एक अच्छी दस्तावेज़ है। इस किताब की प्रमुख ख़ूबी यह है कि इसमें केवल और केवल सही हदीसों को जमा करते हुए ज़ईफ़ अहादीस से बचा गया है। अहादीस की जांच व छटनी प्रख्यात आलिमे दीन हाफ़िज़ ज़ुबैर अली ज़ई साहब ने की है। और किताब पर प्रत्यालोचन का कार्य प्रसिद्ध उलमा किराम ने बड़े परिश्रम और गहरी नज़र से किया है और ज़रूरत पड़ने पर नोट भी लिखे हैं। इन महान उलमा में मौलाना अब्दुर्रशीद साहब नाज़िम इदारा उलूम इस्लामिया झंग, मौलाना अल्लाह यार मुदर्रिस दारुल हदीस मुहम्मदिया जलालपुर पीर वाला, इसी मदरसा के फ़ाज़िल मौलाना अब्दुल जब्बार और मौलाना हाफ़िज़ सलाहुद्दीन यूसुफ़ शामिल हैं।

इसके अलावा नमाज़ से संबंधित सभी विवादित मसाइल में अत्यन्त सावधानी और संजीदगी से क़लम उठाया गया है। इंशाअल्लाह आप महसूस करेंगे कि जहां नमाज़ बेहयाई और बुरे कामों से रोकती है वहीं नमाज़ी का अक़ीदा भी संवारती है।

अल्लाह तआला से दुआ है कि मुसलमानों को इस किताब के ज़रिए नमाज़े नबवी सल्ल० अदा करने की तौफ़ीक़ बख़्शे।

—प्रकाशक

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

इब्तदाइया

सारी की सारी प्रशंसा और स्तुति उस अल्लाह के लिए है जिसने अपने बन्दों पर नमाज़ फ़र्ज़ की, उसे क़ायम करने और अच्छे तरीक़े से अदा करने का हुक्म दिया, इसकी स्वीकार्यता को विनय व विनम्रता पर निर्भर किया, इसे ईमान और कुफ़्र के बीच अन्तर की अलामत और बेहयाई और बुरे कामों से रोकने का साधन बनाया।

अल्लाह की प्रशंसा व स्तुति के बाद रसूलुल्लाह सल्ल० पर, दुरूद व सलाम हो, जिन्हें अल्लाह तआला ने सम्बोध करते हुए फ़रमाया :

﴿وَأَنزَلْنَا إِلَيْكَ الذِّكْرَ لِتُبَيِّنَ لِلنَّاسِ مَا نُزِّلَ إِلَيْهِمْ﴾ (النحل ١٦/ ٤٤)

"और हमने आप पर यह ज़िक्र (क़ुरआन) उतारा है ताकि जो (इरशादात) लोगों के लिए उतारे गए हैं आप उनका स्पष्टीकरण व व्याख्या कर दें।" (सूरह नहल : 44)

अतएव आप अल्लाह के हुक्म के पालन में तैयार हो गए। और जो शरीअत आप पर नाज़िल हुई आपने उसे सामान्यता पूरे स्पष्टीकरण के साथ लोगों के सामने पेश कर दिया फिर भी नमाज़ के महत्व को देखते हुए उसे और ज़्यादा स्पष्ट रूप में पेश किया और अपनी करनी व कथनी से उसका आम प्रचार किया यहां तक कि एक बार नबी सल्ल० ने मिंबर पर नमाज़ की इमामत फ़रमाई। क़याम और रुकूअ मिंबर पर किया, (नीचे उतर कर सज्दा किया फिर मिंबर पर चढ़ गए) और नमाज़ से फ़ारिग़ होकर फ़रमाया :

«إِنَّمَا صَنَعْتُ هٰذَا لِتَأْتَمُّوا بِي وَلِتَعَلَّمُوا صَلَاتِي»

"मैंने यह काम इसलिए किया है ताकि तुम नमाज़ अदा करने में मेरी पैरवी कर सको और मेरी नमाज़ की कैफ़ियत मालूम कर सको।"[1]

और इससे भी ज़्यादा ज़ोरदार शब्दों में अपनी पैरवी को निश्चित ठहराते

1. सही बुख़ारी, हदीस 917 व सही मुस्लिम, हदीस 544।

हुए फ़रमाया :

«صَلُّوا كَمَا رَأَيْتُمُونِي أُصَلِّي»

"तुम इस तरह नमाज़ पढ़ो जिस तरह मुझे नमाज़ अदा करते हुए देखते हो।"[1]

और फ़रमाया :

"अल्लाह ने पांच नमाज़ें फ़र्ज़ की हैं जो व्यक्ति अच्छी तरह वुज़ू करे, समय पर नमाज़ अदा करे और रुकूअ सुजूद और विनय का आयोजन करे तो उस इंसान का अल्लाह पर ज़िम्मा है कि उसे माफ़ कर दे और जो व्यक्ति इन बातों का ध्यान न रखे उसका अल्लाह पर कोई ज़िम्मा नहीं है, चाहे तो उसे माफ़ करे और चाहे तो उसे अज़ाब दे।"[2]

नबी अकरम सल्ल० पर सलात व सलाम के बाद अहले बैत और सहाबा किराम रज़ि० पर भी सलात व सलाम हो, जो नेकोकार और परहेज़गार थे। जिन्होंने नबी अकरम सल्ल० की इबादत, नमाज़, करनी और कथनी को नक़ल करके उम्मत तक पहुंचाया और केवल आपके कथनों व कर्मों को ही दीन और अनुसरण योग्य क़रार दिया। और उन नेक इंसानों पर सलात व सलाम हो जो उनके पद चिन्हों पर चलते रहे और चलते रहेंगे।

इस्लाम में नमाज़ का बड़ा दर्जा है और जो व्यक्ति इसको क़ायम करता है और उसकी अदाएगी में कौताही नहीं करता वह अज्र व सवाब और श्रेष्ठता व इकराम का हक़दार होता है फिर अज्र व सवाब में कमी बेशी का पैमाना यह है कि जितना किसी इंसान की नमाज़ रसूले अकरम सल्ल० की नमाज़ के ज़्यादा क़रीब होगी वह उतना ही अज्र व सवाब का ज़्यादा हक़दार होगा और जितनी उसकी नमाज़ नबी सल्ल० की नमाज़ से अलग होगी उतना ही कम अज्र व सवाब हासिल करेगा। रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

"निःसन्देह बन्दा नमाज़ अदा करता है लेकिन उसके कर्म पत्र में उस (नमाज़) का दसवां, नवां, आठवां, सातवां, छठा, पांचवां, चौथा, तीसरा या

---

1. सही बुख़ारी, अध्याय अज़ान, हदीस 631।

2. सुनन अबी दाऊद, सलात, अध्याय फ़िल मुहाफ़िज़, हदीस 425, 1420। इसे इमाम इब्ने हिबान ने सहीह कहा।

आधा हिस्सा लिखा जाता है।''[1]

शैख़ नासिरुद्दीन अलबानी फ़रमाते हैं :

''लेकिन हमारे लिए रसूले अकरम सल्ल० की तरह नमाज़ अदा करना उस समय संभव है जब हमें विस्तार के साथ आपकी नमाज़ की कैफ़ियत मालूम हो और हमें नमाज़ के वाजिबात, शिष्टाचार, तौर तरीक़े और दुआओं व ज़िक्र का पता हो। फिर उसके अनुसार नमाज़ अदा करने की कोशिश भी करें तो हम उम्मीद रखते हैं कि फिर हमारी नमाज़ भी इसी तरह की होगी जो अश्लीलता और बुरी बातों से रोकती है और हमारे कर्म पत्र में वह अज्र व सवाब लिखा जाएगा जिसका वायदा किया गया है।''

(सिफ़्त सलातुन्नबी सल्ल०)

यहां यह ज़िक्र करना भी अत्यन्त ज़रूरी है कि तौहीद (ऐकेश्वरवाद) तमाम सद कर्मों की असल है। अगर तौहीद नहीं तो तमाम कर्म बेकार, व्यर्थ और बे फ़ायदा हैं। तौहीद नहीं तो ईमान नहीं। तौहीद और शिर्क एक दूसरे की विलोम हैं। जिस तरह तौहीद के बिना निजात मुमकिन नहीं इसी तरह शिर्क की मौजूदगी में निजात असंभव है। अल्लाह तआला फ़रमाता है :

﴿ إِنَّ اللَّهَ لَا يَغْفِرُ أَن يُشْرَكَ بِهِ وَيَغْفِرُ مَا دُونَ ذَٰلِكَ لِمَن يَشَاءُ ۚ وَمَن يُشْرِكْ بِاللَّهِ فَقَدِ افْتَرَىٰ إِثْمًا عَظِيمًا ﴾ (النسآء٤/٤٨)

''निःसन्देह अल्लाह शिर्क को नहीं माफ़ करेगा और उसके अलावा जिस गुनाह को जिसके लिए चाहेगा माफ़ कर देगा। और जो व्यक्ति अल्लाह के साथ शिर्क करता है वह बहुत बड़ा गुनाह करता है।'' (सूरह निसा : 48)

और फ़रमाया :

﴿ الَّذِينَ آمَنُوا وَلَمْ يَلْبِسُوا إِيمَانَهُم بِظُلْمٍ أُولَٰئِكَ لَهُمُ الْأَمْنُ وَهُم مُّهْتَدُونَ ﴾

(الأنعام٦/٨٢)

''जो लोग ईमान लाए और उन्होंने अपने ईमान को ज़ुल्म (अर्थात शिर्क) से लतपत नहीं किया तो ऐसे ही लोगों के लिए सलामती है और यही लोग

1. सुनन अबी दाऊद, सलात, अध्याय माजा फ़ी नुक़्सानुस्सलात, हदीस 794, इमाम इब्ने हिबान से इसे सहीह कहा है।

मार्गदर्शक प्राप्त हैं।" (सूरह अनआम : 82)

रसूलुल्लाह सल्ल० के फ़रमान के अनुसार (इस आयत में) ज़ुल्म से मुराद शिर्क है।[1]

इससे साबित हुआ कि कुछ लोग ईमान लाने के बाद भी शिर्क करते हैं जैसा कि दूसरी जगह फ़रमाया :

﴿ وَمَا يُؤْمِنُ أَكْثَرُهُم بِاللَّهِ إِلَّا وَهُم مُّشْرِكُونَ ﴾ (يوسف١٢/١٠٦)

"और बहुत से लोग अल्लाह पर ईमान लाने के बावजूद मुश्रिक होते हैं।" (सूरह यूसुफ़ : 106)

अतः नमाज़ की स्वीकार्यता के लिए पहली शर्त यह है कि अल्लाह तआला को उसकी ज़ात व सिफ़ात में एक माना जाए और माना जाए कि अल्लाह की न पत्नी है और न ही औलाद। कोई अल्लाह के नूर का टुकड़ा (नूरुम मिन नूरुल्लाह) नहीं। अल्लाह का किसी इंसान में उतर आने का अक़ीदा, हलूल, वहदतुल वजूद और वहदतश शहूद खुला शिर्क है। यह भी माना जाए कि कायनात के तमाम मामले केवल अल्लाह तआला के क़ब्ज़े व बस में हैं। इज़्ज़त व ज़िल्लत उसी के पास है। हर नेक व बद का वही मुश्किलकुशा और हाजतरवा है।[2] लाभ व हानि का मालिक भी वहीं है और अल्लाह के मुक़ाबले में किसी को ज़रा सा भी इख़्तियार नहीं। हर चीज़ पर उसी की हुकूमत है और काइ अल्लाह के मुक़ाबले में किसी को पनाह नहीं दे सकता। केवल अल्लाह तआला ही हमेशा से है और हमेशा रहेगा। उसके अलावा हर चीज़ को फ़ना (ख़ात्मा) है। यह भी केवल अल्लाह तआला का हक़ है कि वह लोगों की व्यक्तिगत और सामूहिक ज़िंदगी गुज़ारने का तरीक़ा अर्थात दीन नाज़िल करे क्योंकि हलाल व हराम का निर्धारण करना और क़ानून बनाना उसी का हक़ है बल्कि वास्तविक आज्ञापालन केवल अल्लाह ही के

---

1. सहीह बुख़ारी, तफ़सीर सूरह अनआम, हदीस 4629, ईमान अध्याय ज़ुल्म दून ज़ुल्म, हदीस 32।

2. अर्थात हाजतरवाई और मुश्किलकुशाई में उसका अपना एक अंदाज़ और तरीक़ा है जिसमें वह कभी किसी को शरीक नहीं करता। (अब्दुस्सलाम कीलानी)

लिए है। चूंकि अल्लाह तआला ने यह दीन, मुहम्मद सल्ल० के ज़रिए हमारे पास भेजा, अतः आज अल्लाह तआला का आज्ञापालन का एक मात्र साधन वह आदेश हैं जो मुहम्मद सल्ल० ने सहाबा किराम रज़ि० और उनके ज़रिए पूरी उम्मत तक पहुंचाए। और हदीस के इमामों (रहिमल्लाह) ने उन्हें हदीस की किताबों में जमा कर दिया।

किताब व सुन्नत की बजाए किसी मुरशिद, पीर या इमाम के नाम पर गिरोहबन्दी की इस्लाम में कोई इजाज़त नहीं है और किसी पार्लियामेंट को भी यह हक़ नहीं कि वह मुसलमानों की ज़िंदगी और मौत के तमाम मामलों पर आधारित दंड ताज़ीराती, वित्तीय, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और अन्तर्राष्ट्रीय क़ानून बनाए जो अल्लाह के नाज़िल करदा आदेश के अनुसार न हों। नमाज़ की अदाएगी से पहले इन अक़ाइद पर ईमान लाना ज़रूरी है।[1]

अल्लाह का शुक्र है इस किताब के क्रम में कोशिश की गई है कि सही हदीस से मदद ली जाए। इस सिलसिले में "अलक़ौलुल मक़बूल फ़ी तख़्रीज सलातुर्रसूल सल्ल०"[2] से भी लाभ उठाया गया है।

अल्लाह तआला से दुआ है कि वह इस किताब को स्वीकार करे और और जिन दोस्तों ने इस किताब की तैयारी में सहयोग दिया है उन तमाम साथियों की परलोक की निजात का ज़रिया बनाए। विशेषकर मौलाना अब्दुर्रशीद साहब (नाज़िम इदारा उलूम इस्लामिया, समनाबाद, झंग) को अल्लाह तआला भलाई दे जिन्होंने अपने क़ीमती समयों में से समय निकाल कर पूरी किताब का अध्ययन किया और कुछ स्थानों पर इस्लाह की। मैं

---

1. क्योंकि अल्लाह की बारगाह में किसी अमल की स्वीकार्यता क्रमवार तीन चीज़ों पर निर्भर है 1. अक़ीदे की दुरुस्ती, 2. अमल की दुरुस्ती और 3. नीयत की दुरुस्ती। इनमें से किसी एक में ख़लल होने से सारा अमल मर्दूद हो जाता है। और याद रहे कि किताबुल्लाह, सुन्नते रसूल, सहाबा किराम रज़ि० का व्यवहार और उम्मत का तरीक़ा ही वह कसौटी है जिस पर किसी अक़ीदे या अमल की सेहत को परखा जा सकता है।

2. यह किताब मौलाना अब्दुर्रऊफ़ सिन्धू हफ़िज़ल्लाहु (फ़ाज़िल मदीना यूनिवर्सिटी) की लिखी हुई है और हकीम मुहम्मद सादिक़ सियालकोटी रह० की किताब "सलातुर्रसूल सल्ल०" में उल्लिखित अहादीस व आसार की तहक़ीक़ व तख़्रीज पर आधारित है।

प्रख्यात आलिमे दीन और शोधकर्त्ता मौलाना हाफ़िज़ ज़ुबैर अली ज़ई साहब का भी दिल से आभारी हूं जिन्होंने बड़ी मेहनत और समय रहते इस किताब को बेहतर बनाने की कोशिश फ़रमाई। अल्लाह तआला उनकी इस कोशिश को स्वीकार करे। आमीन!

सय्यद शफ़ीक़ुर्रहमान
अब्दुल हकीम (ख़ानीवाल)

بسم الله الرحمن الرحيم

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

प्रस्तावना

प्रिय पाठको!

नमाज़, दीन का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्तंभ है। इसकी फ़र्ज़ियत क़ुरआन मजीद और हदीसों से साबित है। तमाम मुसलमानों की नमाज़ के फ़र्ज़ होने पर सहमति है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने जब हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ि० को यमन भेजा तो फ़रमाया :

«فَأَعْلِمْهُمْ أَنَّ اللهَ افْتَرَضَ عَلَيْهِمْ خَمْسَ صَلَوَاتٍ فِي كُلِّ يَوْمٍ وَلَيْلَةٍ»

"फिर उन्हें बताओ कि अल्लाह तआला ने उन पर दिन रात में पांच नमाज़ें फ़र्ज़ की हैं।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने सहाबा किराम रज़ि० को नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा सिखाया और उन्हें हुक्म दिया :

«صَلُّوا كَمَا رَأَيْتُمُونِي أُصَلِّي»

"तुम इस तरह नमाज़ पढ़ो जिस तरह मुझे नमाज़ अदा करते हुए देखते हो।"[2]

नमाज़ के इसी महत्व को देखते हुए बहुत से इमामों ने नमाज़ के विषय पर अनेक किताबें लिखी हैं। जैसे अबू नईमुल फ़ज़ल बिन दकीन रह० (मृत्यु 218 हि०) और इमाम अहमद बिन मुहम्मद बिन हंबल रह० (मृत्यु 241 हि०) की "किताबुस्सलात" आदि। इसके अलावा वर्तमान दौर में भी उर्दू और क्षेत्रीय ज़बानों में अनेक किताबें प्रकाशित हुई हैं। लेकिन उनमें से अधिकांश

---

1. सहीह बुख़ारी किताबुज़ ज़कात, अध्याय 1, वजूबुज़ ज़कात, हदीस 1395।
2. सहीह बुख़ारी, किताबुल अज़ान, अध्याय 18, हदीस 631।

किताबें झूठी हदीसों, ज़ईफ़ व मर्दूद रिवायतों, परस्पर विरोधी और ज्ञानात्मक भ्रमों पर आधारित हैं। मसलन :

1. "अद् दलाइलुस्सुन्नह फ़ी इसबातुस्सलात सुन्नह" लेखक : मुहम्मद अमानुल्लाह अबूबक्र मुहम्मद करीमुल्लाह।

2. "रसूले अकरम सल्ल० का तरीक़ए नमाज़" लेखक : मुफ़्ती जमील अहमद नज़ीरी।

3. "पैग़म्बरे ख़ुदा सल्ल० मोनेह (पुश्तू)" लेखक : अबू यूसुफ़ मुहम्मद वली दुर्वेश।

4. "नमाज़ मुदल्लिल" लेखक : फ़ेज़ अहमद ककरवी मुल्तानी।

5. "नमाज़े पैग़म्बर" लेखक : मुहम्मद इलियास फ़ैसल।

6. "नमाज़ मसनून कलां" लेखक : सूफ़ी अब्दुल हमीद सवाती।

7. "नबवी नमाज़ मुदल्लिल" पहला हिस्सा (सिंधी) लेखक : अली मुहम्मद हक़्क़ानी, वग़ैरह।

मानो इस प्रस्तावना में लम्बी बहस नहीं की जा सकती। फिर भी नमूना के तौर पर उपर्युक्त उल्लिखित कमियों की कुछ मिसालें प्रस्तुत हैं :

1. अकाज़ीब :

1. "अद दलाइलुस्सुन्नह" में है :

«عَنِ ابْنِ عَبَّاسٍ رَضِيَ اللهُ عَنْهُمَا عَنِ النَّبِيِّ ﷺ أَنَّهُ قَالَ: اِعْتَمُّوا تَزْدَادُوْا حِلْمًا» (رواه ابوداود والبيهقي والبزار والطبراني، الدلائل السنية بلفظه، النسخة العربية ص٦٤،٦٥)

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "अमामा बांधा करो (इससे) हिल्म बढ़ेगा।" (अबू दाऊद, बैहेक़ी तबरानी, उर्दू नुस्ख़ा : 45)

यद्यपि इस रिवायत का सुनन अबी दाऊद में कोई वजूद नहीं है। बल्कि सिहाह सित्ता की किसी किताब में भी, यह रिवायत नहीं है। ग़ैर सिहाह सित्ता में यह सख़्त ज़ईफ़ सनदों से मरवी है।

2. इसी तरह साहिबे किताब ने एक और मौज़ूअ रिवायत को तिर्मिज़ी और अबू दाऊद से मंसूब करके इसकी तहसीन इमाम तिर्मिज़ी से और तस्हीह

इमाम इब्ने हज़म से नक़ल की है। (अद दलाइलुस सुन्नियह अरबी पृ० : 131-132, उर्दू पृ० : 74) यद्यपि यह रिवायत भी तिर्मिज़ी व अबू दाऊद में मौजूद नहीं है और इसे इमाम तिर्मिज़ी ने हसन कहा है न इब्ने हज़म ने सहीह अलबत्ता यह रिवायत इमाम इब्ने जोज़ी की किताब "अल मौज़ूआत" (अर्थात छोटी हदीसों का संग्रह) में ज़रूर पाई जाती है। (भाग 2, पृ० 96)

3. सहीह बुख़ारी (भाग 1, पृ० 269) किताबुस्सोम, किताबुस्सलात तरवीह, में उम्मुल मोमिनीन हज़रत आइशा रज़ि० की एक हदीस है कि नबी सल्ल० रमज़ान और ग़ैर रमज़ान में (रात को) ग्यारह रकअतें पढ़ते थे, पहले चार पढ़ते, फिर चार पढ़ते, फिर तीन पढ़ते।

इस हदीस पर टिप्पणी करते हुए मुफ़्ती जमील अहमद नज़ीरी साहब फ़रमाते हैं :

"इस हदीस में एक सलाम से चार चार रकअतें पढ़ने का ज़िक्र है जबकि तरावीह एक सलाम से दो दो रकअतें पढ़ी जाती हैं।" (रसूले अकरम सल्ल० का तरीक़ा नमाज़, पृ० 296)

यद्यपि सहीह बुख़ारी की इस हदीस में "एक सलाम से" के शब्द कदापि नहीं हैं। बल्कि सहीह मुस्लिम (भाग 1, पृ० 254) में हज़रत आइशा रज़ि० की यही रिवायत निम्न शब्दों के साथ मरवी है :

«يُسَلِّمُ بَيْنَ كُلِّ رَكْعَتَيْنِ وَيُوتِرُ بِوَاحِدَةٍ»

"आप हर दो रकअतों पर सलाम फैरते और एक वित्र पढ़ते थे।"

4. शरह मआनी आसार (भाग 1, पृ० 129, एक नुस्ख़ा के मुताबिक़ पृ० 151, एक और नुस्ख़ा के मुताबिक़ पृ० 219) और नस्बुर्राय भाग 2, पृ० 12 में इब्ने उमर, ज़ैद बिन साबित और जाबिर रज़ि० से एक हदीस मरवी है जबकि जनाब फ़ैज़ अहमद ककरवी साहब इसे हज़रत उमर रज़ि० से मंसूब करते हैं। (नमाज़ मुदल्लिल, पृ० 91)

2. मौज़ूअ हदीसें :

1. सुनन तिर्मिज़ी (भाग 1, पृ० 108-109) और इब्ने माजा (किताब इक़ामतुस्सलात, अध्याय माजा फ़ी सलातुल हाजा, हदीस 1384) में फ़ायद बिन अब्दुर्रहमान अबुल वरक़ा अन अब्दुल्लाह बिन उबई ऊफ़ा की सनद से

सलातुल हाजात वाली हदीस मरवी है। जिसे अबुल क़ासिम रफ़ीक़ दिलावरी ने "इमादुद्दीन" (पृ० 439-440 बहवाला तिर्मिज़ी वक़ालाः हदीस ग़रीब) में और प्रोफ़ैसर मुहम्मद इक़बाल कीलानी ने किताबुस्सलात (पृ० 172 बहवाला तिर्मिज़ी व इब्ने माजा) में नक़ल किया है। यद्यपि फ़ायद मज़्कूर के बारे में इमाम अबू हातिम राज़ी रह० (मृत्यु 277 हि०) फ़रमाते हैं :

«وَأَحَادِيثُهُ عَنِ ابْنِ أَبِي أَوْفَى بَوَاطِيلُ»

"और उसकी इब्ने उबई ऊफ़ा रज़ि० से रिवायत की गई हदीसें बातिल हैं। (अर्थात फ़ायद मज़्कूर की गढ़ी हुई हैं।)" (तहज़ीबुत्तहज़ीब, भाग 8, पृ० 229-230)

इमाम हाकिम नीशापुरी फ़रमाते हैं :

«رَوَى عَنِ ابْنِ أَبِي أَوْفَى أَحَادِيثَ مَوْضُوعَةً»

"उसने इब्ने उबई ऊफ़ा रज़ि० (के हवाले) से मौज़ूअ रिवायात बयान की हैं।"

जनाब मुहम्मद ज़करिया साहब के "तब्लीग़ी निसाब" में भी फ़ायद मज़्कूर को "अप्रचलित" लिखा गया है। (पृ० 599, फ़ज़ाइले ज़िक्र, पृ० 121, हदीस 35)

मुहद्दिस इब्ने जोज़ी ने फ़ायद की यह रिवायत अपनी किताब "मौज़ूआत" (भाग 2, पृ० 140) में ज़िक्र की है।

2. हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० से मंसूब एक मौज़ूअ रिवायत का उल्लेख पृ० 2 पर गुज़र चुका है। अनेक लेखकों ने यह रिवायत विवेचन के तौर पर उल्लेख की है जैसे अबू यूसुफ़ दुर्वेशी ने "दी पैग़म्बर ख़ुदा सल्ल० मौनिह" (पुश्तो, पृ० 293) में फ़ैज़ अहमद ककरवी ने "नमाज़ मुदल्लिल" (पृ० 131) में और सूफ़ी अब्दुल हमीद सवाती ने "नमाज़ मसनून कलां" (पृ० 347) में।

जनाब दुर्वेश साहब ने इस रिवायत के मर्क़ज़ी रावी मुहम्मद बिन जाबिर का बचाव करने की कोशिश की है और स्वयं अपनी इसी किताब में पृ० 52 पर लिखा है :

"په هغه حديث کښې محمد بن جابر راوی دے او دا ته دوئ
ټول ضعيف وائي ـ"

"इस हदीस में रावी मुहम्मद बिन जाबिर है और इसे यह सब ज़ईफ़ कहते हैं।"

3. मसऊद अहमद बी. एस. सी. ने अपनी किताब "सलातुल मुस्लिमीन" के बारे में कहा है : "इस किताब में कोई ज़ईफ़ हदीस नहीं ली गई।"

यद्यपि इसी किताब पृ० 305 से पृ० 307 पर लेखक अब्दुर्रज़्ज़ाक़ (भाग 3, पृ० 116) से (मअमर अम्र अन हसन की सनद) से एक असर नक़ल करके लिखा है : "सनद सहीह" अर्थात इसकी सनद सहीह है।

अम्र से मुराद, इब्ने उबैद है देखिए लेखक अब्दुर्रज़्ज़ाक़, भाग 11, पृ० 83 हदीस 19985, और तहज़ीबुल कमाल आदि में यह व्याख्या है कि इमाम हसन बसरी रह० का शागिर्द, अम्र बिन उबैद मोअतज़िली था। इस व्यक्ति के बारे में इमाम यूसुफ़ रह० आदि ने कहा "यकज़िब" अर्थात झूठ बोलता है। इमाम हमीद रह० ने कहा "वह हसन बसरी पर झूठ बोलता है।" बल्कि इमाम याह्या बिन मुईन रह० ने गवाही दी :

«كَانَ عَمْرُو بْنُ عُبَيْدٍ رَجُلَ سُوْءٍ مِنَ الدَّهْرِيَّةِ»

"अम्र बिन उबैद गन्दा आदमी था (और) धरियों में से था।"

ऐसे धरिए झूठे की रिवायत को "सनदन सहीह" कहना बहुत बड़ी जुर्रत और हौसले की बात है इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

4. मुस्तदरक हाकिम, (भाग 2, पृ० 562-563) में सहीह मुस्लिम के एक रावी (इस्माईल बिन अब्दुर्रहमान बिन उबई करीमा) असदी रह० की एक रिवायत है जिसे इमाम हाकिम रह० और हाफ़िज़ ज़ोहबी दोनों सहीह मुस्लिम की शर्त पर सहीह क़रार देते हैं।

मुस्तदरक के इसी भाग में (पृ० 258, 260 आदि) असदी के साथ इस्माईल बिन अब्दुर्रहमान (अर्थात इस नाम) की व्याख्या है। मसऊद साहब इस सनद के बारे में लिखते हैं :

"सनद में असदी कज़्ज़ाब है" (तारीख़ुल इस्लाम वल मुस्लिमीन। भाग 1, पृ० 95, हाशिया : 8 से 2) यद्यपि इस्माईल बिन अब्दुर्रहमान असदी सहीह

मुस्लिम का रावी और "हसनुल हदीस" है (अलकाशिफ़ लिल ज़हबी भाग 1 पृ० 75) इस पर इमाम अबू हातिम रह० आदि की मामूली बहस मर्दूद है। इसे किसी मुहद्दिस ने झूठा नहीं कहा जोज़ जानी ने मुहम्मद बिन मरवान असदी को "कज़्ज़ाब शतमम" लिखा है। जो ग़लती से इस्माईल मज़्कूर से मंसूब हो गया है। इब्ने अदी रह० (जो विभिन्न रावियों की बाबत जोज़जानी के कथन ही नक़ल करते हैं) ने इस्माईल मज़्कूर के अनुवाद में जोज़जानी का यह कथन उल्लेख नहीं किया। यह है मसऊद साहब का महान ज्ञान कि वह मौज़ूअ को सहीह और सहीह को मौज़ूअ बताते हैं।

3. ज़ईफ़ रिवायतें :

इस किताब में असंख्य ऐसी रिवायतें मौजूद हैं जिनके ज़ईफ़ व मर्दूद होने पर सहमति है जैसे यज़ीद बिन उबई ज़ियाद की रफ़अ यदैन छोड़ने वाली रिवायत। देखिए "नबवी नमाज़" (सिन्धी) पृ० 355 "दि पैग़म्बर ख़ुदा सल्ल० मोनेह" पृ० 294 "नमाज़ मुदल्लिल पृ० 130-131 वग़ैरह।

इनके अलावा निम्न किताबों में भी ज़ईफ़ रिवायात मौजूद हैं। "सिफ़त सलातुन्नबी सल्ल०" पृ० 135, (देखिए अल क़ौलुल मक़बूल फ़ी तख़रीज सलातुर्रसुल" पृ० 440 हदीस 382) "सलातुन्नबी सल्ल०" अज़ ख़ालिद गरजाखी पृ० 342-343, "सलातुर्रसुल सल्ल०" पृ० 214 (देखिए अल क़ौलुल मक़बूल" हदीस 310) वग़ैरह।

4. तनाक़ुज़ात :

जनाब अली मुहम्मद हक़्क़ानी साहब अपनी एक पसन्दीदा रिवायत के बारे में लिखते हैं :

" يزيد بن ابي زياد ڪوفيءَ تي توڙي جو بعض محدثين ڪلام ڪيو آهي مگر اهو ثقه آهي. "

"अर्थात यज़ीद बिन उबई ज़ियाद कूफ़ी पर कुछ मुहद्दिसीन ने बहस की है मगर वह सिक़ा (पुख़्ता) हैं।" (नबवी नमाज़ मुदल्लिल सनतदी पागोफिरयों, पृ० 355)

और जब यही यज़ीद बिन उबई ज़ियाद "मुख़ालिफ़ीन" की हदीस (मसह अलल जोरबीन) में आ जाता है तो "हक़्क़ानी" साहब फ़रमाते हैं :

"زیلعی فرمائیند وآهی ته هن جی سند ۾ یزید بن ابی زیاد
اهی ۽ اهو ضعیف آهی۔"

"अर्थात ज़ेलअी फ़रमाते हैं कि इसकी सनद में यज़ीद बिन उबई ज़ियाद है और वह ज़ईफ़ है। (नबवी नमाज़ पृ० 165) क्या इंसाफ़ इसी का नाम है।

मुहद्दिस शाम शैख़ नासिरुद्दीन अलबानी से एक अजीब भूल हुई है, उन्होंने "सिफ़त सलातुन्नबी सल्ल०" (पृ० 80) में एक ज़ईफ़ और ग़ैर सरीह रिवायत की बुनियाद पर जहरी नमाज़ों में क़िरअत (फ़ातिहा) को निरस्त क़रार दिया है यद्यपि उनकी सतर्क रिवायत के रावी जनाब अबू हुरैरह रज़ि० से जहरी व सिर्री दोनों नमाज़ों में मुक़तदी का सूरह फ़ातिहा पढ़ना साबित है। देखिए सहीह उबई अवाना और सहीह मुस्लिम वग़ैरह।

मतलब यह है कि नमाज़ के विषय पर उर्दू और अन्य ज़बानों की अधिकांश किताबों पर अंधा धुंध भरोसा सही नहीं है बल्कि ऐसी अनेक किताबों ने लोगों को भ्रम में डाल दिया है।

जनाब ख़्वाजा मुहम्मद क़ासिम रह० की किताब "क़द क़ामतिस्सलाह" विवादित मसाइल पर भरोसा करने की अच्छी कोशिश है। इस किताब में ख़्वाजा साहब ने आपत्ति करने वालों के सन्तोषजनक जवाबात दिए हैं, मगर इस किताब में भी ज़ईफ़ व मर्दूद रिवायात आ गई हैं। जैसे पृ० 421 पर "या अनस अजअल बसरक हयसा तसजुद" वाली रिवायत बहवाला बेहैक़ी भाग 2, पृ० 284, यद्यपि इसका एक रावी अलीला बिन बद्र है जोकि अप्रचलित है। (तक़रीबुत्तहज़ीब पृ० 319 अनुवाद रबीअ बिन बद्र) यद्यपि अप्रचलित की रिवायत शवाहिद और मुताबआत में भी बयान करना सहीह नहीं है। (इख़्तिसार उलूमुल हदीस इब्ने कसीर पृ० 38 तारीफ़ात अख़री लिल हसन, नोअ 2) जनाब अब्दुर्रऊफ़ साहब की किताब "अल क़ौलुल मक़बूल फ़ी तख़रीज सलातुर्रसुल" इस सिलसिले की बेहतरीन किताब है। जज़ाउल्लाहु ख़ैरा, फिर भी बशरी कमज़ोरियों की वजह से इस तख़रीज में भी अंधविश्वास घटित हो गए हैं। जैसे अबू दाऊद (203) आदि की एक ज़ईफ़ रिवायत को अब्दुर्रऊफ़ साहब ने "हसन दर्जा की हदीस" लिखा है। यद्यपि यह सनद

मुंक़तअ है और इसका कोई गवाह भी सही नहीं है।

जनाब डाक्टर शफ़ीक़ुर्रहमान साहब ने आम व ख़ास के लिए सरल उर्दू में "नमाज़े नबवी" के नाम से किताब मुरत्तब की है। जिसमें उन्होंने कोशिश की है कि कोई ज़ईफ़ हदीस शामिल न होने पाए। मैंने भी जांच के दौरान इस बात की भरपूर कोशिश की है कि इसमें केवल मक़बूल हदीसों को लाया जाए अब मेरी मालूमात के मुताबिक़ इसमें कोई ज़ईफ़ रिवायत नहीं है। लेकिन चूंकि इंसान ग़लती और ख़ता का पुतला है अतः अहले इल्म से विनती है कि अगर किसी हदीस की बहस पर बाख़बर हों तो मुझे सूचित करें ताकि अगले एडीशन में उसकी तलाफ़ी की जा सके।

अबू ताहिर हाफ़िज़ ज़ुबैर, अली ज़ई मुहम्मदी

किताब व सुन्नत के अनुसरण का हुक्म

इरशाद बारी तआला है :

﴿ اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا ﴾

(المائدہ/ ٣)

"(ऐ मुसलमानो!) आज के दिन मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन को पूर्ण कर दिया है, और तुम पर अपनी नेमत को पूरा कर दिया है, और तुम्हारे लिए इस्लाम को (बतौर) दीन पसन्द कर लिया है।" (सूरह माइदा:3)

यह आयत 9 ज़िल हिज्जा 10 हिजरी में मैदाने अरफ़ात में नाज़िल हुई। इसके नाज़िल होने के तीन माह बाद रसूलुल्लाह सल्ल० यह कामिल और सम्पूर्ण दीन उम्मत को सौंप कर रफ़ीक़े आला से जा मिले और उम्मत को वसीयत फ़रमा गए :

«تَرَكْتُ فِيْكُمْ اَمْرَيْنِ لَنْ تَضِلُّوْا مَا تَمَسَّكْتُمْ بِهِمَا كِتَابَ اللهِ وَسُنَّةَ نَبِيِّهِ»

"मैं तुम्हारे अंदर ऐसी दो चीज़ें छोड़े जा रहा हूं कि जब तक तुम इन्हें मज़बूती से पकड़े रहोगे कदापि गुमराह नहीं होगे अर्थात अल्लाह की किताब और उसके नबी सल्ल० की सुन्नत।"[1]

मालूम हुआ कि इस्लाम, किताब व सुन्नत में सीमित है। और यह भी साबित हुआ कि मसला व फ़तवा केवल वही सहीह और अमल योग्य है जो क़ुरआन व हदीस के साथ सतर्क हो।

रसूलुल्लाह सल्ल० फ़रमाते हैं :

"मेरी तमाम उम्मत जन्नत में दाख़िल होगी सिवाए उसके जिसने इंकार किया। किसी ने पूछा (ऐ अल्लाह के रसूल!) इंकार करने वाला कौन है? आपने फ़रमाया, जिसने मेरी आज्ञा का पालन किया वह जन्नत में दाख़िल

---

1. बैहेक़ी, मोत्ता इमाम मालिक : 2/899, हाकिम : 1/93 और इब्ने हज़म ने इसे सहीह कहा है।

हुआ और जिसने मेरी अवज्ञा की तो उसने इंकार किया।"[1]

हज़रत इरबाज़ बिन सारिया रज़ि० रिवायत करते हैं कि "एक दिन रसूलुल्लाह सल्ल० ने हमें नमाज़ पढ़ाई। फिर आप हमारी तरफ़ मुतवज्जह हुए और प्रभावी नसीहत की। जिसे सुनकर हमारी आंखों से आंसू जारी हो गए और दिल दहल गए। एक व्यक्ति ने कहा : ऐ अल्लाह के रसूल! यह उपदेश तो ऐसा है जैसे किसी जुदा होने वाले का होता है। इसलिए हमको ख़ास वसीयत कीजिए। आपने फ़रमाया, मैं तुम्हें वसीयत करता हूं कि अल्लाह से डरते रहना और अपने (अमीर की जाइज़ बात) सुनना और मानना यद्यपि (तुम्हारा अमीर) हब्शी ग़ुलाम ही हो। मेरे बाद जो तुममें से ज़िंदा रहेगा वह सख़्त मतभेद देखेगा। उस समय तुम मेरी सुन्नत और चारों ख़लीफ़ों का तरीक़ा पकड़ना उसे दांतों से मज़बूत पकड़े रहना और (दीन के अंदर) नए नए कामों (और तौर तरीक़ों) से बचना।[2]

इस हदीस से साबित हुआ कि हर बिदअत गुमराही है। कोई बिदअत अच्छी नहीं।

अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० फ़रमाते हैं : "हर बिदअत गुमराही है चाहे लोग उसे नेकी समझें।"[3]

इमाम मालिक रह० ने क्या ख़ूब फ़रमाया : "जिस व्यक्ति ने इस्लाम में नेकी समझ कर कोई नई चीज़ ईजाद की तो उसने सोचा कि मुहम्मद सल्ल० ने तब्लीग़ रिसालत में बेइमानी से काम लिया (नऊज़ुबिल्लाह) रसूलुल्लाह सल्ल० के ज़माने में जो चीज़ दीन न थी वह आज भी दीन नहीं बन सकती।" (अल एतसाम लिलशातिबी 1/49।)

हदीस के मामले में छानबीन और सावधानी :

अल्लाह तआला फ़रमाते हैं :

﴿وَأَنزَلْنَآ إِلَيْكَ ٱلذِّكْرَ لِتُبَيِّنَ لِلنَّاسِ مَا نُزِّلَ إِلَيْهِمْ وَلَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُونَ﴾

(النحل ١٦/ ٤٤)

---

1. सहीह बुख़ारी, हदीस 280।
2. सुनन अबी दाऊद, हदीस 4607 व सुनन तिर्मिज़ी, हदीस 2681।
3. "अल सुन्नत" मुहम्मद बिन नसर मरोज़ी पृ० 82, शरह उसूलु-लिल अलकानी 1/92।

"और हमने आपकी तरफ़ ज़िक्र (क़ुरआन मजीद) नाज़िल किया है ताकि आप लोगों पर उन शिक्षाओं को स्पष्ट करें जो उनकी तरफ़ नाज़िल की गई हैं ताकि वे सोच विचार करें।" (सूरह नह्ल 16 : 44)

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "याद रखो मुझे क़ुरआन मजीद और उसके साथ उस जैसी एक और चीज़ (हदीस) दी गई है।"[1]

और जिस तरह अल्लाह तआला ने अपने आज्ञा पालन को फ़र्ज़ किया है उसी तरह अपने रसूल सल्ल० के आज्ञा पालन को भी अनिवार्य क़रार दिया है। फ़रमाया :

﴿ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَلَا تُبْطِلُوْٓا اَعْمَالَكُمْ ﴾

"ऐ अहले ईमान! अल्लाह का आज्ञा पालन करो और (उसके) रसूल सल्ल० का आज्ञा पालन करो। और (उस आज्ञा पालन से हटकर) अपने कर्मों को बातिल न करो।" (सूरह मुहम्मद 47 : 33)

मालूम हुआ कि क़ुरआन मजीद की तरह हदीस नबवी भी शरई दलील और हुज्जत है मगर हदीस से दलील लेने से पहले इस बात का पता होना ज़रूरी है कि क्या वह हदीस, रसूलुल्लाह सल्ल० से साबित भी है या नहीं?

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "आख़िरी ज़माने में दज्जाल और कज़्ज़ाब होंगे वे तुम्हें ऐसी ऐसी हदीसों सुनाएंगे जिन्हें तुमने और तुम्हारे पूर्वजों ने नहीं सुना होगा अतः उनसे अपने आपको बचाना। कहीं ऐसा न हो कि वे तुम्हें गुमराह कर दें और फ़ितने में डाल दें।"[2]

और फ़रमाया : "जो व्यक्ति मुझ पर जान कर झूठ बोले उसे चाहिए कि वह अपना ठिकाना आग में बना ले।"[3]

इमाम दार क़ुतनी रह० फ़रमाते हैं : "रसूलुल्लाह सल्ल० ने अपनी तरफ़ से (बात) पहुंचा देने का हुक्म देने के बाद अपनी ज़ात पाक पर झूठ बोलने वाले को आग की ख़बर सुनाई अतः इसमें इस बात की दलील है कि आपने अपनी तरफ़ से ज़ईफ़ की बजाए सहीह और बातिल की बजाए हक़ के पहुंचा

---

1. अबू दाऊद, हदीस 4604, इब्ने हिबान, हदीस 97 ने इसे सहीह कहा है।
2. सहीह मुस्लिम, हदीस 7।
3. सहीह बुख़ारी, हदीस 107-108।

देने का हुक्म दिया है न कि हर उस चीज़ के पहुंचा देने का जिसकी निस्बत आपकी तरफ़ कर दी गई।" इसलिए कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "आदमी के झूठ होने के लिए यही काफ़ी है कि वह हर सुनी सुनाई बात बयान कर दे।"[1]

इमाम मुहम्मद बिन इदरीस शाफ़ई रह० फ़रमाते हैं : "इब्ने सीरीन, इब्राहीम नख़ई, ताऊस और अन्य ताबईन रह० का यह मज़हब है कि हदीस केवल सिक़ा से ही ली जाएगी और मुहद्दिसीन में से मैंने किसी को इस मज़हब का विरोधी नहीं पाया।" (अल तमहीद इब्ने अब्दुल बर)

अनेक सहाबा किराम रज़ि० से यह साबित है कि वह हदीस के बयान करने में अत्यन्त सावधानी बरता करते थे।

इब्ने अदी रह० फ़रमाते हैं : "सहाबा रज़ि० की एक जमाअत ने रसूलुल्लाह सल्ल० से हदीस बयान करने से केवल इसलिए बचना चाहा कि कहीं ऐसा न हो कि हदीस में ज़्यादती या कमी हो जाए और वह आपके इस फ़रमान (जो व्यक्ति मुझ पर जानकर झूठ बोलता है उसका ठिकाना आग है) के चरितार्थ क़रार पाएं।"

इमाम मुस्लिम रह० फ़रमाते हैं : "जो व्यक्ति ज़ईफ़ हदीस की कमज़ोरी को जानने के बावजूद उसकी कमी को बयान नहीं करता तो वह अपने इस कार्य की वजह से गुनाहगार और लोगों को धोखा देता है क्योंकि मुमकिन है कि इसकी बयान की हुई अहादीस को सुनने वाला उन सब पर या उनमें से कुछ पर अमल करे और मुमकिन है कि वे सब अहादीस या कुछ अहादीस झूठ हों और उनकी कोई असल न हो जबकि सहीह अहादीस इस क़द्र हैं कि उनके होते हुए ज़ईफ़ अहादीस की ज़रूरत ही नहीं है। फिर बहुत से लोग जानकर ज़ईफ़ और अज्ञात सनद वाली अहादीस बयान करते हैं केवल इसलिए कि लोगों में उनकी शोहरत हो और यह कहा जाए कि "उनके पास बहुत अहादीस हैं और उसने बहुत किताबें लिख कर दी हैं" जो व्यक्ति इल्म के मामले में इस रविश को इख़्तियार करता है उसके लिए इल्म में कुछ हिस्सा नहीं और इसे आलिम कहने की बजाए जाहिल कहना ज़्यादा मुनासिब है।"

(मुक़दमा सहीह मुस्लिम, 1/177-179)

---

1. सहीह मुस्लिम, मुक़दमा, हदीस 5।

इमाम इब्ने तैमिया रह० फ़रमाते हैं : "इमामों में से किसी ने नहीं कहा की ज़ईफ़ हदीस से वाजिब या मुस्तहब अमल साबित हो सकता है। जो व्यक्ति यह कहता है उसने सारे इमामों का विरोध किया (अल तवस्सुल वल वसीला) याह्या बिन मुईन, इब्ने हज़म और अबूबक्र इब्ने अरबी रह० के निकट फ़ज़ाइले आमाल में भी केवल मक़बूल अहादीस ही विवेचन योग्य हैं (क़वाइदुल तहदीस) शैख़ अहमद शाकिर, शैख़ अलबानी और शैख़ मुहम्मद मुहीउद्दीन अब्दुल हमीद और अन्य मुहक़्क़िक़ीन का तरीक़ा भी यही है।[1]

---

1. याद रहे कि ज़ईफ़ हदीस (जिसे मस्लकी तास्सुब की बुनियाद पर नहीं बल्कि उसूल हदीस की रौशनी में ख़ालिस फ़न्नी बुनियादों पर दलील के साथ ज़ईफ़ क़रार दिया जाए) से विवेचन के बारे में मुहद्दिसीन किराम के विभिन्न कथन हैं। जैसे :

1. अगर अमल मज़बूत तर्कों से साबित है और ज़ईफ़ हदीस में केवल उसकी श्रेष्ठता बयान की गई है तो लोगों को उस अमल की प्रेरणा देने के लिए उस ज़ईफ़ हदीस को बयान करना जाइज़ है।

2. किसी मसले के बारे में क़ुरआन मजीद और अहादीस पूरे तौर पर ख़ामोश हों केवल कुछ ज़ईफ़ रिवायात से कुछ रहनुमाई मिलती हो तो इस मसले में किसी इमाम के कथन पर अमल करने की बजाए बेहतर यह है कि इस ज़ईफ़ हदीस पर अमल कर लिया जाए।

मगर दोनों गिरोह इस बात पर सहमत हैं कि केवल वही ज़ईफ़ हदीस बयान की जाएगी जिसकी कमज़ोरी मामूली हो, और उसके ज़ईफ़ होने की व्याख्या की जाएगी।

३. तीसरी राय यह है कि अगर ज़ईफ़ हदीस की पुष्टि में अन्य क़वी तर्क मौजूद हों तो फिर इसे बयान करने में कोई हरज नहीं है।

4. चौथा कथन यह है कि ज़ईफ़ हदीस के बयान का दरवाज़ा न खोला जाए क्योंकि :

अ. किसी अमल की जिस श्रेष्ठता को बयान किया जाएगा सुनने वाला उस श्रेष्ठता की सच्चाई पर ईमान लाएगा। (तभी उस अमल को पूरा करेगा) और यही अक़ीदा है और अक़ाइद में ज़ईफ़ हदीस से सर्वसम्मति नाजाइज़ है।

ब. पहले वालों ने जब फ़ज़ाइले आमाल में ज़ईफ़ हदीस का बयान जाइज़ क़रार दिया था तो उस समय हदीस की केवल दो क़िस्में प्रख्यात थीं, सहीह और ज़ईफ़। मगर जब ज्ञानात्मक शोध में विस्तार पैदा हुआ तो हसन लज़ातह और हसन लग़ीरह के नाम से मक़बूल हदीस की दो मज़ीद क़िस्में की गईं तो पहले वालों ने फ़ज़ाइले आमाल में जिस

शेष अगले पृष्ठ पर

इमाम नववी रह० फ़रमाते हैं : "हदीसों के शोधकर्ता और इमामों रह० का कहना है कि जब हदीस ज़ईफ़ हो तो उसके बारे में यूं नहीं कहना चाहिए कि "रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया" या "आपने किया है" या "आपने करने का हुक्म दिया है" या "मना किया है" और यह इसलिए कि हज़्म के कलिमे रिवायत की सेहत का तक़ाज़ा करते हैं अतः उनका चरितार्थ उसी रिवायत पर किया जाना चाहिए जो साबित हो वरना वह इंसान नबी सल्ल० पर झूठ बोलने वाले की तरह होगा मगर (अफ़सोस कि) इस उसूल को सारे फ़ुक़्हा और अन्य विद्वान ने ध्यान में नहीं रखा। सिवाए हदीसों के शोधकताओं के, और यह बुरी

ज़ईफ़ हदीस का बयान जाइज़ क़रार दिया था बाद वालों ने उसी को हसन लग़ीरा क़रार दिया है जो एक क़िस्म की मक़बूल हदीस है तो जो हदीस "हसन लग़ीरा" से भी कमतर दर्जे की हो उससे विवेचन करना उनके नज़दीक भी सहीह नहीं था।

स. लगभग हर बातिल सम्प्रदाय किताब व सुन्नत के समझने में सहाबा व ताबईन की सूझबूझ व अमल से काफ़ी दूर है क्योंकि इसके बिना वह अपने मनगढ़त प्रमुख मसाइल का बचाव नहीं कर सकता अब अगर ज़ईफ़ अहादीस के बयान का दरवाज़ा खोल दिया गया तो वह यह झूठा दावा करेगा कि फ़लां हदीस यद्यपि ज़ईफ़ है मगर उसकी पुष्टि फ़लां आयत करीमा या मक़बूल हदीस से हो रही है अतः यह हदीस ज़ईफ़ के बावजूद विवेचन योग्य है" यद्यपि बुज़ुर्गों की समझ के मुताबिक़ इस फ़लां आयत या मक़बूल हदीस से उस ज़ईफ़ हदीस की पुष्टि कदापि नहीं होती।

द. और व्यवहार में जो कुछ हो रहा है वह उससे कहीं ज़्यादा ख़तरनाक है स्वार्थी उलमा केवल फ़ज़ाइल ही नहीं बल्कि अक़ाइद व कर्मों को भी मर्दूद बल्कि मौज़ूअ रिवायात से साबित करने की कोशिश करते हैं और लोगों को यह ज़ाहिर करते हैं कि "एक तो ये अहादीस बिल्कुल सहीह हैं अगर कोई हदीस ज़ईफ़ हुई तो भी कोई हरज नहीं क्योंकि फ़ज़ाइले आमाल में ज़ईफ़ हदीस सौभाग्य से ही क़ाबिले क़ुबूल होती है।"

ह. इसमें शक नहीं कि दीने मुहम्मदी का असल मुहाफ़िज़ अल्लाह है अतः यह नहीं हो सकता कि दीने इलाही की कोई बात मरवी न हो या मरवी तो हो मगर उसकी तमाम रिवायात ज़ईफ़ (हसन लग़ीरह से कमतर) हों, और यह भी हो सकता है कि एक चीज़ दीने इलाही न हो मगर मक़बूल हदीस के ज़ख़ीरे में मौजूद हो दूसरे शब्दों में जो असल दीन है वह मक़बूल रिवायात में मौजूद है और जो दीन नहीं है उस रिवायात पर प्रभावी बहस मौजूद है इन तथ्यों के सामने बेहतर यही है कि ज़ईफ़ हदीस से विवेचन का दरवाज़ा बन्द ही रहने दिया जाए वल्लाहु आलम। और देखें "रियाज़ुस्सालिहीन" (उर्दू) प्रकाशित "दारुस्सलाम" फ़वाइद हदीस नम्बर 1381।

क़िस्म की लापरवाही है क्योंकि वह (उलमा) बहुत सी सही रिवायात के बारे में कह देते हैं कि "यह रिवायत नबी सल्ल० से रिवायत की गई" और बहुत सी ज़ईफ़ रिवायात के बारे में कहते हैं कि "आप ने फ़रमाया" "उसे फ़लां ने रिवायत किया है" और यह सही तरीक़े से हट जाना है।[1]

1. क्योंकि मुहद्दिसीन के उसूल के मुताबिक़ मक़बूल अहादीस के बयान में रावी के नाम का स्पष्टीकरण करना चाहिए था (कि फ़लां ने फ़लां से रिवायत की) जब मर्दूद रिवायात के बयान में नाम को छुपाकर रखना था (जैसे रिवायत है कि..., मरवी है कि. ..आदि) मगर यहां उलमा ने इसके विपरीत किया वल्लाहु आलम।

रहमतुल्लिल आलमीन सल्ल० का ख़ुतबा

إِنَّ الْحَمْدَ لِلّٰهِ نَحْمَدُهُ وَنَسْتَعِيْنُهُ، مَنْ يَهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهُ، وَمَنْ
يُضْلِلْ فَلَا هَادِيَ لَهُ، وَأَشْهَدُ أَنْ لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهُ لَا شَرِيْكَ لَهُ،
وَأَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهُ وَرَسُوْلُهُ. أَمَّا بَعْدُ: فَإِنَّ خَيْرَ الْحَدِيْثِ كِتَابُ
اللّٰهِ وَخَيْرَ الْهَدْيِ هَدْيُ مُحَمَّدٍ ﷺ، وَشَرَّ الْأُمُوْرِ مُحْدَثَاتُهَا،
وَكُلَّ بِدْعَةٍ ضَلَالَةٌ ﴿يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ حَقَّ تُقَاتِهِ وَلَا تَمُوتُنَّ إِلَّا وَأَنتُم
مُّسْلِمُونَ﴾ - ﴿يَا أَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوا رَبَّكُمُ الَّذِي خَلَقَكُم مِّن نَّفْسٍ وَاحِدَةٍ وَخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا
وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيرًا وَنِسَاءً ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ الَّذِي تَسَاءَلُونَ بِهِ وَالْأَرْحَامَ ۚ إِنَّ اللَّهَ كَانَ عَلَيْكُمْ
رَقِيبًا﴾ - ﴿يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ وَقُولُوا قَوْلًا سَدِيدًا ۝٧٠ يُصْلِحْ لَكُمْ
أَعْمَالَكُمْ وَيَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوبَكُمْ ۗ وَمَن يُطِعِ اللَّهَ وَرَسُولَهُ فَقَدْ فَازَ فَوْزًا عَظِيمًا﴾

"निःसन्देह सब प्रशंसाएं अल्लाह के लिए हैं। हम उसकी प्रशंसा करते हैं, उससे मदद मांगते हैं, जिसे अल्लाह राह दिखाए उसे कोई गुमराह नहीं कर सकता और जिसे अपने दर से धुत्कार दे उसके लिए कोई रहबर नहीं हो सकता। और मैं गवाही देता हूं कि वास्तविक उपासक केवल अल्लाह तआला है वह अकेला है उसका कोई शरीक नहीं और मैं गवाही देता हूं कि मुहम्मद सल्ल० उसके बन्दे और उसके रसूल हैं।"

"हम्द व सलात के बाद निश्चय ही तमाम बातों से बेहतर बात अल्लाह तआला की किताब है और तमाम तरीक़ों से बेहतर तरीक़ा मुहम्मद सल्ल० का है और तमाम कामों से बदतरीन काम वे हैं जो (अल्लाह के दीन में) अपनी तरफ़ से निकाले जाएं और हर बिदअत गुमराही है।"

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो जैसा कि उससे डरने का हक़ है और तुम्हें मौत न आए मगर इस हाल में कि तुम मुसलमान हो।"

"ऐ लोगो! अपने रब से डरो जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया। और (फिर) उस जान से उसकी बीवी को बनाया और (फिर) उन दोनों से बहुत से मर्द और औरतें पैदा कीं और उन्हें (ज़मीन पर) फैला दिया। अल्लाह से डरते रहो जिसके ज़रिए (जिसके नाम पर) तुम एक दूसरे से सवाल करते हो और

रिश्तों (को काटने) से डरो। (बचो) निःसन्देह अल्लाह तुम्हारी निगरानी कर रहा है।"

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और ऐसी बात कहो जो सीधी सच्ची हो। अल्लाह तुम्हारे आमाल को सुधारेगा और तुम्हारे गुनाहों को माफ़ फ़रमाएगा और जिस व्यक्ति ने अल्लाह और उसके रसूल का आज्ञा पालन किया तो उसने बड़ी कामयाबी हासिल की।"

चेतावनी :

सहीह मुस्लिम, सुनन नसाई, और मुस्नद अहमद में इब्ने अब्बास और इब्ने मसऊद रज़ि० की हदीस में ख़ुतबा का प्रारंभ "इन्नल हम्दा लिल्लाह" से है अतः "अलहम्दु लिल्लाह" की बजाए "इन्नल हम्दा लिल्लाह" कहना चाहिए।

यहां "नुअ्मिनु बिही व-न तवक्कलू अलैहि" के शब्द सहीह अहादीस में मौजूद नहीं हैं।

अहादीस सहीहा में "नशहदु" (जमा का कलिमा) नहीं बल्कि "अशहदु" (वाहिद का कलिमा) है।

यह ख़ुतबा निकाह, जुमा और आम उपदेश व इरशादात या दर्स व तदरीस के अवसर पर पढ़ा जाता है। इसे ख़ुतबा हाजत कहते हैं इसे पढ़कर आदमी अपनी हाजत व ज़रूरत बयान करे।[1]

---

1. दारमी, अन्निकाह, अध्याय फ़ी ख़ुतबतुन्निकाह, हदीस 2198।

नमाज : फ़र्ज़ियत, श्रेष्ठता और महत्व

सन्तान को नमाज़ सिखाने का हुक्म :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«مُرُوْا أَوْلَادَكُمْ بِالصَّلٰوةِ وَهُمْ أَبْنَاءُ سَبْعِ سِنِيْنَ، وَاضْرِبُوْهُمْ عَلَيْهَا وَهُمْ أَبْنَاءُ عَشْرِ سِنِيْنَ وَفَرِّقُوْا بَيْنَهُمْ فِي الْمَضَاجِعِ»

"अपने बच्चों को नमाज़ पढ़ने का हुक्म दो जब वे सात साल के हो जाएं और जब वे दस वर्ष के हों तो उन्हें नमाज़ छोड़ने पर मारो और उनके बिस्तर अलग कर दो।"[1]

इस हदीस में रसूलुल्लाह सल्ल० बच्चों के मां बाप को इरशाद फ़रमा रहे हैं कि वे अपनी सन्तान को सात वर्ष की उम्र में ही नमाज़ की तालीम देकर नमाज़ का आदी बनाने की कोशिश करें और अगर दस वर्ष के होकर नमाज़ न पढ़ें तो मां बाप मारें और उन्हें सज़ा देकर नमाज़ का पाबन्द बनाएं और दस वर्ष की उम्र का ज़माना चूंकि व्यस्क के क़रीब है इसलिए उन्हें इकट्ठा न सोने दें।

नमाज़ छोड़ना, कुफ्र का एलान है :

हज़रत जाबिर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "ईमान और कुफ्र के बीच फ़र्क़, नमाज़ का छोड़ देना है।"[2]

इसका मतलब यह है कि इस्लाम और कुफ्र के बीच नमाज़ दीवार की तरह मौजूद है। दूसरे शब्दों में नमाज़ का छोड़ना मुसलमान को कुफ्र तक पहुंचाने वाला अमल है।

हज़रत बुरीदा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "हमारे और मुनाफ़िक़ों के बीच सन्धि नमाज़ है जिसने नमाज़ छोड़

---

1. अबू दाऊद, सलात, हदीस 494-495, तिर्मिज़ी, सलात, हदीस 407 इसे इमाम हाकिम और ज़हबी ने सहीह कहा है।

2. मुस्लिम, ईमान, अध्याय बयानुत्तलाक, हदीस 82।

दी तो उसने कुफ़्र किया।"[1]

इस हदीस का मतलब यह है कि कपटियों को जो अम्न है, वह क़त्ल नहीं किए जाते और उनके साथ मुसलमानों जैसा सुलूक रखा जाता है तो उसकी वजह यह है कि वे नमाज़ पढ़ते हैं और उनका नमाज़ पढ़ना मानो मुसलमानों के बीच एक सन्धि है जिसके कारण कपटियों की जान और उनका माल मुसलमानों की तलवार और हमले से महफ़ूज़ है और जिसने नमाज़ छोड़ी तो उसने अपने कुफ़्र को स्पष्ट कर दिया। मुसलमान भाइयो! सोच विचार करो कितना ख़ौफ़ का मक़ाम है कि नमाज़ छोड़ना कुफ़्र का एलान है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन शक़ीक़ रह० रिवायत करते हैं : "सहाबा किराम रज़ि० कर्मों में से किसी चीज़ के छोड़ने को कुफ़्र नहीं समझते थे सिवाए नमाज़ के।"[2]

हज़रत अबू दरदा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० फ़रमाते हैं : "जो व्यक्ति नमाज़ छोड़ दे तो निश्चय ही उस (की बाबत अल्लाह का माफ़ करने) का ज़िम्मा ख़त्म हो गया।"[3]

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिस व्यक्ति की नमाज़ अस्र छूट जाए तो मानो उसका घर और माल लूट लिया गया।"[4]

हज़रत बुरीदा रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिस व्यक्ति ने नमाज़ अस्र छोड़ दी तो उसके कर्म बातिल हो गए।"[5]

---

1. नसाई 1/231-232, इब्ने माजा, हदीस 1079, तिर्मिज़ी, ईमान, हदीस 2626, इसे तिर्मिज़ी, हाकिम (1/6-7) और ज़हबी ने सहीह कहा है।

2. तिर्मिज़ी, अलईमान, हदीस 2627, इसे इमाम हाकिम (1/7) ने सहीह और ज़हबी ने सालेह कहा है।

3. इब्ने माजा, अलफ़ितन, हदीस 4034, इसकी सनद इमाम ज़ेहबी और इब्ने हजर की शर्त पर हसन है।

4. बुख़ारी, हदीस 552, मुस्लिम हदीस 626।

5. बुख़ारी किताब व अध्याय उल्लिखित हदीस 553, अध्याय तबकीर हदीस 594।

नमाज़ की श्रेष्ठता :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«اَلصَّلَوَاتُ الْخَمْسُ وَالْجُمُعَةُ إِلَى الْجُمُعَةِ كَفَّارَةٌ لِّمَا بَيْنَهُنَّ مَا لَمْ تُغْشَ الْكَبَائِرُ»

"पांच नमाज़ें, उन गुनाहों को जो उन नमाज़ों के बीच हुए, मिटा देती हैं और (इसी तरह) एक जुमा दूसरे जुमा तक के गुनाहों को मिटा देता है, जबकि कबीरा गुनाहों से बचा गया हो।"[1]

जैसे फ़ज्र की नमाज़ के बाद जब ज़ोहर पढ़ेंगे तो दोनों नमाज़ों के बीच के समय में जो गुनाह, ग़लतियां और ख़ताएं हो चुकी होंगी अल्लाह तआला उनको बख़्श देगा। इसी तरह रात और दिन के तमाम छोटे गुनाह नमाज़ पंजगाना से माफ़ हो जाते हैं मानो पांचों नमाज़ों पर हमेशगी मुसलमानों के कर्म पत्र को हर समय साफ़ और सफ़ेद रखती है यहां तक कि इंसान नमाज़ की बरकत से आहिस्ता आहिस्ता छोटे गुनाहों से बचते हुए बड़े गुनाहों के भय से ही कांप उठता है।[2]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने सहाबा रज़ि० से फ़रमाया : "भला मुझे बताओ अगर तुम्हारे दरवाज़े के बाहर नहर हो और तुम उसमें हर रोज़ पांच बार नहाओ, क्या (फिर भी जिस्म पर) मैल बाक़ी रहेगा?" सहाबा रज़ि० ने कहा : "नहीं।" आपने फ़रमाया : "यही मिसाल पांचों नमाज़ों की है, अल्लाह तआला उनके सबब गुनाहों को माफ़ कर देता है।"[3]

---

1. मुस्लिम, तहारत, अध्याय सलातुल ख़म्स वल जुमा, हदीस 233।

2. अगर अक़ीदा, तरीक़ाए नमाज़ और नीयत दुरुस्त हो तो नमाज़ पर हमेशगी बन्दे को गुनाहों से रोक देती है इसके बावजूद अगर कोई व्यक्ति कबीरा गुनाहों को करता हो तो निश्चय ही वह किसी ऐसा गुनाह को निरंतर कर रहा है जिसके होते हुए नमाज़ क़ुबूल ही नहीं होती। वरना यह नामुमकिन है कि नमाज़ क़ुबूल भी हो जाए और गुनाहों से न रुके।

3. बुख़ारी, कफ़्फ़ारा, 528 व मुस्लिम हदीस 667।

हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि एक व्यक्ति ने रसूलुल्लाह सल्ल० की सेवा में हाज़िर होकर अर्ज़ किया कि (मैंने गुनाह किया और बतौर सज़ा) में हद को पहुंचा हूं तो मुझ पर हद क़ायम करें। (आपने उससे हद का हाल मालूम न किया यह न पूछा कि कौनसा गुनाह किया है?) इतने में नमाज़ का समय आ गया। उस व्यक्ति ने आपके साथ नमाज़ पढ़ी जब आप नमाज़ पढ़ चुके तो वह व्यक्ति फिर खड़ा होकर कहने लगा कि ऐ अल्लाह के रसूल! निःसन्देह मैं हद को पहुंचा हूं तो मुझ पर अल्लाह का हुक्म लागू कीजिए। आपने फ़रमाया : "क्या तूने हमारे साथ नमाज़ नहीं पढ़ी?" उसने कहा : "पढ़ी है।" आपने फ़रमाया : "अल्लाह ने तेरा गुनाह बख़्श दिया है।"[1]

अल्लाह की रहमत और बख़्शिश कितनी व्यापक है कि नमाज़ पढ़ने के सबब अल्लाह ने उसका गुनाह जिसे वह अपनी समझ के मुताबिक़ "हद को पहुंचना" कह रहा था माफ़ कर दिया मालूम हुआ नमाज़ गुनाहों को मिटाने वाली है।

हज़रत अबूज़र रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० जाड़े के मौसम में बाहर निकले, पतझड़ का मौसम था। आपने एक पेड़ की दो शाख़ें पकड़ कर उन्हें हिलाया तो पत्ते झड़ने लगे आपने फ़रमाया : "ऐ अबूज़र! मैंने कहा : "ऐ अल्लाह के रसूल हाज़िर हूं।" आपने फ़रमाया : "मुसलमान जब नमाज़ पढ़ता है और उसके साथ अल्लाह की प्रसन्नता चाहता है तो उसके गुनाह इस तरह गिरते हैं जिस तरह इस पेड़ के पत्ते झड़े हैं।"[2]

हज़रत उबादा बिन सामित रज़ि० की रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अल्लाह तआला ने पांच नमाज़ें फ़र्ज़ की हैं। तो जिसने अच्छा वुज़ू किया, उनको विनय के साथ पढ़ा और उनका रुकूअ पूरा किया तो उस नमाज़ी के लिए अल्लाह का वायदा है कि वह उसको बख़्श देगा।"[3]

हज़रत अम्मारा बिन रवेबा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति सूरज के उदय व अस्त से पहले (अर्थात फ़ज्र और अस्र की) नमाज़ पढ़ेगा वह व्यक्ति हरगिज़ आग में दाख़िल नहीं

---

1. सहीह मुस्लिम, तौबा, हदीस 2764।
2. मुसनद अहमद 5/179, इमाम मुंज़िरी 1/248 ने इसे हसन कहा है।
3. अबू दाऊद, 425, इमाम इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है।

होगा।"[1]

हज़रत उसमान रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति नमाज़ इशा जमाअत के साथ अदा करे (उसे इतना सवाब है) मानो उसने आधी रात तक क़याम किया और फिर सुबह की नमाज़ जमाअत के साथ पढ़े (तो इतना सवाब पाया) मानो तमाम रात नमाज़ पढ़ी।"[2]

हज़रत जुन्दुब क़सरी रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल ने फ़रमाया : "जिस व्यक्ति ने सुबह की नमाज़ पढ़ी तो वह अल्लाह के ज़िम्मे (अहद व अमान) में है।"[3]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "तुम्हारे पास फ़रिश्ते रात और दिन को आते हैं। (आने और जाने वाले फ़रिश्ते) नमाज़ फ़ज्र और नमाज़ अस्र में जमा होते हैं। जो फ़रिश्ते रात को रहे वे आसमान को चढ़ते हैं तो उनका रब उनसे पूछता है (यद्यपि वह अपने बन्दों का हाल ख़ूब जानता है) तुमने मेरे बन्दों को किस हाल में छोड़ा? वे कहते हैं हमने उनको इस हाल में छोड़ा कि वे नमाज़ पढ़ते थे और हम उनके पास इस हाल में गए कि वे नमाज़ पढ़ते थे।"[4]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "कपटियों पर फ़ज्र और इशा से ज़्यादा भारी कोई नमाज़ नहीं। अगर उन्हें उन नमाज़ों का सवाब मालूम हो जाए तो वे उनमें ज़रूर पहुंचें यद्यपि उन्हें सुरीन पर चलना पढ़े।"[5]

सुरीन पर चलने का मतलब यह है कि अगर पांव से चलने की ताक़त न हो तो उन नमाज़ों के सवाब और अज्र की कशिश उन्हें सुरीनों के बल चलकर मस्जिद पहुंचने पर मजबूर कर दे अर्थात हर हाल में पहुंचें।

नबी करीम सल्ल० को नमाज़े अस्र इतनी प्यारी थी कि जब जंग ख़न्दक़ के दिन कुफ़्फ़ार के हमले और तीर अंदाज़ी के सबब यह नमाज़ छूट गई तो

---

1. मुस्लिम, हदीस 634।
2. मुस्लिम, हदीस 656।
3. मुस्लिम, हदीस 657।
4. बुख़ारी हदीस 555, व मुस्लिम हदीस 632।
5. बुख़ारी हदीस 657, मुस्लिम हदीस 651।

आपको बड़ा रंज पहुंचा इस पर नबी सल्ल० की ज़बान मुबारक से यह शब्द निकले : "हमें काफ़िरों ने बीच की नमाज़, नमाज़े अस्र, से रोके रखा, अल्लाह तआला उनके घरों और क़ब्रों को आग से भर दे।"[1]

नमाज़ी और शहीद :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि एक क़बीले के दो व्यक्ति एक साथ मुसलमान हुए, उनमें से एक जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह में शहीद हो गए और दूसरे एक साल के बाद चले गए। हज़रत तलहा रज़ि० ने सपने में देखा कि वह साहब जिनका एक साल बाद इंतक़ाल हुआ उस शहीद से पहले जन्नत में दाख़िल हो गए। मुझे बड़ा अचरज हुआ कि शहीद का रुतबा तो बहुत बुलन्द है इसलिए जन्नत में उसे पहले दाख़िल होना चाहिए था। मैंने ख़ुद ही रसूलुल्लाह सल्ल० की ख़िदमत में अर्ज़ किया (अर्थात इस तक़्दीम व ताख़ीर की वजह पूछी) तो आपने फ़रमाया : "जिस व्यक्ति का बाद में इंतक़ाल हुआ क्या तुम उसकी नेकियां नहीं देखते कितनी ज़्यादा हो गईं? क्या उसने एक रमज़ान के रोज़े नहीं रखे? और (साल भर की फ़र्ज़ नमाज़ों की) छः हज़ार और इतनी इतनी रकअतें ज़्यादा नहीं पढ़ीं?"[2]

यही क़िस्सा हज़रत तलहा बिन अब्दुल्लाह रज़ि० ख़ुद ज़रा विस्तार से बयान करते हैं। पाठक ध्यान दें कि यह क़िस्सा किस दर्जे ईमान अफ़रोज़ और नमाज़ की रग़बत दिलाने वाला है। हज़रत तलहा रज़ि० कहते हैं कि मैंने सुबह लोगों को अपना सपना सुनाया। सबको इस बात पर अचरज हुआ कि शहीद को (जन्नत में जाने की) इजाज़त बाद में क्यों मिली? यद्यपि उसे पहले मिलनी चाहिए थी। लोगों ने रसूलुल्लाह सल्ल० से मालूम किया, आपने फ़रमाया : "इसमें हैरत की कोई बात नहीं है, क्या बाद वाले व्यक्ति ने एक साल इबादत (ज़्यादा) नहीं की? उसने एक रमज़ान के रोज़े नहीं रखे? उसने एक साल की नमाज़ों के इतने इतने सज्दे ज़्यादा नहीं किए? सबने अर्ज़ किया : जी हां अल्लाह के रसूल!। तो आपने फ़रमाया : "फिर तो उन दोनों के बीच ज़मीन

---

1. बुख़ारी, हदीस 2931, 4111, 4533, 6396 व मुस्लिम हदीस 627-628।
2. मुसनद अहमद (2/333) इमाम मुंज़िरी (1/244) और इमाम हेसमी (10/207) ने इसे हसन कहा है।

व आसमान का फ़र्क़ हो गया।"[1]

नमाज़ का महत्व :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने इरशाद फ़रमाया :

«إِنَّ أَوَّلَ مَا يُحَاسَبُ النَّاسُ يَوْمَ الْقِيَامَةِ مِنْ أَعْمَالِهِمُ الصَّلٰوةُ»

"निःसन्देह क़ियामत के दिन लोगों के कर्मों में से सबसे पहले नमाज़ ही का हिसाब होगा।"[2]

हज़रत इब्ने मसऊद रज़ि० फ़रमाते हैं, मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० से सवाल किया कि अल्लाह तआला को कौन-सा अमल ज़्यादा महबूब है? आपने फ़रमाया : "समय पर नमाज़ पढ़ना।" मैंने कहा फिर कौन-सा? आपने फ़रमाया : "मां-बाप के साथ नेक सुलूक करना।" मैंने कहा फिर कौन-सा? आपने फ़रमाया : "अल्लाह के रास्ते में जिहाद करना।"[3]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

"नमाज़ के बारे में अल्लाह से डरो। नमाज़ के बारे में अल्लाह से डरो। नमाज़ के बारे में अल्लाह से डरो।"[4]

"आदमी और शिर्क के बीच नमाज़ ही मौजूद है।"[5]

"नमाज़ दीन का सतून है।"[6]

---

1. इब्ने माजा, हदीस 2925, इब्ने हिबान (हदीस 2466) इमाम इब्ने हिबान ने इसे सहीह किया है।

2. अबू दाऊद, हदीस 866, हाकिम (1/362-363) इसे इमाम ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, हदीस, 527, मुस्लिम हदीस 85।

4. इब्ने माजा, हदीस 2697, इब्ने हिबान (हदीस 1220) इसे इमाम बूसीरी ने सहीह कहा है।

5. मुस्लिम, हदीस 82, नमाज़ अक़ाइद तौहीद का सबसे बड़ा द्योतक है अगर नमाज़ी का अक़ीदा, शब्द नमाज़ के मुताबिक़ हो तो वह कभी शिर्क व कुफ़्र में गिरफ़्तार नहीं हो सकता इंशाअल्लाह तआला।

6. तिर्मिज़ी (हदीस 2621) इसे इमाम हाकिम (2/76, 412-413) इमाम ज़ेहबी और इमाम तिर्मिज़ी ने सहीह कहा है।

क़ियामत के दिन जब अल्लाह तआला कुछ जहन्नमियों पर रहमत करने का इरादा फ़रमाएगा तो फ़रिश्तों को हुक्म देगा कि वह जहन्नम से ऐसे लोगों को बाहर निकाल लें जो अल्लाह की इबादत किया करते थे। फ़रिश्ते उन्हें सज्दे के निशान से पहचान कर जहन्नम से निकाल देंगे (क्योंकि) सज्दे की जगहों पर अल्लाह तआला ने जहन्नम को हराम कर दिया है वहां आग का कुछ असर न होगा।"[1]

"सबसे श्रेष्ठ कार्य प्रथम समय पर नमाज़ पढ़ना है।"[2]

"जब आदमी नमाज़ के लिए खड़ा होता है तो रहमते इलाही उसकी तरफ़ आकर्षित हो जाती है।"[3]

"मेरे पास जिब्रील आए और कहने लगे ऐ मुहम्मद (सल्ल०)! चाहे कितना ही आप ज़िंदा रहें आख़िर एक दिन मरना है और जिससे चाहें कितनी ही मुहब्बत करें आख़िर एक दिन जुदा होना है और आप जैसा भी अमल करें उसका बदला ज़रूर मिलना है और उसमें कोई संकोच नहीं कि मोमिन की शराफ़त तहज्जुद की नमाज़ में है और मोमिन की इज़्ज़त लोगों (के माल) से बचने (बरतने) में है।"[4]

रसूलुल्लाह सल्ल० फ़रमाते हैं : "मैंने सपने में अपने बाबरकत और बुलन्द दर्जात परवरदिगार को बेहतरीन सूरत में देखा, तो उसने कहा, ऐ मुहम्मद! मैंने कहा : ऐ मेरे रब मैं हाज़िर हूं। अल्लाह ने फ़रमाया, फ़रिश्ते किस बात में बहस कर रहे हैं? मैंने कहा मैं नहीं जानता। अल्लाह ने तीन बार पूछा, मैंने हर बार यही जवाब दिया। फिर मैंने अल्लाह को देखा कि उसने अपना हाथ मेरे कंधों के बीच रखा। यहां तक कि मैंने अल्लाह तआला की

---

1. बुख़ारी, हदीस 806 व मुस्लिम हदीस 182।

2. इब्ने ख़ुज़ैमा हदीस 327 व इब्ने हिबान हदीस 280 इसे इमाम हाकिम (1/188-189) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. अबू दाऊद, हदीस 945, नसाई (3/6), तिर्मिज़ी हदीस 379, इसे तिर्मिज़ी ने हसन और इब्ने हजर ने सहीह कहा है।

4. मुस्तदरक हाकिम (4/324-325) इमाम हाकिम और इमाम ज़ेहबी ने इसे सहीह और हाफ़िज़ मुंज़िरी ने हसन कहा है। अर्थात जो कुछ अल्लाह ने दिया है उस पर सब्र, शुक्र और क़नाअत करे और लोगों के माल में लालच न रखे।

उंगलियों[1] की ठंडक अपनी छाती के बीच महसूस की। फिर मेरे लिए हर चीज़ ज़ाहिर हो गई। और मैंने सबको पहचान लिया।[2] फिर फ़रमाया ऐ मुहम्मद! मैंने कहा, मेरे रब! मैं हाज़िर हूं। अल्लाह ने फ़रमाया, निकटतम फ़रिश्ते किस बात में बहस कर रहे हैं? मैंने कहा, कफ़्फ़ारा (गुनाहों का कफ़्फ़ारा बनने वाली नेकियों) के बारे में। अल्लाह ने फ़रमाया वह क्या है? मैंने कहा, नमाज़ बाजमाअत के लिए पैदल चलकर जाना और नमाज़ के बाद मस्जिदों में बैठना और परिश्रम (सर्दी या बीमारी) के समय पूरा वुज़ू करना। अल्लाह तआला ने फ़रमाया और किस चीज़ में बहस कर रहे हैं? मैंने कहा : दर्जात की बुलन्दी के बारे में। अल्लाह ने पूछा, वह किन चीज़ों में है? मैंने कहा : "लोगों को खाना खिलाने, नर्म बात करने, और रात को नमाज़ पढ़ने में जब लोग सो रहे हों।" फिर अल्लाह ने फ़रमाया, अपने लिए जो चाहो दुआ करो। रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि फिर मैंने यह दुआ की :

«اَللّٰهُمَّ إِنِّیْ أَسْئَلُكَ فِعْلَ الْخَيْرَاتِ وَتَرْكَ الْمُنْكَرَاتِ وَحُبَّ الْمَسَاكِيْنِ، وَأَنْ تَغْفِرَلِیْ وَتَرْحَمَنِیْ، وَإِذَا أَرَدْتَّ فِتْنَةً فِیْ قَوْمٍ فَتَوَفَّنِیْ غَيْرَ مَفْتُوْنٍ، وَأَسْأَلُكَ حُبَّكَ وَحُبَّ مَنْ يُّحِبُّكَ وَحُبَّ عَمَلٍ يُّقَرِّبُ إِلٰى حُبِّكَ»

1. अल्लाह का हाथ और उंगलियां : असल में यह अल्लाह तआला के गुण हैं उनकी कैफ़ियत हम नहीं जानते, हम उन्हें प्राणी के हाथ और उंगलियों से उपमा नहीं देते बल्कि अन्य परोक्ष की बातों की तरह अल्लाह के इन गुणों पर भी ईमान रखते हैं। अलहम्दु लिल्लाह

2. अर्थात सपने के समय ज़मीन व आसमान की हर वह चीज़ मैंने देखी और पहचान ली जो अल्लाह ने मुझे दिखाना चाही। सवाल व जवाब से भी यही भावार्थ निकल रहा है और एक रिवायत में केवल पूरब व पश्चिम का ज़िक्र है। (दक्षिण व उत्तर का नहीं) अतः इस हदीस का कदापि यह अर्थ नहीं है कि पैदाइश आदम से लेकर लोगों के जन्नत और जहन्नम में दाख़िल होने तक कायनात के हर ज़माने की हर चीज़ और हर राज़ मुझे मालूम हो गया, अगर ऐसा होता तो उस सपने के बाद नबी अकरम सल्ल० पर वह्य नहीं आनी चाहिए थी क्योंकि जो चीज़ आपको पहले ही मालूम करवा दी गई उसकी वह्य भेजना बेकार है मगर ऐसा नहीं हुआ और वह्य आती रही बल्कि कभी कभी आप वह्य का इन्तिज़ार फ़रमाया करते थे।

"ऐ अल्लाह मैं तुझसे सवाल करता हूं नेकियों के करने का और बुराइयों के छोड़ने का और मिस्कीनों के साथ मुहब्बत करने का और यह कि तू मुझे माफ़ कर दे और मुझ पर दया कर और अगर तेरा किसी क़ौम को आज़माइश में डालने का इरादा हो तो मुझे आज़माइश से बचाकर मौत दे देना और मैं तुझसे तेरी और हर उस व्यक्ति की मुहब्बत मांगता हूं जो तुझसे मुहब्बत करता है और मैं तुझसे वह अमल करने का सौभाग्य मांगता हूं जो (मुझे) तेरी मुहब्बत के क़रीब कर दे।" नबी अकरम सल्ल० ने फ़रमाया : "मेरा यह सपना हक़ है तो उसको याद रखो और दूसरे लोगों को भी यह सपना सुनाओ।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिसने सुबह की नमाज़ पढ़ी, वह अल्लाह की हिफ़ाज़त में है। तो अल्लाह तआला तुमसे अपनी हिफ़ाज़त के बारे में किसी चीज़ का मुतालबा न करे इसलिए कि जिससे वह यह मुतालबा करेगा निश्चय ही उसको अपनी गिरफ़्त में लेकर मुंह के बल जहन्नम में फेंक देगा।"[2]

मुतालबे का मतलब या तो नमाज़ में कोताही पर मुतालबा व अल्लाह की पकड़ से डराना है या फ़ज्र की नमाज़ पढ़ने वाले से पूछ ताछ करने की सूरत में मुतालबा व अल्लाह की पकड़ से डराना है।[3]

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«أَمَّنِي جِبْرِيلُ عَلَيْهِ السَّلَامُ عِنْدَ الْبَيْتِ مَرَّتَيْنِ فَصَلَّى بِيَ الظُّهْرَ حِينَ زَالَتِ الشَّمْسُ وَكَانَ قَدْرَ الشِّرَاكِ وَصَلَّى بِيَ الْعَصْرَ حِينَ كَانَ ظِلُّهُ مِثْلَهُ وَصَلَّى بِيْ يَعْنِي الْمَغْرِبَ حِينَ أَفْطَرَ الصَّائِمُ وَصَلَّى بِيَ الْعِشَاءَ حِينَ غَابَ الشَّفَقُ وَصَلَّى بِيَ الْفَجْرَ حِينَ حَرُمَ الطَّعَامُ

---

1. तिर्मिज़ी, हदीस 3249, इसे इमाम तिर्मिज़ी ने हसन सहीह कहा है।

2. मुस्लिम, हदीस 657।

3. अर्थात नमाज़ में कोताही न करो क्योंकि यह अल्लाह की हिफ़ाज़त न चाहने के जैसा है और जो व्यक्ति नमाज़ या जमाअत में कोताही नहीं करता उसे अकारण तंग न करो कि यह अल्लाह की हिफ़ाज़त को तोड़ने के जैसा है अल्लाह की पकड़ से डरो वरना जहन्नम का ईंधन बन जाओगे।

وَالشَّرَابُ عَلَى الصَّائِمِ فَلَمَّا كَانَ الْغَدُ صَلَّى بِيَ الظُّهْرَ حِينَ كَانَ ظِلُّهُ مِثْلَهُ وَصَلَّى بِيَ الْعَصْرَ حِينَ كَانَ ظِلُّهُ مِثْلَيْهِ وَصَلَّى بِيَ الْمَغْرِبَ حِينَ أَفْطَرَ الصَّائِمُ وَصَلَّى بِيَ الْعِشَاءَ إِلَى ثُلُثِ اللَّيْلِ وَصَلَّى بِيَ الْفَجْرَ فَأَسْفَرَ»

"ख़ाना काबा के पास ज़िब्रील अलैहिस्सलाम ने मेरी इमामत की। तो मुझे ज़ोहर की नमाज़ पढ़ाई...और मुझे अस्र की नमाज़ पढ़ाई...और मुझे मग़रिब की नमाज़ पढ़ाई...और मुझे इशा की नमाज़ पढ़ाई...और मुझे फ़ज्र की नमाज़ पढ़ाई।"[1] (मुख़्तसर भावार्थ)

इमामत जिब्रील की इस हदीस से मालूम हुआ कि नमाज़ का दर्जा इतना बुलन्द, इसका महत्व अल्लाह के निकट इतना उच्च व श्रेष्ठ, और इसे ख़ास शक्ल, मुक़र्रर क़ायदों, निर्धारित उसूलों और अत्यन्त विनय व विनम्रता से अदा करना इतना ज़रूरी है कि अल्लाह तआला ने उम्मत की शिक्षा के लिए जिब्रील को नबी सल्ल० के पास भेजा। जिब्रील ने अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ रसूलुल्लाह सल्ल० को नमाज़ की कैफ़ियत, रंग रूप, उसके समय और उसके क़ायदे सिखाए और फिर आप जिब्रील के बताए और सिखाए हुए समयों, तरीक़ों, क़ायदों और उसूलों के मुताबिक़ नमाज़ पढ़ते रहे और उम्मत को भी हुक्म दिया : "तुम इस तरह नमाज़ पढ़ो जिस तरह तुम मुझे नमाज़ पढ़ते देखते हो।"[2]

1. अबू दाऊद, हदीस 393, तिर्मिज़ी हदीस 149। इसे इमाम तिर्मिज़ी, इब्ने ख़ुज़ैमा, हाकिम, ज़ेहबी और अबूबक्र इब्ने अरबी ने (आरिज़तुल अहवज़ी में) सहीह कहा है।

2. बुख़ारी, हदीस 631।

तर्जुमा : निश्चय ही नमाज़ अहले ईमान पर निर्धारित समयों पर फ़र्ज़ की गई है

पाकी का बयान

पानी का बयान :

नमाज़ के लिए वुज़ू शर्त है। वुज़ू के बिना नमाज़ क़ुबूल नहीं होती। इसी तरह वुज़ू के लिए पानी का पाक होना शर्त है।

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० फ़रमाते हैं : रसूलुल्लाह सल्ल० से सवाल किया गया : "क्या हम बिज़ाआ के कुओं से वुज़ू कर सकते हैं? यह ऐसा कुआं है जिसमें बदबूदार चीज़ें फेंकी जाती हैं (बिज़ाआ का कुवां ढलान पर था और बारिश आदि का पानी उन चीज़ों को बहाकर कुएं में ले जाता था) नबी सल्ल० ने फ़रमाया :

«اَلْمَاءُ طَهُوْرٌ لاَ يُنَجِّسُهُ شَيْءٌ»

"पानी पाक है (और उसमें दूसरी चीज़ों को पाक करने की क्षमता है) इसे कोई चीज़ नापाक नहीं करती।"[1]

मालूम हुआ कि कुएं का पानी पाक है।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "दरियाई और समुद्री पानी पाक करने वाला है और उसका मुर्दार (मछली) हलाल है।"[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने जुंबी[3] (नापाक) को ठहरे हुए पानी में ग़ुस्ल करने

---

1. अबू दाऊद, हदीस 66, तिर्मिज़ी, हदीस 66, इसे तिर्मिज़ी ने हसन, जबकि इमाम अहमद बिन हंबल, याहूया बिन मुईन, इब्ने हज़म और नववी रह० ने सहीह कहा है।

2. अबू दाऊद, हदीस 83, तिर्मिज़ी हदीस 69, इस हदीस को तिर्मिज़ी, हाकिम (1/140-141), इमाम ज़ेहबी और नववी (अलमज्मूआ 1/82) ने सहीह कहा है।

3. जुंबी : वह इंसान जिस पर ग़ुस्ल फ़र्ज़ हो जाए।

से मना फ़रमाया।[1]

नबी सल्ल० ने खड़े पानी में पेशाब करने और ग़ुस्ल करने से मना फ़रमाया।[2]

नबी सल्ल० ने खड़े पानी में पेशाब करने और वुज़ू करने से मना[3] फ़रमाया।[4]

पेशाब पाख़ाना के शिष्टाचार

लैट्रीन में जाते समय की दुआ :

हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० जब पेशाब पाख़ाना के लिए लैट्रीन में दाख़िल होने का इरादा करते तो फ़रमाते :

«اَللّٰهُمَّ إِنِّىْ أَعُوْذُ بِكَ مِنَ الْخُبُثِ وَالْخَبَائِثِ»

"ऐ अल्लाह! मैं तेरी पनाह पकड़ता हूं नर व मादा नापाक जिन्नों (के शर) से।"[5]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "लैट्रीन जिन्नों और शैतानों के हाज़िर होने की जगह है जब तुम उनमें जाओ तो कहो :

«أَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الْخُبُثِ وَالْخَبَائِثِ»

"अल्लाह की पनाह लेता हूं, नर और मादा ख़बीस जिन्नों (के शर)

---

1. मुस्लिम, हदीस 283।
2. बुख़ारी, हदीस 239।
3. कुएं का पानी भी ठहरा हुआ होता है उसके बावजूद वह पाक होता है और पाक करता है इस वजह से कि उसकी मात्रा क़ुल्लातैन (227 किलोग्राम) से ज़्यादा होती है और किसी गन्दगी के गिरने से उसका गुण (रंग, बू, स्वाद) तब्दील नहीं होता लेकिन अगर उससे कम मात्रा वाले ठहरे हुए पानी में गन्दगी गिर जाए तो उससे ग़ुस्ल या वुज़ू नहीं करना चाहिए चाहे उसका गुण तब्दील हो या न हो। याद रहे कि एक क्लिोग्राम, एक सैर आठ तौला के बराबर होता है।
4. तिर्मिज़ी हदीस 68, इसे तिर्मिज़ी ने हसन सहीह कहा है।
5. बुख़ारी, हदीस 142, मुस्लिम, हदीस 375।

से।"[1]

लैट्रीन से निकलते समय की दुआ :

हज़रत आइशा रज़ि० रिवायत करती हैं : जब रसूलुल्लाह सल्ल० लैट्रीन से निकलते तो फ़रमाते :

"ऐ अल्लाह मैं तुझसे बख़्शिश चाहता हूं।"[2]

पेशाब पाख़ाना के मसाइल :

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम फ़राग़त को आओ तो क़िबले की तरफ़ मुंह करो न पीठ।"[3]

नबी सल्ल० ने गोबर और हड्डी के साथ इस्तिंजा करने से मना फ़रमाया।[4]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "दो, लानत का सबब बनने वाले कामों से बचो।" सहाबा किराम रज़ि० ने पूछा, वे क्या हैं? आपने फ़रमाया : "लोगों के रास्ते में और सायदार पेड़ों के नीचे पेशाब पाख़ाना करना।"[5]

नबी सल्ल० ने दाएं हाथ से इस्तिंजा करने से मना फ़रमाया।[6]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जो कोई पत्थर से इस्तिंजा करे वह ताक़ पत्थर ले।"[7]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 6, इसे हाकिम (1/187) ज़ेहबी और इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 69) ने सहीह कहा।

2. अबू दाऊद, हदीस, 30, तिर्मिज़ी, हदीस 7, इब्ने माजा, हदीस 300, इसको हाकिम (1/158) ज़ेहबी और नववी ने सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, हदीस 394, मुस्लिम हदीस 264-265। अगर लैट्रीन ही क़िबले रुख़ बने हुए हों तो फिर क़िबले की तरफ़ मुंह की बजाए पुश्त करना बेहतर है। (बुख़ारी, हदीस 269)

4. मुस्लिम, हदीस 262।

5. मुस्लिम, हदीस 269।

[illegible] बुख़ारी, हदीस 153-154, मुस्लिम हदीस 267।

[illegible] हदीस 161-162।

नबी सल्ल० ने तीन (ढेलों) से इस्तिंजा करने का हुक्म दिया है।[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने तीन ढेलों से कम के साथ इस्तिंजा करने से मना फ़रमाया।[2]

नबी सल्ल० जब फ़राग़त को जाते तो (इतनी दूर जाकर) बैठते कि कोई आपको न देख सकता।[3]

आप सल्ल० पानी के साथ इस्तिंजा फ़रमाते थे।[4]

नबी सल्ल० ने सूराख़ में पेशाब करने से मना फ़रमाया।[5]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० पेशाब कर रहे थे कि एक आदमी ने आपको सलाम किया मगर आपने उसका जवाब न दिया।[6]

इस हदीस से मालूम हुआ कि पेशाब की हालत में कलाम करना मना है।

नबी सल्ल० ने ग़ुस्ल ख़ाने में पेशाब करने से मना फ़रमाया।[7]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० लैट्रीन गए। एक बर्तन में पानी लाया गया, आपने इस्तिंजा किया फिर एक और बर्तन में पानी लाया गया, आपने वुज़ू किया।[8]

जिस व्यक्ति को पेशाब पाख़ाना की तलब हो तो पहले वह इससे फ़राग़त पाए फिर नमाज़ पढ़े।[9]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 7 व सुनन नसाई (1/28) इसे इमाम दार क़ुतनी और नववी ने सहीह कहा है।

2. मुस्लिम, हदीस 262।

3. अबू दाऊद, हदीस 1-2।

4. सहीह बुख़ारी, हदीस 150 व सहीह मुस्लिम, हदीस 270।

5. अबू दाऊद हदीस 29, इसे हाकिम (1/186) ज़ेहबी और नववी ने सहीह कहा है।

6. सहीह मुस्लिम, हदीस 370।

7. अबू दाऊद, हदीस (27-28) इसे इमाम हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

8. अबू दाऊद, हदीस 45, इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है। मालूम हुआ कि इस्तिंजा और वुज़ू का बर्तन अलग होना चाहिए। (या यह कि कोई मजबूरी हो)

9. सुनन अबी दाऊद, हदीस 88, सुनन तिर्मिज़ी, हदीस 142, सुनन इब्ने माजा, हदीस 616। इसे इमाम तिर्मिज़ी, हाकिम (1/168) और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया जब खाना मौजूद हो या पाख़ाना व पेशाब की हाजत शदीद हो तो नमाज़ नहीं होती।[1]

पेशाब पाख़ाना के दबाव की हालत में अगर नमाज़ पढ़ेगा तो नमाज़ में चैन, तल्लीनता और सन्तोष हासिल न होगा इसलिए नबी सल्ल० ने उनसे फ़राग़त हासिल करने को मुक़द्दम फ़रमाया।

पेशाब की छींटों से बचने की सख़्त ताकीद :

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० दो क़ब्रों के पास से गुज़रे तो फ़रमाया : "इन दोनों क़ब्रों को अज़ाब हो रहा है और अज़ाब का कारण कोई बड़ी चीज़ नहीं इन दोनों में से एक पेशाब से नहीं बचता था और दूसरा चुग़लख़ोर था।"[2]

इस हदीस से मालूम हुआ कि पेशाब के छींटों से सख़्त परहेज़ करना चाहिए। वे लोग जो पेशाब करते समय छींटों से नहीं बचते, अपने कपड़ों को नहीं बचाते, पेशाब करके (पानी न होने पर टिशू, चाक या मिट्टी आदि से) इस्तिंजा किए बिना फ़ौरन उठ खड़े होते हैं। उनके पाजामे, पतलून और जिस्म आदि पेशाब से आलूदा हो जाते हैं उन्हें मालूम होना चाहिए कि पेशाब से न बचना अज़ाब का कारण और बड़ा गुनाह है।

नापाकियों की पाकी का बयान :

एक आराबी ने मस्जिद में पेशाब कर दिया और लोग उसके पीछे पड़ गए। रसूलुल्लाह सल्ल० ने उन्हें फ़रमाया :

---

1. मुस्लिम, हदीस 560।

2. सहीह बुख़ारी हदीस 218, अध्याय फ़िल कबाइर, हदीस 216, सहीह मुस्लिम, हदीस 292। ग़ैब की यह ख़बर आपको अल्लाह की तरफ़ से वह्य द्वारा मिली थी इससे यह लाज़िम नहीं आता कि आपको हर इंसान के सांसारिक और बरज़ख़ी हालात का विस्तृत हाल बताया गया था। यही वजह है कि जब आपसे मुशिरकीन के मुर्दा बच्चों के अंजाम की बाबत सवाल किया गया तो आपने फ़रमाया : "अल्लाह ही बेहतर जानता है कि वे (बड़े होते तो) कैसे कर्म करते।" (अच्छे या बुरे)? देखिए (बुख़ारी, हदीस 1384) इससे मालूम हुआ कि ग़ैब की हर ख़बर जानना केवल अल्लाह तआला का गुण है जबकि नबी अकरम सल्ल० केवल वही ख़बर जानते थे जो अल्लाह आपको बता देता था।

«دَعُوْهُ وَهَرِيْقُوْا عَلٰى بَوْلِهِ سَجْلًا مِّنْ مَّاءٍ»

"इसे छोड़ दो और (जगह को पाक करने के लिए) उसके पेशाब पर पानी का डोल बहा दो।"[1]

फिर आपने उसको बुलाकर फ़रमाया : "मस्जिदें पेशाब और गन्दगी के लिए नहीं बल्कि अल्लाह के ज़िक्र, नमाज़ और क़ुरआन पढ़ने के लिए (होती) हैं।[2]

मासिक धर्म के ख़ून से भीगा कपड़ा :

हज़रत असमा बिन्ते अबी बक्र रज़ि० रिवायत करती हैं कि एक औरत ने रसूलुल्लाह सल्ल० से पूछा कि जिस कपड़े को हैज़ (माहवारी) का ख़ून लग जाए तो क्या करे? आपने फ़रमाया : "उसे चुटकियों से मलकर पानी से धो डालना चाहिए और फिर उसमें नमाज़ अदा कर ली जाए।"[3]

मनी का धोना :

हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं कि मैं रसूलुल्लाह सल्ल० के कपड़े से वीर्य को धो डालती थी और आप उस कपड़े में नमाज़ पढ़ने तशरीफ़ ले जाते थे और धोने का निशान कपड़े पर होता था।[4]

दूध पीते बच्चे का पेशाब :

हज़रत उम्मे क़ैस रज़ि० अपने छोटे (दूध पीते) बच्चे को जो खाना नहीं खाता था, रसूलुल्लाह सल्ल० के पास लाईं और आपने उसे अपनी गोद में बिठा लिया। बच्चे ने आपके कपड़े पर पेशाब कर दिया तो आपने पानी मंगवाकर कपड़े पर छींटे मारे और उसे धोया नहीं।[5]

लुबाबा बिन्ते हारिस रज़ि० रिवायत करती हैं कि हुसैन बिन अली रज़ि०

---

1. बुख़ारी, हदीस 220, 1638 व मुस्लिम हदीस 284-285।
2. इब्ने माजा, हदीस 529।
3. बुख़ारी, हदीस 227, मुस्लिम, हदीस 291।
4. बुख़ारी, हदीस 229-232, मुस्लिम, हदीस 289।
5. बुख़ारी, हदीस 223 व मुस्लिम हदीस 287।

ने रसूलुल्लाह सल्ल० की गोद में पेशाब कर दिया (जो अभी दूध पीते ही थे) मैंने अर्ज़ किया : कोई और कपड़ा पहन लें और तहबंद मुझे दे दें ताकि उसे धो दूं। तो आपने फ़रमाया लड़की का पेशाब धोया जाता है और लड़के के पेशाब पर छींटे मारे जाते हैं।[1]

गन्दगी लगा जूता :

हज़रत अबू सईद रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुममें से कोई मस्जिद आए तो वह देख ले अगर जूतों में गन्दगी लगी हो तो (ज़मीन पर) रगड़ने के बाद उनमें नमाज़ पढ़े।"[2]

कुत्ते का जूठा :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुगफ़ल रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अगर कुत्ता किसी के बर्तन में पानी (आदि) पी ले तो बर्तन को सात बार पानी से धो डाले और पहली बार मिट्टी से मांझे।"[3]

मरे हुए का चमड़ा :

हज़रत हुरैरा रज़ि० की बकरी मर गई। नबी सल्ल० उसके पास से गुज़रे और पूछा कि तुमने इसका चमड़ा उतार कर रंग क्यों नहीं लिया ताकि उससे फ़ायदा उठाते? लोगों ने कहा वह तो मुर्दार है। आपने फ़रमाया कि "उसका केवल खाना हराम है।"[4]

उम्मुल मोमिनीन सौदा रज़ि० ने फ़रमाया कि हमारी बकरी मर गई। हमने उसके चमड़े को रंगकर मश्क बनाली। फिर हम उसमें नबीज़ (खजूर का मशरूब) डालते रहे यहां तक कि वह पुरानी हो गई।[5]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 375, इब्ने माजा, हदीस 522। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा (282) हाकिम (1/166) और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

2. अबू दाऊद, हदीस 650 से हाकिम, ज़ेहबी और इब्ने ख़ुज़ैमा (2/107/हदीस 1017) ने सहीह कहा है।

3. सहीह मुस्लिम, हदीस 279-280।

4. बुख़ारी, हदीस 2221, मुस्लिम, हदीस 363।

5. बुख़ारी, हदीस 6686।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने मुर्दा बकरी का चमड़ा उतार कर इस्तेमाल करने का हुक्म दिया और फ़रमाया : "मुर्दार का चमड़ा दबाग़त देने (मसाले के साथ रंगने) से पाक हो जाता है।[1]

नबी सल्ल० ने दरिन्दों की खाल इस्तेमाल करने से मना फ़रमाया।[2]

बिल्ली का जूठा :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "बिल्ली का जूठा पाक है।"[3]

सोने चांदी के बर्तन में खाना :

हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० रिवायत करती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति सोने चांदी के बर्तनों में खाता पीता है। वह अपने पेट में जहन्नम की आग जमा करता है।"[4]

नापाकी (संभोग के कारण) के आदेश :

ऐसे गुस्ल की हालत को हालत "जनाबत" कहते हैं। निम्न (चार) हालतों में मुसलमान मर्द और औरत पर ग़ुस्ल करना फ़र्ज़ हो जाता है।

1. जोश के साथ वीर्य निकलने के बाद (उसमें स्वप्नदोष भी दाख़िल है)। 2. संभोग के बाद। 3. मासिक धर्म के बाद। 4. निफ़ास (बच्चे की पैदाइश) के बाद।[5]

संभोग और ग़ुस्ल जनाबत :

सहाबा किराम रज़ि० के बीच ग़ुस्ल जनाबत का एक मसला बहस में आया। एक गिरोह कहता था कि ग़ुस्ल केवल संभोग पर फ़र्ज़ हो जाता है वीर्य

---

1. अबू दाऊद, हदीस 4125, इसे इब्ने अलकन हाकिम ने सहीह कहा है।

2. अबू दाऊद, हदीस 4132, तिर्मिज़ी, हदीस 1775, इसे हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. अबू दाऊद, हदीस 75, तिर्मिज़ी हदीस 92, इसे तिर्मिज़ी, हाकिम, ज़ेहबी और नववी ने सहीह कहा है।

4. सहीह मुस्लिम, हदीस 2065।

5. वह ख़ून जो बच्चे की पैदाइश पर जारी होता है। (मुअल्लिफ़)

का निकलना शर्त नहीं। दूसरा गिरोह बयान करता था कि ग़ुस्ल के लिए दख़ूल के साथ वीर्य का निकलना भी शर्त है। यह लम्बी बहस किसी निर्णायक सूरत पर समाप्त न हुई। आख़िर तै पाया कि उम्मुल मोमिनीन हज़रत आइशा रज़ि० से मालूम किया जाए। हज़रत आइशा रज़ि० ने कहा, रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«إِذَا جَلَسَ بَيْنَ شُعَبِهَا الْأَرْبَعِ وَمَسَّ الْخِتَانُ الْخِتَانَ فَقَدْ وَجَبَ الْغُسْلُ»

"जब मर्द, औरत की चार शाख़ों के बीच बैठ जाए और उसके लिंग का अगला भाग औरत की शर्मगाह से छू जाए (अर्थात मर्द का लिंग औरत की शर्मगाह के अंदर दाख़िल हो जाए) तो ग़ुस्ल वाजिब हो जाता है।" (मफ़्हूम)[1]

तो मसला यह साबित हुआ कि केवल दख़ूल पर ही मर्द और औरत जुंबी हो जाते हैं और उन पर ग़ुस्ल वाजिब हो जाता है। वीर्य का निकलना शर्त नहीं है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम औरत की चार शाख़ों के बीच बैठकर संभोग करो तो तुम पर ग़ुस्ल वाजिब हो गया। यद्यपि वीर्य न निकले।"[2]

औरत को भी स्वप्नदोष होता है :

उम्मुल मोमिनीन हज़रत सलमा रज़ि० रिवायत करती हैं कि हज़रत उम्मे सलीम रज़ि० ने रसूलुल्लाह सल्ल० से कहा, ऐ अल्लाह के रसूल! निश्चय ही अल्लाह हक़ से नहीं शरमाता (मैं भी आपसे मसला पूछती हूं) क्या औरत पर ग़ुस्ल है जबकि उसको स्वप्नदोष हो? आपने फ़रमाया : "हां, लेकिन जब पानी (वीर्य का निशान) देखे।" इस पर हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० ने (शर्म से) मुंह छुपा लिया और अर्ज़ किया। ऐ अल्लाह के रसूल! क्या औरत को भी स्वप्नदोष होता है? आपने फ़रमाया : "हां (होता है) तेरा दाहिना हाथ ख़ाक

1. सहीह मुस्लिम, हदीस 349।
2. बुख़ारी हदीस 291, मुस्लिम हैज़, 348।

आलूद हो।"[1]

मालूम हुआ कि औरत या मर्द नींद से उठकर अगर गीलापन अर्थात निशान देखें तो (यह स्वप्नदोष की अलामत है अतः) उन पर ग़ुस्ल करना फ़र्ज़ हो जाता है और अगर स्वप्नदोष की कैफ़ियत उन्हें याद हो लेकिन निशान न पाएं तो ग़ुस्ल फ़र्ज़ नहीं होगा ऐसी सूरत में सन्देह करने की ज़रूरत नहीं है।

जुंबी के बालों का मसला :

हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० रिवायत करती हैं कि मैंने कहा ऐ अल्लाह के रसूल! मैं अपने सर के बाल ख़ूब मज़बूत गूंधती हूं। क्या मैं उन्हें ग़ुस्ल जनाबत के समय खोला करूं? आपने फ़रमाया : "उनका खोलना ज़रूरी नहीं। तेरे लिए यही काफ़ी है कि तीन लप पानी अपने सर पर डाले, फिर अपने सारे बदन पर पानी बहाए। अतः तू पाक हो जाएगी।"[2]

हज़रत आइशा रज़ि० को ख़बर मिली कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० औरतों को ग़ुस्ले जनाबत के लिए बाल खोलने का हुक्म देते हैं आप फ़रमाने लगीं : इब्ने उमर पर हैरत है, उन्होंने औरतों को तकलीफ़ में डाल दिया वह उन्हें सर मुंढाने का हुक्म क्यों नहीं दे देते। मैं और रसूलुल्लाह सल्ल० एक ही बर्तन में ग़ुस्ल करते और मैं अपने (बाल खोले बिना) सर पर तीन चुल्लू से ज़्यादा पानी नहीं डालती थी।[3]

मालूम हुआ कि ग़ुस्ल जनाबत के लिए बाल खोलने की ज़रूरत नहीं मगर यह हुक्म केवल ग़ुस्ल जनाबत का है। ग़ुस्ल हैज़ के लिए बालों को खोलना ज़रूरी है।

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है कि उन्हें रसूलुल्लाह सल्ल० ने ग़ुस्ले हैज़ के लिए फ़रमाया : "अपने बाल खोलो और ग़ुस्ल करो।"[4]

---

1. बुख़ारी, ग़ुस्ल, हदीस 282, व सहीह मुस्लिम, हैज़, हदीस 313। आख़िरी वाक्य, बददुआ नहीं, मात्र एक मुहावरा है। तात्पर्य सचेत करना होता है।
2. सहीह मुस्लिम, हैज़, हदीस 330।
3. इब्ने ख़ुज़ैमा 1/123 हदीस 247, मुस्लिम हैज़ हदीस 331।
4. इब्ने माजा, तहारत, हदीस 641 बूसीरी ने कहा कि इसके रावी सिक़ा है।

नापाक से मेलजोल और मुसाफ़ा जाइज़ है :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि एक दिन जनाबत की हालत में मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० से मुलाक़ात की। आपने मेरा हाथ पकड़ा और मैं आपके साथ हो लिया। आप एक जगह बैठ गए और मैं चुपके से निकल गया और घर जाकर ग़ुस्ल किया फिर वापस आया। आप अभी बैठे हुए थे। आपने पूछा : "ऐ अबू हुरैरह! तू कहां गया था?" मैंने सारा हाल कह सुनाया तो आपने फ़रमाया : "सुब्हानल्लाह, निःसन्देह मोमिन नापाक नहीं होता।"[1]

नबी सल्ल० का यह फ़रमान कि मोमिन नापाक नहीं होता, इसका मतलब यह है कि मोमिन वास्तव में गन्दा और पलीद नहीं होता। जनाबत, हुक्मी निजासत है, हस्सी नहीं अर्थात शरीअत ने ज़रूरत के आधार पर एक हालत में हुक्मन इस पर ग़ुस्ल वाजिब किया है। अतः जुंबी के साथ मिलना जुलना, उठना बैठना, मेलजोल और खाना पीना सब जाइज़ है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने एक अंसारी को बुलाया। जब वह आया तो उसके सर के बालों से पानी टपक रहा था। आपने पूछा : "शायद तुम जल्दी में नहाए हो? उसने कहा हां अल्लाह के रसूल! आपने फ़रमाया : "(हालते जनाबत में) अगर किसी से तुरन्त मिलना हो और नहाने में देर लगे तो वुज़ू करना ही काफ़ी है।"[2]

हज़रत उमर रज़ि० ने आपसे पूछा मैं रात को नापाक होता हूं तो क्या करूं? आपने फ़रमाया : "लिंग धो डाल, वुज़ू कर और सो जा।"[3]

रसूलुल्लाह सल्ल० जब हालते जनाबत में खाना या सोना चाहते तो नमाज़ के वुज़ू की तरह वुज़ू करते।[4]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जो कोई अपनी पत्नी से संभोग करे और

---

1. सहीह बुख़ारी, ग़ुस्ल, अध्याय अरक़ जुनुब, हदीस 283, हदीस 285, व सहीह मुस्लिम हदीस 271।

2. बुख़ारी, हदीस 180, व सहीह मुस्लिम, हदीस 345। फिर भी नमाज़ के लिए ग़ुस्ल करना पड़ेगा।

3. बुख़ारी, हदीस 290, मुस्लिम हदीस 306।

4. बुख़ारी, 288, मुस्लिम, हैज़ हदीस 305।

फिर दोबारा करना चाहे तो उसे चाहिए कि दोनों के बीच वुज़ू करे।"[1]

मासिक धर्म वाली औरत से संभोग करने की मनाही :

हैज़ की हालत में औरत से संभोग करना सख़्त गुनाह है अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में फ़रमाया :

﴿ فَاعْتَزِلُوا النِّسَاءَ فِي الْمَحِيضِ ﴾ (البقرة: ٢/ ٢٢٢)

"तो (दिनों) हैज़ में औरतों से अलहदगी करो (अर्थात संभोग न करो)।" (सूरह बक़रा 2 : 222)

अगर कोई इस गुनाह को कर ले तो उसकी बाबत नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति हैज़ की हालत में अपनी औरत से संभोग करे तो उसे चाहिए कि आधा दीनार दान करे।"[2]

दीनार साढ़े चार माशे सोने का होता है तो आधा दीनार सवा दो माशे सोना हुआ। सवा दो माशे सोने की क़ीमत सदक़ा करे अर्थात किसी हक़दार को दे दे और आइंदा के लिए तौबा करे।

मज़ी के निकलने से ग़ुस्ल वाजिब नहीं होता :

सय्यदना अली रज़ि० बहुत ताक़तवर जवान थे और आपको मज़ी कसरत से आती थी। आपको मसला मालूम हुआ था कि मज़ी के निकलने पर ग़ुस्ल वाजिब होता है या नहीं। चूंकि रसूलुल्लाह सल्ल० के दामाद थे इसलिए सीधे आपसे मालूम करते शर्म आई तो अपने दोस्त मिक़्दाद रज़ि० से कहा कि वह मसला मालूम करें। हज़रत मिक़्दाद रज़ि० ने नबी सल्ल० से पूछा, आपने फ़रमाया : "मज़ी के निकलने पर ग़ुस्ल वाजिब नहीं होता केवल वुज़ू करना चाहिए।"[3]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "अगर मज़ी निकलती हो तो लिंग को धो

---

1. मुस्लिम, हैज़, हदीस 308।

2. अबू दाऊद, हदीस 246, हदीस 2168, नसाई (1/93) व तिर्मिज़ी हदीस 136, इमाम हाकिम (1/171-172) और ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, हदीस 132, वल वुज़ू, हदीस 178, व मुस्लिम हदीस 303।

लो और वुज़ू करो।"[1]

और फ़रमाया : "और कपड़े पर (जहां मज़ी लगी हो) एक चुल्लू पानी लेकर छिड़क लेना काफ़ी है।"[2]

मज़ी, मनी और वदी का फ़र्क़ :

मज़ी : उस चिपकते हुए लेसदार पानी को कहते हैं जो वासना के समय लिंग के सिरे पर निकलता है।

वीर्य : लिंग से मज़े और जोश के साथ टपक कर निकलने वाला सफ़ेद पदार्थ होता है जिससे इंसान पैदा होता है और उसके निकलने से आदमी पर ग़ुस्ल फ़र्ज़ हो जाता है।

वदी : वह गाढ़ा सफ़ेद पानी जो पेशाब से पहले या बाद निकलता है। इसके निकलने पर ग़ुस्ल करना ज़रूरी नहीं है।

सफ़ेद पानी आने से ग़ुस्ल वाजिब नहीं :

जिन औरतों को सफ़ेद पानी आने की शिकायत होती है उससे भी ग़ुस्ल लाज़िम नहीं होता। पहले की तरह नमाज़ें अदा करनी चाहिएं।

मासिक धर्म वाली औरत को छूना और उसके साथ खाना जाइज़ है :

हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि जब औरत हैज़[3] से होती तो यहूदी उसके साथ खाते पीते नहीं थे तो रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "हाइज़ा (मासिक धर्म वाली) से हर काम करो सिवाए संभोग के।"[4]

अर्थात मासिक धर्म वाली के साथ खाना पीना, उठना बैठना, मिलना जुलना, उसे छूना और चुम्बन आदि सब बातें जाइज़ हैं सिवाए संभोग के।

---

1. बुख़ारी, हदीस 269, व मुस्लिम हवाला मज़्कूर, हदीस 303।

2. अबू दाऊद, तहारत, हदीस 210, तिर्मिज़ी हदीस 115, इमाम तिर्मिज़ी ने इसे हसन सहीह कहा है।

3. मासिक धर्म अर्थात मासिक धर्म वाली का, हाइज़ा : वह औरत जो हैज़ के दिनों से गुज़र रही हो।

4. मुस्लिम, हैज़, हदीस 302।

हज़रत आइशा रज़ि० रिवायत करती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० मुझे (हैज़ की हालत में) अज़ार बांधने का हुक्म देते, तो मैं अज़ार बांधती। आप मुझे गले लगाते थे और मैं हैज़ वाली होती थी।[1]

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है कि नबी अकरम सल्ल० ने मस्जिद (अपनी एतेकाफ़गाह) से मुझे बोरिया पकड़ाने का हुक्म दिया। मैंने कहा, मैं हाइज़ा हूं। आपने फ़रमाया : "तेरा हैज़ तेरे हाथ में नहीं है।"[2]

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है : "नबी सल्ल० मेरी गोद को तकिया बनाकर क़ुरआन हकीम की तिलावत करते थे यद्यपि मैं हाइज़ा होती थी।"[3]

मासिक धर्म वाली औरत के क़ुरआन पढ़ने की नापसन्दीदगी :

हालत जनाबत व हैज़ में क़ुरआन हकीम की तिलावत के हराम होने के बारे में कोई सहीह हदीस नहीं है, मगर उन हालतों में मक्रूह ज़रूर है।

मुहाजिर बिन क़न्फ़िज़ से मरवी है कि रसूलुल्लाह सल्ल० को पेशाब की हालत में किसी ने सलाम किया तो नबी सल्ल० ने जवाब न दिया। फ़राग़त के बाद आपने वुज़ू किया और फ़रमाया : "मैंने मुनासिब न समझा कि पाकी के बिना सलाम का जवाब दूं।"[4]

जब हदस असग़र की हालत में सलाम का जवाब देना मक्रूह हुआ तो जुंबी का क़ुरआन की तिलावत करना भी मक्रूह हुआ अलबत्ता बाक़ी ज़िक्र की बाबत इमाम नववी फ़रमाते हैं : जुंबी के लिए तस्बीह व तहमीद, तकबीर और अन्य दुआएं और अज़्कार आम सहमति से जाइज़ हैं। इसकी दलील हज़रत आइशा रज़ि० की हदीस है। आप फ़रमाती हैं : मैं हज के दिनों में हाइज़ा हो गई तो रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "बैतुल्लाह के तवाफ़ के

1. बुख़ारी, हदीस 300, 302, हदीस 293।

2. मुस्लिम, हदीस 298।

3. बुख़ारी, हदीस 297, मुस्लिम, 301।

4. अबू दाऊद, हदीस 17, नसाई, इब्ने माजा, हाकिम (1/167, 3-479), ज़ेहबी और नववी ने सहीह कहा है।

अलावा बाक़ी हर वह काम करो जो हाजी करता है।"[1]

हज़रत उम्मे अतिया रज़ि० फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने हैज़ वाली औरतों को भी ईद के दिन ईदगाह जाने का हुक्म दिया ताकि वे लोगों की तकबीरों के साथ तकबीरें कहें और उनकी दुआ के साथ दुआ करें लेकिन नमाज़ न पढ़ें।[2]

हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० हर हाल में अल्लाह का ज़िक्र करते थे।[3]

इन अहादीस से साबित हुआ कि हाइज़ा और जुंबी ज़िक्र, अज़्कार कर सकते हैं।

इस्तिहाज़ा का मसला :

इस्तिहाज़ा वह ख़ून होता है जो हैज़ के दिनों के बाद ख़ाकी या ज़र्द रंग का जारी होता है। यह एक रोग है। जब औरत अपने हैज़ के आदत के दिन पूरे करे फिर उसे ग़ुस्ल करके नमाज़ शुरू कर देनी चाहिए क्योंकि ख़ून इस्तिहाज़ा का हुक्म ख़ून हैज़ के हुक्म से विभिन्न है।

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है कि फ़ातिमा बिन्ते अबी हबीश रज़ि० रसूलुल्लाह सल्ल० की ख़िदमत में आईं और अर्ज़ किया : ऐ अल्लाह के रसूल! मुझे ख़ून इस्तिहाज़ा आता है और मैं (इस्तिहाज़ा के ख़ून के कारण) पाक नहीं होती क्या मैं नमाज़ छोड़ दूं? आप सल्ल० ने फ़रमाया : "नहीं, ख़ून इस्तिहाज़ा एक (अंदरूनी) रग (से बहता) है और यह ख़ून हैज़ नहीं है। तो जब तुझे हैज़ का ख़ून आए तो नमाज़ छोड़ दे और जिस समय ख़ून हैज़ बन्द हो जाए (और ख़ून इस्तिहाज़ा शुरू हो) तो अपने इस्तिहाज़ा के ख़ून को धो और नमाज़ पढ़।"[4]

---

1. सहीह बुख़ारी, हदीस 294, हदीस 1650, व सहीह मुस्लिम, 1211।

2. बुख़ारी, हदीस 974, मुस्लिम हदीस 890।

3. मुस्लिम, हदीस 373। याद रहे कि मक्रूह से मुराद ऐसा काम है जिसका करना जाइज़, और न करना श्रेष्ठ हो लेकिन अगर हाइज़ा (हाफ़िज़ा) को क़ुरआन भूलने का अंदेशा हो तो उसे ज़बानी मंज़िल पढ़नी (या सुनानी) चाहिए।

4. सहीह बुख़ारी, हदीस 306, हदीस 320, 325, 331, व सहीह मुस्लिम, हदीस 333।

हासिल कलाम यह कि इस्तिहाज़ा वाली औरत पाक औरत की तरह है। हैज़ के दिनों के बाद ग़ुस्ल करके नमाज़ शुरू कर दे। हां यह बहुत ज़रूरी है कि हर नमाज़ के लिए नया वुज़ू करती रहे।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने हज़रत फ़ातिमा बिन्ते अबी हबीश रज़ि० से यह भी फ़रमाया : "हर नमाज़ के लिए वुज़ू कर लिया करो।"[1]

मासिक धर्म वाली औरत को नमाज़ और रोज़ा की मनाही :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब औरत हैज़ से होती है तो नमाज़ पढ़ती है न रोज़ा रखती है।"[2]

एक औरत मुआज़ह रज़ि० ने हज़रत आइशा रज़ि० से मालूम किया : क्या वजह है कि हाइज़ा औरत रोज़े की क़ज़ा तो रखती है, नमाज़ की नहीं?

---

1. बुख़ारी, हदीस 228। ख़ून हैज़, व्यस्क की अलामत है अगर यह आदत के मुताबिक़ आए तो यह सेहत की अलामत है, इसके विपरीत इस्तिहाज़ा बीमारी की अलामत है चूंकि यह ख़ून, हैज़ से पहले भी आता है और हैज़ की मुद्दत गुज़र जाने के बावजूद नहीं रुकता इसलिए कुछ औरतें इसे भी हैज़ समझकर नमाज़ छोड़े रखती हैं अतः इस मसले को अच्छी तरह समझना ज़रूरी है :

i. ख़ून हैज़ गाढ़ा, सियाह और किसी क़द्र बदबूदार होता है। जब उसकी मुद्दत ख़त्म होती है तो ख़ाकी या ज़र्द रंग का पानी निकलता है जबकि ख़ून इस्तिहाज़ा पतला और ज़र्द रंग का होता है।

ii. अगर औरत, हैज़ और इस्तिहाज़ा का फ़र्क़ पहचानती है तो वह उसके मुताबिक़ अमल करेगी अर्थात हैज़ आने पर नमाज़ छोड़ देगी और हैज़ के बाद इस्तिहाज़ा के दौरान हर नमाज़ के लिए अलग वुज़ू करके नमाज़ अदा करेगी।

iii. अगर उसे दोनों ख़ूनों की पहचान नहीं है अलबत्ता हैज़ उसे आदत के मुताबिक़ आता है तो वह आदत के दिनों में नमाज़ तर्क करेगी और उसके बाद जो ख़ून आएगा उसे इस्तिहाज़ा समझेगी।

vi. अगर उसे दोनों ख़ूनों की पहचान नहीं है और हैज़ भी एक आदत के मुताबिक़ नहीं आता तो वह अपनी क़रीबी रिश्तेदार औरत (जो स्वभाव और उम्र में उस जैसी हो अर्थात बहन आदि) की आदत के मुताबिक़ अमल करेगी यहां तक कि उसे पहचान हो जाए या उसकी अपनी आदत बन जाए।

2. बुख़ारी, हदीस 304, मुस्लिम हदीस 79।

हज़रत आइशा रज़ि० ने फ़रमाया : "रसूलुल्लाह सल्ल० के ज़माने में हमें हैज़ आया करता था तो हमें रोज़े की क़ज़ा का हुक्म तो दिया जाता मगर नमाज़ की क़ज़ा का हुक्म नहीं दिया जाता था।"[1]

निफ़ास का हुक्म :

बच्चे की पैदाइश के बाद जो ख़ून आता है, उसे निफ़ास कहते हैं। हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० फ़रमाती हैं कि निफ़ास वाली औरतें रसूलुल्लाह सल्ल० के ज़माने में चालीस दिन बैठा करती थीं (नमाज़ आदि नहीं पढ़ती थीं।)[2]

अधिकांश सहाबा रज़ि० और ताबईन रह० के निकट निफ़ास के ख़ून की ज़्यादा से ज़्यादा मुद्दत चालीस दिन है। अगर चालीस रोज़ के बाद भी ख़ून जारी रहे तो अधिकांश विद्वानों के निकट वह ख़ून इस्तिहाज़ा है जिसमें औरत हर नमाज़ के लिए वुज़ू करती है। निफ़ास की कम से कम मुद्दत की कोई हद नहीं।

हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं "निफ़ास की मुद्दत चालीस दिन है या यह कि ख़ून पहले ही बन्द हो जाए।" (बैहेक़ी)

इमाम शाफ़ई रह० फ़रमाते हैं : "अगर औरत को बच्चे के पैदा होने के बाद ख़ून आता ही नहीं तो उस पर ज़रूरी है कि वह ग़ुस्ल करे और नमाज़ पढ़े।"

निफ़ास और हैज़ के ख़ून का हुक्म एक जैसा है अर्थात उन हालात में नमाज, रोज़ा और संभोग मना है। रसूलुल्लाह सल्ल० निफ़ास के दिनों की नमाज़ों की क़ज़ा का हुक्म नहीं देते थे।[3]

---

1. सहीह मुस्लिम, हदीस 335।

2. अबू दाऊद, हदीस 311-312, तिर्मिज़ी हदीस 139, इब्ने माजा हदीस 648। इसे इमाम हाकिम (1/175) और हाफ़िज़ ज़ेहबी रह० ने सहीह, जबकि इमाम नववी रह० ने हसन कहा है।

3. अबू दाऊद, हदीस 312, इसे इमाम हाकिम और ज़ेहबी रह० ने सहीह कहा है।

ग़ुस्ल, वुज़ू और तयम्मुम

ग़ुस्ले जनाबत का तरीक़ा :

हज़रत मैमूना रज़ि० बयान करती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने ग़ुस्ल का इरादा फ़रमाया तो सबसे पहले दोनों हाथ धोए, फिर शर्मगाह को धोया, फिर बायां हाथ, जिससे शर्मगाह को धोया था, ज़मीन पर रगड़ा फिर उसको धोया फिर कुल्ली की और नाक में पानी डाला, फिर चेहरा धोया, फिर कोहनियों तक हाथ धोए फिर सर पर पानी डाला और बालों की जड़ों तक पानी पहुंचाया। तीन बार सर पर पानी डाला, फिर तमाम बदन पर पानी डाला, फिर जहां आपने ग़ुस्ल किया था उस जगह से हटकर पांव धोए।[1]

हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० फ़रमाते हैं : "किसी हदीस में (ग़ुस्ल जनाबत का वुज़ू करते समय) सर के मसह का ज़िक्र नहीं है।" (फ़तहुल बारी)

हज़रत आइशा रज़ि० और हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० रसूलुल्लाह सल्ल० के ग़ुस्ल जनाबत में वुज़ू का ज़िक्र करते हुए फ़रमाते हैं कि आपने सर का मसह नहीं किया बल्कि उस पर पानी डाला। इमाम नसाई ने इस हदीस पर यह अध्याय बांधा है : "जनाबत के वुज़ू में सर के मसह को तर्क करना।"[2]

इमाम अबू दाऊद फ़रमाते हैं : "मैंने इमाम अहमद से सवाल किया कि जुंबी जब (ग़ुस्ल से पहले) वुज़ू करे तो क्या सर का मसह भी करे? आपने फ़रमाया कि वह मसह किस लिए करे जबकि वह अपने सर पर पानी डालेगा?"

हज़रत आइशा रज़ि० ने कहा : "मैं और रसूलुल्लाह सल्ल० एक बर्तन से नहाते और दोनों उससे चुल्लू भर भरकर पानी लेते थे।"[3]

---

1. बुख़ारी, हदीस 249, हदीस 257, 259, 260, 265, 274, 276, 281 व मुस्लिम, हदीस 317।

2. नसाई, हदीस 420 (1/205-206)।

3. बुख़ारी, हदीस 273।

ग़ुस्ल पर्दे में करना चाहिए।[1]

ग़ुस्ल जनाबत का वुज़ू काफ़ी है :

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ग़ुस्ल (जनाबत) के बाद वुज़ू नहीं करते थे।[2]

अन्य ग़ुस्ल :

ग़ुस्ल जनाबत के बाद उन हालात का ज़िक्र किया जाता है जिनमें ग़ुस्ल करना वाजिब, मसनून या मुस्तहब है :

जुमा के दिन ग़ुस्ल :

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«إِذَا جَاءَ أَحَدُكُمُ الْجُمُعَةَ فَلْيَغْتَسِلْ»

"जब तुममें से कोई व्यक्ति नमाज़े जुमा के लिए आए तो उसे ग़ुस्ल करना चाहिए।"[3]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "हर मुसलमान पर हक़ है कि हफ़्ते में एक दिन (जुमा को) ग़ुस्ल करे। इसमें अपना सर धोए और अपना बदन धोए।"[4]

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने

---

1. सहीह बुख़ारी, हदीस 280-281, व सहीह मुस्लिम, हदीस 336-337।

2. तिर्मिज़ी, हदीस 107 व अबू दाऊद, हदीस 250, व नसाई 253, व इब्ने माज़ा, हदीस 1579 से इमाम हाकिम, ज़ेहबी और तिर्मिज़ी ने सहीह कहा है। अर्थात ग़ुस्ल के शुरू में वुज़ू करते थे, उसको काफ़ी जानते और (नमाज़ के लिए) दोबारा वुज़ू नहीं फ़रमाते थे। (सम्पादक) लेकिन उसमें यह सावधानी ज़रूरी है कि दौराने ग़ुस्ल, शर्मगाह को (आगे या पीछे) हाथ न लगे। वरना दोबारा वुज़ू करना ज़रूरी होगा।

3. बुख़ारी, हदीस 277 व मुस्लिम, हदीस 844।

4. बुख़ारी, हदीस 897 व मुस्लिम हदीस 849।

फ़रमाया : "जुमा के दिन हर व्यस्क मुसलमान पर नहाना वाजिब है।"[1]

इब्ने जोज़ी रह० फ़रमाते हैं : जुमा के दिन ग़ुस्ल वाजिब है क्योंकि उसकी अहादीस ज़्यादा सहीह और शक्तिशाली हैं। इब्ने हज़म और अल्लामा शोकाफ़ी रह० ने भी इसी मज़हब को अपनाया है।

मय्यित को ग़ुस्ल देने वाला ग़ुस्ल करे :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति मुर्दे को ग़ुस्ल दे उसे चाहिए कि वह ख़ुद भी नहाए।"[2]

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "तुम पर मय्यित को ग़ुस्ल देने से कोई ग़ुस्ल वाजिब नहीं क्योंकि तुम्हारी मय्यित पाक मरती है नजस नहीं, अतः तुम्हें हाथ धो लेना ही काफ़ी है।"[3]

दोनों हदीसों को मिलाने से मसला यह साबित हुआ कि जो व्यक्ति मय्यित को ग़ुस्ल दे, उसके लिए नहाना मुस्तहब है, ज़रूरी नहीं। अतएवं हज़रत इब्ने उमर रज़ि० फ़रमाते हैं : "हम मय्यित को ग़ुस्ल देते (फिर) हममें से कुछ ग़ुस्ल करते और कुछ न करते।" (बैहेक़ी 1/306) हाफ़िज़ इब्ने हजर ने इसे सहीह कहा है।

नव मुस्लिम ग़ुस्ल करे :

क़ैस बिन आसिम रज़ि० से रिवायत है कि जब वह मुसलमान हुए तो रसूलुल्लाह सल्ल० ने उन्हें हुक्म दिया कि पानी और बेरी के पत्तों के साथ ग़ुस्ल करें।[4]

---

1. बुख़ारी, हदीस 879 व मुस्लिम, हदीस 846।

2. अबू दाऊद, हदीस 3161-3162, तिर्मिज़ी हदीस 994, इब्ने माजा हदीस 1463, इसे इब्ने हिबान (451) और इब्ने हज़म (2/23) ने सहीह कहा है।

3. बैहेक़ी (1/306) इसे हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह और इब्ने हजर ने हसन कहा है।

4. अबू दाऊद, हदीस 355, नसाई (1/109), तिर्मिज़ी हदीस 604, इसे इमाम नववी ने हसन, इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (1/26 हदीस 154-155) और इमाम हिबान (234) ने सहीह कहा है।

ईदैन के दिन ग़ुस्ल :

नाफ़ेअ कहते हैं कि हज़रत इब्ने उमर रज़ि० ईदुल फ़ित्र के दिन ग़ुस्ल किया करते थे।''[1]

हाफ़िज़ इब्ने अब्दुल बर रह० फ़रमाते हैं कि ईदैन के दिन ग़ुस्ल के बारे में रसूलुल्लाह सल्ल० से कोई हदीस साबित नहीं, सहाबा रज़ि० का अमल है। अहले इल्म की एक जमाअत के नज़दीक यह ग़ुस्ल, ग़ुस्ल जुमा पर क़यास करते हुए मुस्तहब है।

बैहेक़ी (3/278) में है, हज़रत अली रज़ि० ने फ़रमाया : ''जुमा, अरफ़ा, क़ुरबानी और ईदुल फ़ित्र के दिन ग़ुस्ल करना चाहिए।''

यह ईदैन के दिन ग़ुस्ल पर सबसे अच्छी दलील है। इमाम नववी फ़रमाते हैं : ''इस मसले में एतेमाद हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० के असर पर है, और जुमा के ग़ुस्ल पर अनुमान इसकी बुनियाद है।''

अहराम का ग़ुस्ल :

हज़रत ज़ैद बिन साबित रज़ि० से रिवायत है कि हज का अहराम बांधते समय रसूलुल्लाह सल्ल० ने ग़ुस्ल फ़रमाया।[2]

मक्का में दाख़िल होने का ग़ुस्ल :

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० मक्का में दाख़िल होते समय ग़ुस्ल करते थे।''[3]

मिस्वाक का बयान :

हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि० फ़रमाते हैं : ''रसूलुल्लाह सल्ल० जब रात को तहज्जुद के लिए उठते तो मिस्वाक फ़रमाते।''[4]

---

1. मोत्ता इमाम मालिक (1/177) इसकी सनद असहुल असानीद है।
2. तिर्मिज़ी , हदीस 830,। इमाम तिर्मिज़ी ने इसे हसन कहा है।
3. बुख़ारी, हदीस 1553, हदीस 1573, व मुस्लिम हदीस 1259।
4. बुख़ारी, हदीस 245, वल जुमा, अध्याय मिस्वाक, हदीस 889, 1136 व मुस्लिम हदीस 255।

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० फ़रमाते हैं : "नबी सल्ल० रात को हर दो रकअत के बाद मिस्वाक करते।[1]

सय्यदा आइशा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "मिस्वाक मुंह के लिए पाकी का सबब और अल्लाह की रज़ामंदी का ज़रिया है।"[2]

सय्यदा उम्मे सलमा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब भी मेरे पास जिब्रील आते तो मुझे मिस्वाक करने का हुक्म करते थे। मुझे ख़तरा पैदा हुआ कि अपने मुंह की अगली साइड न छील लूं।[3]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अगर मैं अपनी उम्मत के लिए मुश्किल न जानता तो अपनी उम्मत को इशा की नमाज़ में विलम्ब करने और हर नमाज़ से पहले मिस्वाक करने का हुक्म देता।"[4]

वुज़ू का बयान

नींद से जाग कर पहले हाथ धोएं :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«وَإِذَا اسْتَيْقَظَ أَحَدُكُمْ مِنْ نَوْمِهِ فَلْيَغْسِلْ يَدَهُ قَبْلَ أَنْ يُدْخِلَهَا فِيْ وَضُوْئِهِ فَإِنَّ أَحَدَكُمْ لَا يَدْرِيْ أَيْنَ بَاتَتْ يَدُهُ»

"जब तुम नींद से जागो तो अपना हाथ पानी के बर्तन में न डालो जब

---

1. इब्ने माजा, हदीस 228, इसे हाकिम (1/145), ज़ेहबी और इब्ने हजर ने सहीह कहा है।

2. नसाई, हदीस 5 इसे इमाम नववी और इब्ने हिबान ने सहीह कहा है।

3. बैहेक़ी (7/49) इमाम बुख़ारी ने इस हदीस को हसन कहा है।

4. बुख़ारी, हदीस 887, व मुस्लिम, हदीस 252। ग़ालिबन इसी श्रेष्ठता को हासिल करने के लिए आप क़यामुल्लैल की हर दो रकअत के बाद मिस्वाक फ़रमाते थे। (इब्ने माजा/228) जबकि उम्मत के लिए पसन्द तो इस बात को किया कि वह हर फ़र्ज़ नमाज़ से पहले मिस्वाक करे लेकिन परिश्रम के डर से हुक्म नहीं दिया।

तक कि उसको (तीन बार) न धो लो क्योंकि तुम नहीं जानते कि इस हाथ ने रात कहां गुज़ारी।"[1]

मतलब यह है कि नींद से जाग कर हाथ पहुंचों तक तीन बार धोकर फिर उन्हें पानी के बर्तन में डालना चाहिए। हो सकता है रात को हाथ बदन के किसी हिस्से को लग कर पलीद हो गए हों।

तीन बार नाक झाड़ें :

सय्यदा अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम नींद से बेदार हो (फिर वुज़ू का इरादा करो) तो (पानी चढ़ाकर) तीन बार नाक झाड़ो क्योंकि शैतान नाक के बांसे में रात गुज़ारता है।[2]

सोने वाले की नाक के बांसे में शैतान के रात गुज़ारने की असलियत और हक़ीक़त अल्लाह ही बेहतर जानता है। हमारा फ़र्ज़ ईमान लाना है कि वास्तव में शैतान रात गुज़ारता है।

मसनून वुज़ू की पूर्ण तर्कीब :

(1) वुज़ू के शुरू में "बिस्मिल्लाह" ज़रूर पढ़नी चाहिए क्योंकि रसूलुल्लाहसल्ल० ने सहाबा किराम रज़ि० से फ़रमाया : "बिस्मिल्लाह" कहते हुए वुज़ू करो।"[3]

स्पष्ट रहे कि वुज़ू की शुरुआत के समय केवल "बिस्मिल्लाह" कहना चाहिए। "अर्रहमानिर्रहीम" के शब्दों की वृद्धि सुन्नत से साबित नहीं।[4]

---

1. बुख़ारी, हदीस 162, व मुस्लिम हदीस 278। तीन बार धोने का ज़िक्र मुस्लिम की रिवायत में है।

2. बुख़ारी, हदीस 3295, व मुस्लिम हदीस 238।

3. नसाई, हदीस 78, इब्ने ख़ुज़ैमा हदीस 144। नववी ने कहा है कि इसकी सनद पक्की है। इससे साबित हुआ कि वुज़ू के शुरू में "बिस्मिल्लाह" पढ़नी चाहिए।

4. इसका यह मतलब नहीं है कि किताब लिखने वाले को पूरी (बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम) से कोई बैर या बुग़्ज़ है बल्कि यह इसकी सुन्नत से गहरी मुहब्बत की निशानी है कि जितना मुर्शिदे आज़म ने बताया उतना ही पढ़ा जाए वल्लाहु आलम।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति वुज़ू के शुरू में अल्लाह का नाम नहीं लेता उसका वुज़ू नहीं।"[1]

(2) रसूलुल्लाह सल्ल० सल्ल० जूती पहनने, कंघी करने, पाकी करने और सारे कामों में दाईं तरफ़ से शुरू करना पसन्द फ़रमाते।[2]

(3) फिर दोनों हाथ पुंहचों तक तीन बार धोएं।[3]

(4) हाथों को धोते समय हाथों की उंगलियों के बीच ख़िलाल करें।[4]

(5) फिर एक चुल्लू लेकर आधे से कुल्ली करें और आधा नाक में डालें और नाक को बाएं हाथ से झाड़ें। यह अमल तीन बार करें।[5]

(6) फिर तीन बार मुंह धोएं।[6]

(7) फिर एक चुल्लू लेकर उसे ठोढ़ी के नीचे दाख़िल करके दाढ़ी का ख़िलाल करें।[7]

(8) फिर दायां हाथ कोहनी तक तीन बार धोएं फिर बायां हाथ कोहनी तक तीन बार धोएं।[8]

(9) फिर सर का मसह करें। दोनों हाथ सर के अगले हिस्से से शुरू करके गुद्दी तक ले जाएं। फिर पीछे से आगे उसी जगह ले आएं जहां से मसह शुरू किया था।[9]

(10) आपने सर का एक बार मसह किया।[10]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 101, इसे हाफ़िज़ मुंज़िरी आदि ने गवाहों की बिना पर हसन कहा है। अगर बिस्मिल्लाह भूल गई और वुज़ू के दौरान याद आई तो फ़ौरन पढ़ ले वरना वुज़ू दोबारा करने की ज़रूरत नहीं क्योंकि भूल माफ़ है।

2. बुख़ारी, हदीस 168, मुस्लिम हदीस 268।

3. बुख़ारी, हदीस 159, व सहीह मुस्लिम हदीस 268।

4. अबू दाऊद, हदीस 142, तिर्मिज़ी हदीस 38, इसे तिर्मिज़ी, हाकिम (1/147-148) और नववी ने सहीह कहा है।

5. बुख़ारी, हदीस 191, हदीस 199, व मुस्लिम हदीस 235।

6. बुख़ारी, हदीस 185-186, 192, व सहीह मुस्लिम हदीस 235।

7. तिर्मिज़ी हदीस 31, इसे इब्ने हिबान और इब्ने ख़ुज़ैमा ने सहीह कहा है।

8. बुख़ारी, हदीस 1934, व मुस्लिम हदीस 236।

9. सहीह बुख़ारी, हदीस 185, व सहीह मुस्लिम हदीस 235।

10. बुख़ारी, हदीस 186, व सहीह मुस्लिम हदीस 235।

(11) फिर कानों का मसह इस तरह करें कि शहादत की उंगलियां दोनों कानों के सुराख़ों से गुज़ार कर कानों की पुश्त पर अंगूठों के साथ मसह करें।[1]

(12) फिर दायां पांव टख़नों तक तीन बार धोएं और बायां पांव भी टख़नों तक तीन बार धोएं।[2]

(13) जब वुज़ू करें तो हाथों और पांव की उंगलियों का ख़िलाल करें।[3]

(14) मस्तूरद बिन शद्दाद रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को वुज़ू करते हुए देखा कि आप अपने पांव की उंगलियों का ख़िलाल हाथ की छंगली (छोटी उंगली) से कर रहे थे।[4]

(15) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० ने फ़रमाया कि अगर घाव पर पट्टी बंधी हुई हो तो वुज़ू करते समय पट्टी पर मसह कर ले और इर्द गिर्द को धो ले।[5]

चेतावनी :

कुल्ली और नाक में पानी डालने के लिए अलग अलग पानी लेने का ज़िक्र जिस हदीस में है उसे इमाम अबू दाऊद, (हदीस 139) इमाम नववी और हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० ने ज़ईफ़ कहा है। इमाम नववी और इमाम इब्ने क़य्यिम रह० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० के वुज़ू का तरीक़ा चुल्लू से आधा पानी मुंह में और आधा नाक में डालना है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "कानों का संबंध सर से है।" (दार क़ुतनी 1/98) से इब्ने जोज़ी रह० आदि ने सहीह कहा है। इसका मतलब यह है कि कानों के लिए नए पानी की ज़रूरत नहीं। कानों के मसह के लिए नए पानी लेने वाली रिवायत को हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० ने शाज़ कहा है।[6]

---

1. इब्ने माजा, हदीस 439, तिर्मिज़ी हदीस 36, इसे इब्ने ख़ुज़ैमा (1/77 हदीस 148) ने सहीह कहा है।

2. बुख़ारी, हदीस 1934, व मुस्लिम हदीस 226।

3. तिर्मिज़ी, हदीस 39, इब्ने माजा, हदीस 447। इसे तिर्मिज़ी ने हसन कहा है।

4. अबू दाऊद, हदीस 148, तिर्मिज़ी हदीस 40, इसे इमाम मालिक ने हसन कहा है।

5. बैहेक़ी (1/228) इमाम बैहेक़ी ने इसे सहीह कहा है।

6. और यह अर्थ भी हो सकता है कि कानों का हुक्म चेहरे वाला नहीं कि उन्हें धोया जाए बल्कि उनका हुक्म सर वाला है अर्थात उनका मसह किया जाए।

हाफ़िज़ इब्ने क़य्यिम रह० फ़रमाते हैं कि (गुद्दी के नीचे) गर्दन के (अलग) मसह के बारे में कदापि कोई सहीह हदीस नहीं है। गर्दन के मसह की रिवायत के मुताल्लिक़ इमाम नववी फ़रमाते हैं : "यह हदीस सर्व सम्मति से ज़ईफ़ है।"

वुज़ू के बाद की दुआएं :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया जो व्यक्ति पूरा वुज़ू करे और फिर कहे :

«أَشْهَدُ أَنْ لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللّٰهُ وَحْدَهُ لاَ شَرِيكَ لَهُ، وَأَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهُ وَرَسُولُهُ»

"मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई सच्चा उपास्य नहीं। वह अकेला है। उसका कोई शरीक नहीं और मैं गवाही देता हूं कि मुहम्मद सल्ल० अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं।" तो उसके लिए जन्नत के आठों दरवाज़े खोल दिए जाते हैं कि जिससे चाहे दाख़िल हो।[1]

अबू दाऊद (तहारत, हदीस 170) की एक रिवायत में इस दुआ को आसमान की तरफ़ नज़र उठाकर पढ़ने का ज़िक्र है मगर यह रिवायत सही नहीं, इसमें अबू अक़ील का चचाज़ाद भाई अज्ञात है।

वुज़ू के बाद यह दुआ भी पढ़ें :

«سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ وَبِحَمْدِكَ، أَشْهَدُ أَنْ لاَ إِلٰهَ إِلاَّ أَنْتَ، أَسْتَغْفِرُكَ وَأَتُوبُ إِلَيْكَ»

"ऐ अल्लाह! तू अपनी समस्त प्रशंसाओं के साथ (हर बुराई से) पाक है मैं गवाही देता हूं कि तेरे सिवा कोई सच्चा उपास्य नहीं है मैं तुझसे माफ़ी मांगता हूं और तेरे सामने तौबा करता हूं।"[2]

---

1. सहीह मुस्लिम, हदीस 234।

2. नसाई, इसे इमाम हाकिम, हाफ़िज़ ज़ेहबी और इब्ने हजर ने सहीह कहा है। तिर्मिज़ी की रिवायत में दुआ "अल्लाहुम्मजअलनी मिनत्तव्वाबीन" भी मज़्कूर है मगर स्वयं उन्होंने इसे मुज़तरिब (ज़ईफ़ की एक क़िस्म) क़रार दिया है।

वुज़ू की गढ़ी हुई दुआएं :

रसूलुल्लाह सल्ल० की सुन्नत से वुज़ू के शुरू में "बिस्मिल्लाह" और बाद में शहादतैन का पढ़ना साबित है। लेकिन कुछ लोग वुज़ू में हर अंग धोते समय एक एक दुआ पढ़ते हैं और वह दुआएं नमाज़ की प्रचलित किताबों में पाई जाती हैं। स्पष्ट हो कि ये दुआएं सुन्नत पाक और सहाबा किराम रज़ि० के अमल से साबित नहीं हैं। अल्लाह तआला ने जब अपने रसूल सल्ल० पर दीन मुकम्मल कर दिया तो फिर दीनी और शरई मामलों में कमी बेशी करना किसी उम्मती के लिए कदापि जाइज़ नहीं है।

इमाम नववी रह० फ़रमाते हैं : "हर अंग के लिए ख़ास अज़्कार के बारे में रसूलुल्लाह सल्ल० से कोई चीज़ साबित नहीं है।"

वुज़ू के अन्य मसाइल :

वुज़ू के अंगों का दो दो बार और एक एक बार धोना भी आया है। नबी सल्ल० और सहाबा किराम रज़ि० का अधिकांश अमल तीन तीन बार धोने पर रहा है। इब्ने हज़म रह० फ़रमाते हैं कि सब उलमा का मत है कि अंग एक एक बार धोना भी काफ़ी है।

एक आराबी ने रसूलुल्लाह सल्ल० की ख़िदमत में हाज़िर होकर वुज़ू की कैफ़ियत मालूम की तो आपने उसे अंगों का तीन तीन बार धोना सिखाया और फ़रमाया : "इस तरह कामिल वुज़ू है। फिर जो व्यक्ति इस (तीन तीन बार धोने) पर ज़्यादा करे तो उसने (तर्के सुन्नत की बिना पर) बुरा किया और (मसनून हद से आगे बढ़कर) ज़्यादती की और (रसूलुल्लाह सल्ल० का विरोध करके अपनी जान पर) ज़ुल्म किया।"[1]

मसनून वुज़ू से गुनाहों की माफ़ी :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिस समय मोमिन बन्दा वुज़ू शुरू करता है फिर कुल्ली करता है तो उसके मुंह के गुनाह निकल (झड़) जाते हैं। फिर जिस समय नाक झाड़ता है उसकी नाक के गुनाह निकल जाते हैं। फिर

1. अबू दाऊद, हदीस 135, नसाई (1/88) इसे इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा और इमाम नववी ने सही, जबकि हाफ़िज़ इब्ने हजर ने पक्का कहा है।

जिस समय चेहरा धोता है उसके चेहरे के गुनाह निकल जाते हैं। यहां तक कि उसकी आंखों की पुतलियों के नीचे से भी गुनाह निकल जाते हैं। चेहरा धोते समय गुनाह दाढ़ी के किनारों से भी गिरते हैं और जिस समय वह हाथ धोता है तो उसके दोनों हाथों से गुनाह निकल जाते हैं यहां तक कि दोनों हाथों के नाख़ूनों के नीचे से भी निकल जाते हैं। फिर जिस समय मसह करता है तो उसके सर से गुनाह निकल जाते हैं, यहां तक कि दोनों कानों से भी गुनाह निकल जाते हैं। फिर जिस समय पांव धोता है तो उसके दोनों पांव से गुनाह निकल जाते हैं, यहां तक कि दोनों पांव के नाख़ूनों के नीचे से भी निकल जाते हैं। फिर जब उसने नमाज़ पढ़ी, अल्लाह की प्रशंसा, स्तुति और बुज़ुर्गी बयान की और अपना दिल अल्लाह की याद के लिए फ़ारिग़ किया तो वह गुनाहों से इस तरह (पाक होकर) लौटता है जैसे वह उस दिन (पाक) था जब उसे उसकी मां ने जना था।"[1]

एक व्यक्ति ने रसूलुल्लाह सल्ल० से पूछा कि आप अपनी उम्मत को (मैदाने हश्र में) दूसरी उम्मतों के (असंख्य लोगों के) बीच किस तरह पहचानेंगे? आपने फ़रमाया मेरे उम्मती वुज़ू के असर से सफ़ेद (नूरानी) चेहरे और सफ़ेद (नूरानी) हाथ पांव वाले होंगे। इस तरह उनके सिवा और कोई नहीं होगा।[2]

ख़ुश्क एड़ियों को अज़ाब :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से रिवायत है कि हम रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ मक्के से मदीने की तरफ़ लौटे। रास्ते में हमें पानी मिला। हममें से एक जमाअत ने नमाज़े अस्र के लिए जल्दबाज़ी में वुज़ू किया। पीछे से हम भी पहुंच गए, (देखा कि) उनकी एड़ियां ख़ुश्क थीं उनको पानी नहीं पहुंचा था। रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "(ख़ुश्क) एड़ियों के लिए आग से ख़राबी है। तो वुज़ू पूरा किया करो।"[3]

इस हदीस से मालूम हुआ कि वुज़ू बड़ी सावधानी से, संवारकर और पूरा

---

1. मुस्लिम, हदीस 832।
2. मुस्लिम, हदीस 247-248।
3. सहीह मुस्लिम, हदीस 241।

करना चाहिए। अंगों को ख़ूब अच्छी तरह और तीन तीन बार धोना चाहिए ताकि कण बराबर जगह भी ख़ुश्क न रहे। एक व्यक्ति ने वुज़ू किया और अपने क़दम पर नाख़ुन के बराबर जगह ख़ुश्क छोड़ दी। नबी सल्ल० ने उसे देखकर फ़रमाया : "वापस जा और अच्छी तरह वुज़ू कर।"[1]

वुज़ू से दर्जों की बुलन्दी :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया वुज़ू आधा ईमान है।[2]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि मैंने अपने हबीब मुहम्मद सल्ल० को यह फ़रमाते हुए सुना : "(जन्नत में) मोमिन का ज़ेवर (नूर) वहां तक पहुंचेगा जहां तक वुज़ू का पानी पहुंचेगा।"[3]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "क्या मैं तुम्हें वह चीज़ न बताऊं कि जिसके कारण अल्लाह तआला गुनाहों को दूर और दर्जात को बुलन्द करता है?" सहाबा रज़ि० ने अर्ज़ किया : ऐ अल्लाह के रसूल (सल्ल०! इरशाद फ़रमाएं) आपने फ़रमाया : "परिश्रम (बीमारी या सर्दी) के समय पूरी और संवार कर वुज़ू करना, अधिकता से मस्जिदों की तरफ़ जाना और नमाज़ के बाद नमाज़ का इन्तिज़ार करना। (गुनाहों को दूर करता और दर्जात को बुलन्द करता है।)"[4]

तहीयतुल वुज़ू से जन्नत अनिवार्य :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति वुज़ू करे और ख़ूब संवार कर अच्छा वुज़ू करे। फिर खड़ा होकर दिल और मुंह से (ज़ाहिरी व बातिनी तौर पर) मुतवज्जह होकर दो रकअत (नफ़्ल) नमाज़ अदा करे तो उसके लिए जन्नत अनिवार्य हो जाती है।"[5]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने नमाज़े फ़ज्र के समय बिलाल रज़ि० से फ़रमाया : "ऐ बिलाल! मेरे सामने अपना वह

1. सहीह मुस्लिम, हदीस 243।
2. सहीह मुस्लिम, हदीस 223।
3. मुस्लिम, हदीस 250।
4. मुस्लिम, हदीस 251।
5. मुस्लिम, हदीस 234।

अमल बयान कर जो तूने इस्लाम में किया और जिस पर तुझे सवाब की बहुत ज़्यादा उम्मीद है क्योंकि मैंने अपने आगे जन्नत में तेरी जूतियों की आवाज़ सुनी है।" बिलाल रज़ि० ने अर्ज़ किया : "मेरे नज़दीक जिस अमल पर मुझे (सवाब की) बहुत ज़्यादा उम्मीद है वह यह है कि मैंने रात या दिन में जब भी वुज़ू किया तो उस वुज़ू के साथ जिस क़द्र नफ़्ल नमाज़ मेरे मुक़द्दर में थी ज़रूर पढ़ी (अर्थात हर वुज़ू के बाद नवाफ़िल पढ़े।)"[1]

एक वुज़ू से कई नमाज़ें :

हज़रत बुरीदा रज़ि० से रिवायत है कि फ़तह मक्का के दिन रसूलुल्लाह सल्ल० ने कई नमाज़ें एक वुज़ू से पढ़ीं और मौज़ों में मसह भी किया। हज़रत उमर रज़ि० ने अर्ज़ किया : ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल०! आज के दिन आपने वह काम किया जो आप पहले नहीं किया करते थे। आपने फ़रमाया : "ऐ उमर मैंने ऐसा जान बूझकर किया। (ताकि लोगों को एक वुज़ू से कई नमाज़ें पढ़ने का सबाब मालूम हो जाए।)"[2]

दूध पीने से कुल्ली करना :

बेशक रसूलुल्लाह सल्ल० ने दूध पिया फिर कुल्ली की और फ़रमाया इसमें चिकनाई है।[3]

आपने बकरी का शाना खाया उसके बाद नमाज़ पढ़ी और दोबारा वुज़ू न किया।[4]

आपने सत्तू खाए फिर कुल्ली करके नमाज़ पढ़ी और वुज़ू नहीं किया।[5]

मौज़ों पर मसह करने का बयान :

हज़रत मुग़ीरा रज़ि० कहते हैं :

---

1. बुख़ारी, हदीस 1149, व मुस्लिम हदीस 2458।
2. मुस्लिम, हदीस 277। मालूम हुआ कि हर नमाज़ के लिए वुज़ू फ़र्ज़ नहीं बल्कि श्रेष्ठ है। (सम्पादक)
3. बुख़ारी, हदीस 211, व मुस्लिम हदीस 358।
4. बुख़ारी, हदीस 207, व सहीह मुस्लिम हदीस 354।
5. बुख़ारी, हदीस 209।

«كُنْتُ مَعَ النَّبِيِّ ﷺ فِي سَفَرٍ فَأَهْوَيْتُ لأَنْزِعَ خُفَّيْهِ فَقَالَ 'دَعْهُمَا فَإِنِّي أَدْخَلْتُهُمَا طَاهِرَتَيْنِ' فَمَسَحَ عَلَيْهِمَا»

"एक सफ़र में, मैं नबी सल्ल० के साथ था। मैंने वुज़ू के समय चाहा कि आपके दोनों मौज़े उतार दूं। आपने फ़रमाया : "इन्हें रहने दो मैंने उन्हें पाकी की हालत में पहना था फिर आपने उन पर मसह किया।"[1]

शुरीह बिन हानी फ़रमाते हैं : "मैंने हज़रत अली रज़ि० से मौज़ों पर मसह करने की मुद्दत के बारे में पूछा तो हज़रत अली रज़ि० ने फ़रमाया : "रसूलुल्लाह सल्ल० ने मुसाफ़िर के लिए (मसह की मुद्दत) तीन दिन रात और मुक़ीम के लिए एक दिन रात मुक़र्रर फ़रमाई है।"[2]

सफ़वान बिन असाल रज़ि० रिवायत करते हैं कि जब हम सफ़र में होते तो रसूलुल्लाह सल्ल० हमें हुक्म देते कि हम अपने मौज़े तीन दिन और तीन रातों तक पाख़ाना, पेशाब या सोने की वजह से न उतारें (बल्कि उन पर मसह करें) हां जनाबत की सूरत में (मौज़े उतारने का हुक्म देते)।[3]

इस हदीस से मालूम हुआ कि जुंबी होना मसह की मुद्दत को ख़त्म कर देता है। इसलिए ग़ुस्ल जनाबत में मौज़े उतारने चाहिएं अलबत्ता पेशाब पाख़ाना और नींद के बाद मौज़े नहीं उतारने चाहिएं बल्कि निर्धारित अवधि तक उन पर मसह कर सकते हैं।

जुराबों पर मसह करने का बयान :

हज़रत सोबान रज़ि० रिवायत करते हैं :

«أَمَرَهُمْ أَنْ يَمْسَحُوا عَلَى الْعَصَائِبِ وَالتَّسَاخِينِ»

---

1. बुख़ारी, हदीस 206, मौज़ों से मुराद नर्म चमड़े की जुराबें हैं।

2. मुस्लिम, हदीस 276, इमाम नववी, औज़ाई और इमाम अहमद कहते हैं कि मसह की मुद्दत मौज़े पहनने के बाद वुज़ू के टूट जाने से नहीं बल्कि पहला मसह करने से शुरू होती है अर्थात अगर एक व्यक्ति नमाज़ फ़ज्र के लिए वुज़ू करता है और मौज़े या जुराबें पहन लेता है तो अगले दिन की नमाज़ फ़ज्र तक वह मसह कर सकता है। (सम्पादक)

3. तिर्मिज़ी, हदीस 96, नसाई (1/83-84, 98) इसे इमाम तिर्मिज़ी, इब्ने ख़ुज़ैमा, इब्ने हिबान और नववी ने सहीह कहा है।

"रसूलुल्लाह सल्ल० ने वुज़ू करते समय सहाबा को पगड़ियों और जुराबों पर मसह करने का हुक्म दिया।"[1]

सहाबा रज़ि० का जुराबों पर मसह करना :

हज़रत उक़बा बिन अम्र अबू मसऊद अंसारी रज़ि० ने अपनी जुराबों पर अपनी चप्पल के तस्मों समेत मसह किया। (बैहेक़ी 1/258) अम्र बिन जरीस रज़ि० फ़रमाते हैं हज़रत अली रज़ि० ने पेशाब किया फिर वुज़ू करते हुए आपने अपनी जुराबों पर जो, जूतों (चप्पलों) में थीं मसह किया। (इब्ने अबी शैबा व इब्नुल मुंज़िरी) इब्ने हज़म रह० ने 12 सहाबा किराम रज़ि० से जुराबों पर मसह करना ज़िक्र किया है। जिनमें अब्दुल्लाह बिन मसऊद, साअद बिन अबी वक़ास और अम्र बिन हरीस रज़ि० भी शामिल हैं। इसी तरह सहल बिन साअद रज़ि० जुराबों पर मसह किया करते थे। (इब्ने अबी शैबा 1/173) अबू उमामा रज़ि० भी जुराबों पर मसह किया करते थे। (इब्ने अबी शैबा 1/173) और अनस बिन मालिक रज़ि० ने वुज़ू करते हुए अपनी टोपी और सियाह रंग की जुराबों पर मसह किया और नमाज़ पढ़ी। (बैहेक़ी 1/285) इब्ने क़दामा कहते हैं कि सहाबा किराम रज़ि० का जुराबों पर मसह के जवाज़ पर सहमति है। (मुगनी, इब्ने क़दामा 1/332 मसला 426)

अरब शब्दकोष से "जोरब" का अर्थ :

लुगत अरब की विश्वसनीय किताब क़ामूस (1/46) में है हर वह चीज़ जो पांव पर पहनी जाए जोरब है। "ताजुल उरूस" में है जो चीज़ लिफ़ाफ़े की तरह पांव पर पहन लें वह जोरब है। अल्लामा ऐनी लिखते हैं जोरब बटे हुए ऊन से बनाई जाती है और पांव में टख़ने से ऊपर तक पहनी जाती है। आरिज़ा अलहौज़ी में हदीस के व्याख्याकार इमाम अबूबक्र इब्ने अरबी रह० लिखते है। जोरब वह चीज़ है जो पांव को ढांपने के लिए ऊन की बनाई जाती है। उमदतुर्रिआया में है जुराबें रूई अर्थात सूत की होती हैं और बालों की भी बनती हैं। ग़ायतुल मक़सूद में है जुराबें चमड़े की, सूफ़ की और सूत की भी

1. अबू दाऊद, हदीस 146। इसे इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है। हर उस जुराब पर मसह करना सही है जो : 1. मोटी हो अर्थात पांव नज़र न आएं, 2. सातिर हो अर्थात फटी हुई न हो।

होती हैं।

अतः साबित हुआ कि जोरब लिफ़ाफ़े या लिबास को कहते हैं वह लिबास चाहे चर्मी हो, सूती हो या ऊनी हम उस पर मसह कर सकते हैं।

पगड़ी पर मसह :

हज़रत अम्र बिन उमैया रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने पगड़ी पर मसह फ़रमाया।[1]

इसी तरह बिलाल रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने पगड़ी पर मसह किया।[2]

वुज़ू तोड़ने वाली चीज़ें :

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«لَا تُقْبَلُ صَلٰوةٌ بِغَيْرِ طُهُوْرٍ»

"वुज़ू के बिना नमाज़ क़ुबूल नहीं की जाती।"[3]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिस व्यक्ति का वुज़ू टूट जाए जब तक वह वुज़ू न करे अल्लाह तआला उसकी नमाज़ क़ुबूल नहीं करता।"[4]

मज़ी निकलने से वुज़ू :

हज़रत मिक़दाद रज़ि० ने रसूलल्लाह सल्ल० से मालूम किया कि मज़ी निकलने से ग़ुस्ल वाजिब होता है या नहीं? तो आपने फ़रमाया : "मज़ी निकलने से ग़ुस्ल वाजिब नहीं होता अपना लिंग धो डाल और वुज़ू कर।[5]

---

1. बुख़ारी, हदीस 205।
2. मुस्लिम, हदीस 275।
3. मुस्लिम, हदीस 224।
4. बुख़ारी, हदीस 135, व मुस्लिम, हदीस 225।
5. बुख़ारी, हदीस 132, वल वुज़ू 178, 269, व मुस्लिम, हदीस 303।

शर्मगाह को हाथ लगाने से वुज़ू :

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति शर्मगाह को हाथ लगाए तो वह वुज़ू करे।"[1]

नींद से वुज़ू :

हज़रत अली रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "दोनों आंखें, सुरीन की सरबन्द (तस्मा) हैं। अतः जो व्यक्ति सो जाए उसे चाहिए कि दोबारा वुज़ू करे।[2]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० फ़रमाते हैं कि जो व्यक्ति सो जाए उस पर वुज़ू वाजिब है।[3]

हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं : "असहाबे रसूल सल्ल० नमाज़े इशा के इन्तिज़ार में बैठे बैठे ऊंघते थे और वुज़ू किए बिना नमाज़ अदा कर लेते थे।"[4]

हवा निकलने से वुज़ू :

रसूलुल्लाह सल्ल० के सामने एक ऐसे व्यक्ति की हालत बयान की गई जिसे ख़्याल आया कि नमाज़ में उसकी हवा निकली है तो नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "नमाज़ उस समय तक न तोड़े जब तक (हवा निकलने की) आवाज़ न सुन ले या उसे बदबू महसूस हो।"[5]

---

1. मोत्ता इमाम मालिक, 1/42, अबू दाऊद हदीस 181, इसे इमाम तिर्मिज़ी, हदीस 82, ने हसन सहीह कहा है। यह हुक्म तब है जब कपड़े के बिना सीधी तरह हाथ लगे।

2. अबू दाऊद, हदीस 203, इब्ने माजा हदीस 277। इसे इब्ने सलाह और इमाम नववी ने हसन कहा है।

3. मुसनद अली बिन जाअद, इसकी सनद हसन है।

4. सहीह मुस्लिम, हदीस 376। अर्थात टेक लगाकर सोने से वुज़ू टूटेगा, बैठे बैठे ऊंघने से नहीं।

5. बुख़ारी, हदीस 137। इस हदीस से मालूम हुआ कि जब तक हवा निकलने का पक्का यक़ीन न हो जाए वुज़ू नहीं टूटता अतः जिसे पेशाब की बूंदों या वहम की बीमारी हो उसे भी जान लेना चाहिए कि वुज़ू एक हक़ीक़त है, एक यक़ीन है यह यक़ीन से ही टूटता है। सन्देह या वहम से नहीं।

क़ै, नकसीर और वुज़ू :

क़ै या नकसीर आने से वुज़ू टूट जाने वाली रिवायत को, जो बलूग़ुल मुराम और इब्ने माजा (रक़म 1221) में है। इमाम अहमद और अन्य मुहद्दिसीन ने ज़ईफ़ कहा है बल्कि इस सिलसिले की तमाम रिवायात सख़्त ज़ईफ़ हैं। अतः "बराअत अस्लिया" पर अमल करते हुए (यह कहा जा सकता है कि) ख़ून निकलने से वुज़ू फ़ासिद नहीं होता। इसकी पुष्टि उस घटना से भी होती है जो ग़ज़वा रिक़ाअ में पेश आई जब एक अंसारी सहाबी रात को नमाज़ पढ़ रहे थे किसी दुश्मन ने उन पर तीन तीर चलाए जिनकी वजह से वह सख़्त घायल हो गए और उनके शरीर से ख़ून बहने लगा मगर इसके बावजूद वह अपनी नमाज़ में व्यस्त रहे।[1]

यह हो ही नहीं सकता कि रसूलुल्लाह सल्ल० को इस घटना का पता न हुआ हो या आप को पता हुआ और आपने उन्हें नमाज़ लौटाने या ख़ून बहने से वुज़ू टूट जाने का मसला न बताया मगर हम तक यह ख़बर न पहुंची हो।

इसी तरह जब हज़रत उमर रज़ि० घायल किए गए तो आप इसी हालत में नमाज़ पढ़ते रहे यद्यपि आपके शरीर से ख़ून जारी था।[2]

इससे मालूम हुआ कि ख़ून के बहने से वुज़ू टूटता नहीं है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अगर नमाज़ में वुज़ू टूट जाए तो नाक पर हाथ रख कर लौटो, वुज़ू करो और फिर नमाज़ पढ़ो।"[3]

तयम्मुम का बयान

पानी न मिलने की सूरत में पाकी की नीयत से पाक मिट्टी का इरादा करके उसे हाथों और मुंह पर मलना तयम्मुम कहलाता है।

पानी न मिलने की कई सूरतें हैं जैसे मुसाफ़िर को सफ़र में पानी न मिले। या पानी के स्थान तक पहुंचने पर नमाज़ के चले जाने का ख़तरा हो

---

1. अबू दाऊद, हदीस 198। इसे इमाम हाकिम (1/156) और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।
2. मोत्ता इमाम मालिक, (1/39) व बैहेक़ी (1/357)
3. अबू दाऊद, हदीस 1114। इसे हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

या वुज़ू करने से मरीज़ को मर्ज़ की ज़्यादती का ख़ौफ़ हो या पानी हासिल करने में जान का डर हो। जैसे घर में पानी नहीं है बाहर करफ़्यू लगा है या पानी लाने में किसी दुश्मन या दरिन्दे से जान का ख़तरा हो तो ऐसी सूरत में हम तयम्मुम कर सकते हैं चाहे यह मजबूरी क़ायम रहें तयम्मुम भी बदस्तूर जाइज़ रहेगा।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«اَلصَّعِيْدُ الطَّيِّبُ وَضُوْءُ الْمُسْلِمِ وَلَوْ إِلٰى عَشْرِ سِنِيْنَ»

"पाक मिट्टी मुसलमानों का वुज़ू है यद्यपि दस वर्ष पानी न पाए।"[1]

जनाबत की हालत में तयम्मुम :

हज़रत इमरान रज़ि० रिवायत करते हैं कि हम रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ सफ़र में थे। आपने लोगों को नमाज़ पढ़ाई। जब नमाज़ से फिरे तो अचानक आपकी नज़र एक आदमी पर पड़ी जो लोगों से अलग बैठा हुआ था और उसने लोगों के साथ नमाज़ नहीं पढ़ी थी। रसूलुल्लाह सल्ल० ने उससे पूछा : "ऐ फ़लां! लोगों के साथ नमाज़ पढ़ने से तुझे किस चीज़ ने रोका?" उसने कहा मुझे जनाबत पहुंची और पानी न मिल सका। आपने फ़रमाया : "तुझ पर मिट्टी (से तयम्मुम करना) लाज़िम है। अतः वह तेरे लिए काफ़ी है।"[2]

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० फ़रमाते हैं कि सर्दी का मौसम था एक आदमी को ग़ुस्ल जनाबत की ज़रूरत पेश आई, उसने इस बारे में मालूम किया तो उसे ग़ुस्ल करने को कहा गया। उसने ग़ुस्ल किया जिससे उसकी मौत हो गई। जब इस घटना का ज़िक्र रसूलुल्लाह सल्ल० से किया गया तो आपने फ़रमाया : "उन लोगों ने उसे मार डाला। अल्लाह उनको मारे। बेशक अल्लाह ने मिट्टी को पाक करने वाला बनाया है। (वह तयम्मुम कर लेता)।"[3]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 332-333, नसाई (1/171), व तिर्मिज़ी, हदीस 124। इसे इमाम तिर्मिज़ी, इमाम हाकिम (1/176-177) और इमाम इब्ने हिबान ने सहीह कहा। दस वर्ष से लम्बी अवधि मुराद है। (सम्पादक)

2. बुख़ारी, हदीस 344, व मुस्लिम हदीस 682।

3. इब्ने ख़ुज़ैमा 1/138 हदीस 273, इब्ने हिबान, हदीस 2001। इसे हाकिम (1/165) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० ने फ़रमाया : "अगर घाव पर पट्टी बंधी हुई हो तो वुज़ू करते समय पट्टी पर मसह कर ले और इर्द गिर्द धो ले।"[1]

मालूम हुआ कि अगर किसी कमज़ोर या बीमार आदमी को स्वप्नदोष हो जाए और ग़ुस्ल करना उसके लिए हलाकत या बीमारी का कारण हो तो उसे तयम्मुम करके नमाज़ पढ़ लेनी चाहिए। और यह भी साबित हुआ कि घावों और फोड़ों आदि की पट्टी पर मसह कर लेना सही है और स्वप्नदोष वाला या हाइज़ा और निफ़ास से फ़ारिग होने वाली औरतें भी ज़रूरत पड़ने पर तयम्मुम करके नमाज़ पढ़ सकती हैं। इसलिए कि तयम्मुम शरअी मजबूरी की हालत में वुज़ू और ग़ुस्ल दोनों का बदल है।

तयम्मुम का तरीक़ा :

हज़रत अम्मार रज़ि० बयान करते हैं कि वह सफ़र की हालत में जुंबी हो गए और (पानी न मिलने की वजह से) ख़ाक पर लोटे और नमाज़ पढ़ ली। फिर (सफ़र से आकर) यह हाल रसूलुल्लाह सल्ल० के सामने बयान किया तो आपने फ़रमाया : "तुम्हारे लिए केवल यही काफ़ी था।"

وَضَرَبَ بِيَدَيْهِ إِلَى الأَرْضِ فَنَفَضَ يَدَيْهِ فَمَسَحَ وَجْهَهُ وَكَفَّيْهِ

"(और) फिर नबी अकरम सल्ल० ने दोनों हाथ ज़मीन पर मारे और उन पर फूंक मारी फिर उनके साथ अपने मुंह और दोनों हाथों पर मसह किया।"[2] अर्थात उलटे हाथ से सीधे हाथ पर और सीधे हाथ से उलटे हाथ पर मसह किया फिर दोनों हाथ से चेहरे का मसह किया।

क़ुरआन मजीद के हुक्म (सूरह निसा 4 : 43) के अनुसार तयम्मुम पाक मिट्टी से करना चाहिए।

तयम्मुम जैसे मिट्टी से जाइज़ है उसी तरह खार वाली ज़मीन और रेत से भी जाइज़ है।

एक तयम्मुम से (वुज़ू की तरह) कई नमाज़ें पढ़ सकते हैं क्योंकि तयम्मुम वुज़ू का बदल है।[3]

---

1. बैहेक़ी 1/228। बैहेक़ी ने इसे सहीह कहा है।
2. बुख़ारी हदीस 338, व मुस्लिम हदीस 368, अबू दाऊद, हदीस 321।
3. जिन चीज़ों से वुज़ू टूटता है उन्हीं चीज़ों से तयम्मुम *शेष अगले पृष्ठ पर*

नमाज़ी का लिबास

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«لَا يُصَلِّيْ أَحَدُكُمْ فِي الثَّوْبِ الْوَاحِدِ لَيْسَ عَلَى عَاتِقَيْهِ شَيْءٌ»

"कोई व्यक्ति कपड़े में इस तरह नमाज़ न पढ़े कि उसके कंधे नंगे हों।"[1]

हज़रत उमर बिन अबी सलमा रज़ि० बयान करते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० के घर में एक ही कपड़े में लिपटे हुए नमाज़ पढ़ते देखा कि (आपने) उसकी दोनों साइडें अपने कंधों पर रखी हुई थीं।[2]

सहाबा किराम रज़ि०, नबी करीम सल्ल० के साथ नमाज़ पढ़ते थे और वह अपने तहबन्दों को छोटे होने के सबब अपनी गर्दनों पर बांधे हुए होते थे और औरतों से कह दिया गया था कि जब तक मर्द सीधे होकर बैठ न जाएं उस समय तक तुम अपने सर सज्दे से न उठाना।[3]

हज़रत मुहम्मद बिन मुंक़दिर रज़ि० बयान करते हैं कि मैं हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ि० के पास आया तो वह एक कपड़े में लेटे हुए नमाज़ पढ़

भी टूट जाता है। अगर नमाज़ पढ़ लेने के बाद पानी की मौजूदगी का पता हो जाए तो उसे वुज़ू करके नमाज़ धोहराने या न दोहराने का इख़्तियार है। (अबू अनस गोहर) अगर दोहरा ले तो बेहतर है बल्कि उसमें (दोहरा) नमाज़ों का अज्र है। (नसाई 1/212) ग़ुस्ल हदीस 431। इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने बुख़ारी और मुस्लिम की शर्त पर सहीह कहा है।

1. बुख़ारी, हदीस 359, मुस्लिम हदीस 516। इससे मालूम हुआ कि मर्द के लिए नमाज़ के दौरान सर ढांपना वाजिब नहीं वरना आप कंधों के साथ सर का ज़िक्र भी फ़रमाते, सर ढांपना ज़्यादा से ज़्यादा मुस्तहब है लोगों को इसकी तर्ग़ीब तो दी जा सकती है मगर न ढांपने पर मलामत नहीं करनी चाहिए।

2. बुख़ारी, हदीस 354-355, 356, व मुस्लिम हदीस 517।

3. बुख़ारी, हदीस 362। यह हुक्म इसलिए दिया गया ताकि अगली पंक्ति वालों के सतर पर पिछली पंक्ति वालों की नज़र न पड़े, याद रहे कि नबुव्वत काल में औरतें पिछली पंक्तियों में नमाज़ अदा किया करती थीं।

रहे थे और उनकी चादर (एक तरफ़) रखी हुई थी। जब वह नमाज़ से फ़ारिग हुए तो हमने उनसे कहा : ऐ अबू अब्दुल्लाह! आपकी चादर पड़ी रहती है और आप नमाज़ पढ़ लेते हैं? तो उन्होंने फ़रमाया : हां, मैंने नबी करीम सल्ल० को इसी तरह नमाज़ पढ़ते देखा है और मैंने यह चाहा कि (ऐसा ही करूं ताकि) तुम्हारे जैसे जाहिल मुझे (इस तरह नमाज़ पढ़ते हुए) देख लें।[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने नमाज़ में मुंह ढांपने और सदल करने से मना फ़रमाया।[2]

सदल यह है कि (सर या) कंधों पर इस तरह कपड़ा डाला जाए कि वह दोनों तरफ़ लटका रहे।[3]

रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ औरतें नमाज़ फ़ज्र अदा करतीं तो वह अपनी चादरों में लिपटी हुआ करती थीं।[4]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "बालिग़ा औरत की नमाज़ औढ़नी के बिना नहीं होती।"[5]

हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० फ़रमाती हैं : "औरत औढ़नी और ऐसे लम्बे कुरते में नमाज़ पढ़े जिसमें उसके क़दम भी छुप जाएं।"[6]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "अपनी रान खोलो न किसी ज़िंदा या मुर्दा

---

1. बुख़ारी, हदीस 370। अरबी में अदाज़ तहबन्द को जब कि रदा उस चादर को कहते हैं जो क़मीस की जगह इस्तेमाल की जाए एक ही चादर में नमाज़ पढ़ने का मतलब यह है कि सर नंगा था, क्योंकि अगर वह सर ढांपते तो सतर बे हिजाब हो सकता था।

2. अबू दाऊद, हदीस 643। इसे इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है। मेरे इल्म में इस हदीस की दो ही सनदें हैं। एक सनद हसन बिन ज़कवान की तदलीस की वजह से ज़ईफ़ है दूसरी में उस्ल बिन सुफ़ियान ज़ईफ़ रावी है।

3. अगर सर या गर्दन पर कपड़े को बल दे दिया (लपेट लिया) फिर उसके दोनों किनारे लटकें तो यह सदल नहीं है।

4. बुख़ारी, हदीस 372, व सहीह मुस्लिम, हदीस 645।

5. अबू दाऊद, हदीस 641। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा और इब्ने हिबान ने सहीह कहा है।

6. बैहेक़ी (2/232) हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० ने मुहद्दिसीन की एक जमाअत से नक़ल किया है कि इसका मौक़ूफ़ होना सही है, बलाग़ुल मराम हदीस 207। लेकिन यह मौक़ूफ़ रिवायत मरफ़ूअ के हुक्म में है क्योंकि इसमें जो मसला है वह इज्तिहादी नहीं है।

की रान देखो।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० कभी नमाज़ में नंगे पांव खड़े होते और कभी आपने जूता पहन रखा होता था।[2]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम नमाज़ अदा करो तो अपना जूता पहन लो या उसे उतार कर अपने क़दमों के बीच रखो।" एक रिवायत में है कि आपने फ़रमाया : "यहूदियों का उल्टा करो वे जूते और मोज़े पहन कर नमाज़ अदा नहीं करते।"[3]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम मस्जिद में आओ तो जूतों को अच्छी तरह (ध्यान से) देख लो, अगर उनमें गन्दगी नज़र आए तो उनको ज़मीन पर अच्छी तरह रगड़ो फिर उनमें नमाज़ अदा करो।"[4]

नबी सल्ल० फ़रमाते हैं : "जब तुम नमाज़ अदा करो तो जूतों को दाएं या बाएं न रखो बल्कि क़दमों के दर्मियान रखो। क्योंकि तुम्हारा बायां दूसरे नमाज़ी का दायां होगा। हां अगर बायीं ओर कोई नमाज़ी न हो तो बायीं ओर रख सकते हो।"[5]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० ने अब्दुल्लाह बिन हारिस को देखा कि वह पीछे से बालों का जूड़ा बांध कर नमाज़ पढ़ रहे थे। अब्दुल्लाह बिन अब्बास उठे और उनके जूड़े को खोल दिया। जब इब्ने हारिस नमाज़ पढ़ चुके, इब्ने अब्बास रज़ि० की तरफ़ मुतवज्जह हुए और कहने लगे : मेरे सर से तुम्हें

---

1. अबू दाऊद, हदीस 4015, इब्ने माजा, हदीस 1460। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा और इब्ने हिबान ने सहीह कहा।

2. अबू दाऊद हदीस 653, व इब्ने माजा, हदीस 1038, तहावी ने इसे मुतवातिर कहा है। तब मस्जिदों के फ़र्श कच्चे होते थे और जूतों के तलवे भी हमवार होते थे जो ज़मीन पर रगड़ने से पाक हो जाते थे आज मस्जिदों में सफ़ें, दरियां या क़ालीन बिछ गए हैं और जूतों के तलवों में भी गन्दगी फंस जाती है जो ज़मीन पर रगड़ने से नहीं निकलती अतः आज अगर कोई व्यक्ति जूते पहन कर नमाज़ अदा करना चाहे तो उसे पाकी का पूरा प्रबन्ध करना चाहिए वरना जूते उतार कर नमाज़ पढ़े।

3. अबू दाऊद, हदीस 652। इसे हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

4. अबू दाऊद, हदीस 650। इसे हाकिम, ज़ेहबी और नववी ने सहीह कहा है।

5. अबू दाऊद, हदीस 654-655। इसे हाकिम, ज़ेहबी और नववी ने सहीह कहा है।

किया सरोकार था? इब्ने अब्बास रज़ि० ने कहा : मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को यह फ़रमाते हुए सुना है : "निःसन्देह उस तरह के आदमी की मिसाल उस व्यक्ति की सी है कि जो मशकें बांधी हुई हालत में नमाज़ अदा करे।"[1]

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने एक धारीदार चादर में नमाज़ पढ़ी। फिर फ़रमाया : "मेरी इस चादर को अबू जहीम के पास ले जाओ और उसकी चादर मेरे पास ले आओ। उस (चादर की धारियों) ने मुझे नमाज़ में विनम्रता से ग़ाफ़िल कर दिया है।"[2]

हज़रत आइशा रज़ि० ने घर में एक पर्दा लटका रखा था रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "यह पर्दा हटा दो। इसकी तस्वीरें नमाज़ में मेरे सामने आती हैं।"[3]

मालूम हुआ कि नक़्श व निगार वाले मुसल्ले पर नमाज़ पढ़ना सही नहीं है।

सहाबा किराम रज़ि० रसूलुल्लाह सल्ल० के पीछे नमाज़ पढ़ते हुए गर्मी की सख़्ती से सज्दा की जगह कपड़े का किनारा बिछा लेते थे।[4]

---

1. मुस्लिम, हदीस 492।
2. बुख़ारी, हदीस 373, मुस्लिम हदीस 556।
3. सहीह बुख़ारी, हदीस 374, 5959।
4. सहीह बुख़ारी, हदीस 385, 542।

मस्जिदों के आदेश

मस्जिद की श्रेष्ठता :

हज़रत उसमान रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«مَنْ بَنٰى مَسْجِدًا، يَبْتَغِيْ بِهٖ وَجْهَ اللّٰهِ، بَنَى اللّٰهُ لَهٗ مِثْلَهٗ فِي الْجَنَّةِ»

"जो व्यक्ति मस्जिद बनाए (और) उसके ज़रिए अल्लाह की रज़ा चाहे, अल्लाह उसके लिए जन्नत में घर बनाता है।"[1]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अल्लाह को मस्जिदें बहुत ज़्यादा प्रिय हैं। और बाज़ार अत्यन्त नापसन्द हैं।"[2]

मतलब यह है कि मस्जिदें दुनिया की तमाम जगहों से अल्लाह को ज़्यादा प्रिय और प्यारी हैं क्योंकि उनमें अल्लाह की इबादत होती है और बाज़ार तमाम जगहों से अल्लाह के नज़दीक अत्यन्त नापसन्दीदा हैं क्योंकि वहां हिर्स, लालच, झूठ, मकर और लेनदेन में धोखा आदि का प्रचलन होता है याद रहे कि किसी दीनी या दुनियावी ज़रूरत के बिना बाज़ार में कभी न जाएं और मस्जिदों से बहुत मुहब्बत करें।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो कोई दिन के अव्वल हिस्से में या दिन के आख़िरी हिस्से में मस्जिद की तरफ़ जाए, अल्लाह उसके लिए जन्नत में मेहमानी तैयार करता है।"[3]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम वुज़ू करके मस्जिद जाओ तो एक हाथ की उंगलियां दूसरे हाथ की उंगलियों में न डालो बेशक उस समय तुम

1. बुख़ारी, हदीस 450, व मुस्लिम हदीस 533।
2. मुस्लिम, हदीस 671।
3. बुख़ारी, हदीस 662, व मुस्लिम, हदीस 669।

नमाज़ ही में होते हो।"[1]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "मस्जिद में एक हाथ की उंगलियां दूसरे हाथ की उंगलियों में न डालो।"[2]

कुछ मस्जिदों में नमाज़ों का सवाब :

मस्जिदे अक़सा में एक नमाज़ एक हज़ार नमाज़ों के बराबर है।[3]

ख़ाना काबा (मस्जिदुल हराम) में एक नमाज़ दूसरी मस्जिदों की एक लाख नमाज़ों से श्रेष्ठ है।[4]

मस्जिदे नबवी में एक नमाज़ हज़ार नमाज़ों से बेहतर है।[5]

अब्दुल्लाह बिन साअद रज़ि० से रिवायत है कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० से मालूम किया कि नफ़्ल नमाज़ घर में पढ़ना श्रेष्ठ है या मस्जिद में? आपने फ़रमाया कि : "क्या तुम नहीं देखते कि मेरा घर मस्जिद के कितना क़रीब है इसके बावजूद फ़राइज़ के अलावा मुझे घर में नमाज़ पढ़ना ज़्यादा पसन्द है।"[6]

नबी अकरम सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम मस्जिद में नमाज़ पढ़ो तो नमाज़ का कुछ हिस्सा (नवाफ़िल, सुन्नतें) अपने घरों में पढ़ो, अल्लाह उस नमाज़ के सबब घर में भलाई देगा।"[7]

तहीयतुल मस्जिद (मस्जिद का तोहफ़ा) :

हज़रत अबू क़तादा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने

---

1. अबू दाऊद, हदीस 562। इसे इमाम हाकिम और इमाम ज़ेहबी ने सहीह कहा है। इसकी सनद हसन है। अर्थात तुम्हें बराबर नमाज़ का सवाब मिल रहा होता है।

2. मुसनद अहमद (4/42-43, 241) इसकी सनद पक्की है।

3. इब्ने माजा, 1407/हाफ़िज़ इराक़ी ने इसकी सनद को पक्की कहा है। और बूसीरी ने इसे सहीह कहा है।

4. इब्ने माजा, हदीस 1406।

5. बुख़ारी, हदीस 1190, व मुस्लिम हदीस 1394।

6. इब्ने माजा, हदीस 1378, इमाम बूसीरी और इब्ने ख़ुज़ैमा ने इसे सहीह कहा है।

7. मुस्लिम, हदीस 778।

फ़रमाया : "जब तुम मस्जिद में दाख़िल हो तो बैठने से पहले दो रकअत (नफ़्ल तहीयतुल मस्जिद के तौर पर) पढ़ा करो।"[1]

प्याज़ और लहसुन खाकर मस्जिद में न आओ :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने प्याज़ और लहसुन से मना किया और फ़रमाया : "जो कोई इन दोनों को खाए तो मस्जिद के क़रीब न आए और फ़रमाया अगर तुमने उन्हें खाना ही है तो उनको पकाकर उनकी बू मार लो।"[2] क्योंकि उससे फ़रिश्तों को भी तकलीफ़ पहुंचती है।[3]

शैख़ अलबानी फ़रमाते हैं : "क्या किसी की कल्पना में यह बात आ सकती है कि सिगरेट पीने वाला प्याज़ व लहसुन के हुक्म में दाख़िल नहीं? सबको मालूम है कि सिगरेट की बदबू प्याज़ व लहसुन की बू से कहीं ज़्यादा कष्टदायक होती है। इन दोनों के खाने में कोई हानि भी नहीं जबकि सिगरेट पीने की बहुत सी हानियां हैं और कोई फ़ायदा नहीं।"

अगर किसी को मर्ज़ की बिना पर लहसुन या प्याज़ इस्तेमाल करना पड़ता हो तो वह उनके इस्तेमाल के बाद मस्जिद आ सकता है क्योंकि रसूलुल्लाह सल्ल० ने मुग़ीरा बिन शैबा रज़ि० को सीने के एक मर्ज़ की बिना पर लहसुन खाने की इजाज़त दी थी।[4]

मस्जिद में थूकना :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : मुझ पर मेरी उम्मत के अच्छे और बुरे कर्म पेश किए गए। मैंने देखा कि सद कर्मों में रास्ते से कष्ट देने वाली चीज़ को दूर करना भी है और बुरे कर्मों में मस्जिद में थूकना भी है जिस पर मिट्टी न डाली गई हो।"[5]

---

1. बुख़ारी, हदीस 444, 1163, व सहीह मुस्लिम, हदीस 714।
2. अबू दाऊद, हदीस 3827।
3. मुस्लिम, हदीस 564।
4. अबू दाऊद, हदीस 3826। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा (1672) और इब्ने हिबान ने सहीह कहा है।
5. मुस्लिम, हदीस 553। आजकल मस्जिदों से थूक को पानी या कपड़े आदि से साफ़ किया जाएगा।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "मस्जिद में थूकना गुनाह है और उसका कफ़्फ़ारा उस पर मिट्टी डाल कर दफ़न करना है।"[1]

मस्जिद में सोना :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से रिवायत है कि वह नबी सल्ल० की मस्जिद में सो जाते थे यद्यपि वह कुंवारे नवजवान थे।[2]

मस्जिद में क्रिय-विक्रय :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम किसी व्यक्ति को मस्जिद में कुछ बेचता या ख़रीदता देखो तो कहो "अल्लाह तेरी सौदागरी में लाभ न दे।" और जिस समय तुम किसी व्यक्ति को मस्जिद में किसी गुमशुदा चीज़ का ऐलान करते हुए देखो तो कहो "अल्लाह तुझे वह चीज़ न लौटाए।" अतः निःसन्देह मस्जिदें इस उद्देश्य के लिए तो नहीं बनाई गईं।[3]

मस्जिद जाने की श्रेष्ठता :

हज़रत अबू उमामा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति अपने घर से बा वुज़ू होकर फ़र्ज़ नमाज़ अदा करने के लिए मस्जिद के लिए निकलता है तो उसको हज का अहराम बांधने वाले की तरह सवाब मिलता है।"[4]

याद रहे कि जिन पर बैतुल्लाह का हज फ़र्ज़ हो चुका हो, जब तक वह वहां जाकर हज न करें उनसे फ़र्ज़ियत साक़ित न होगी चाहे सारी उम्र बा वुज़ू होकर पांचों नमाज़ें मस्जिद में जाकर पढ़ते रहें, इसलिए अल्लाह की बख़्शिश और अज्र व सवाब की अधिकता से किसी क़िस्म की ग़लतफ़हमी का शिकार नहीं होना चाहिए।

---

1. बुख़ारी, हदीस 415, मुस्लिम, हदीस 552।
2. बुख़ारी, हदीस 440, 1121, 1156।
3. तिर्मिज़ी, हदीस 1324। इसे इमाम हाकिम (4/56) और इमाम ज़ेहबी ने सहीह कहा है।
4. अबू दाऊद, हदीस 558। इसकी सनद हसन है।

जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ने का सवाब अपने घर या बाज़ार में अकेले नमाज़ पढ़ने से (कम से कम) पच्चीस दर्जे ज़्यादा है। तो जब वह अच्छी तरह वुज़ू करके मस्जिद जाए तो उसके हर क़दम से उसका दर्जा बुलन्द होता है और गुनाह माफ़ होते हैं। जब वह नमाज़ पढ़ता है तो फ़रिश्ते उसके लिए उस समय तक दुआ करते रहते हैं जब तक वह नमाज़ की जगह पर बैठा रहता है। फ़रिश्ते कहते हैं ऐ अल्लाह! इस पर रहमत कर। ऐ अल्लाह! इस पर दया कर। जब तक नमाज़ी नमाज़ का इंतिज़ार करता है वह नमाज़ ही में होता है।[1]

हज़रत जाबिर रज़ि० से रिवायत है कि मस्जिदे नबवी के पास कुछ मकान ख़ाली हुए। बनू सलमा ने मस्जिद के क़रीब मुंतक़िल होने का इरादा किया। आपने फ़रमाया : "ऐ बनू सलमा अपने (मौजूदा) घरों में ठहरे रहो (मस्जिद की तरफ़ आते समय) तुम्हारे क़दम लिखे जाते हैं।"[2]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं, रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "सात व्यक्ति हैं जिन्हें अल्लाह तआला उस दिन (हश्र में) अपने (अर्श के) साए में रखेगा जिस दिन सिवाए उसके साए के कोई साया नहीं होगा। (पहला) न्याय करने हाकिम (दूसरा) वह नवजवान जो अल्लाह की इबादत में जवानी गुज़ारे (तीसरा) वह व्यक्ति कि उसका दिल मस्जिद में अटका हुआ हो, जिस समय नमाज़ पढ़कर निकलता है तो उसकी तरफ़ दोबारा आने के लिए व्याकुल रहता है। (चौथे) वे दो व्यक्ति जो (केवल) अल्लाह तआला (की रज़ा) के लिए आपस में मुहब्बत रखते हैं। (जब) मिलते हैं तो उसी की मुहब्बत में और जुदा होते हैं तो उसी की मुहब्बत में। (पांचवां) वह व्यक्ति जो अकेले में अल्लाह को याद करता है और (मुहब्बत या डर की अधिकता से) उसकी आंखों से आंसू बह पड़ते हैं। (छठा) वह व्यक्ति कि जिसे किसी ख़ानदानी, ख़ूबसूरत औरत ने (बुराई के लिए) बुलाया। (अर्थात दावते गुनाह दी) फिर उस व्यक्ति ने कहा मैं अल्लाह से डरता हूं। (सातवां) वह व्यक्ति कि जिसने अल्लाह के नाम पर कुछ दिया फिर उसको छुपाया यहां तक कि उसके बाएं हाथ को इल्म न हुआ कि उसके दाएं हाथ ने क्या ख़र्च किया। (अर्थात दान को बिल्कुल छुपाकर रखता है।)[3]

1. बुख़ारी, हदीस 2119, मुस्लिम, हदीस 649।
2. मुस्लिम, हदीस 665।
3. बुख़ारी, हदीस 660 व मुस्लिम हदीस 1031।

मस्जिदों में ख़ुश्बू :

हज़रत आइशा रज़ि० रिवायत करती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने हुक्म दिया : "मौहल्लों में मस्जिद बनाओ। (अर्थात जहां नया मुहल्ला हो वहां मस्जिद भी बनाओ) और उन्हें पाक साफ़ रखो। और ख़ुश्बू लगाओ।"[1]

मस्जिदें सादगी का नमूना होनी चाहिएं क्योंकि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "मुझे यह हुक्म नहीं दिया गया कि मैं मस्जिदों को सजाया करूं।"[2]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "क़यामत की निशानियों में से एक निशानी यह है कि लोग मस्जिदों पर गर्व करेंगे।"[3]

मस्जिद के नमाज़ियों के लिए ख़ुशख़बरी :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अंधयारियों में (नमाज़ के लिए) मस्जिद की तरफ़ चलकर आने वालों को क़यामत के दिन पूरे नूर की ख़ुशख़बरी सुना दो।"[4]

मस्जिद में मुश्रिक दाख़िल हो सकता है क्योंकि एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्ल० ने बनी हनीफ़ा के एक व्यक्ति समामा बिन असाल रज़ि० (अभी वह मुसलमान नहीं हुए थे) को मस्जिद के स्तंभ से बांध दिया था।[5]

मस्जिद की देखभाल करने वाला मोमिन है :

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम किसी व्यक्ति को मस्जिद की देखभाल करते हुए देखो तो उसके ईमान की गवाही दो।"[6]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 455, इब्ने माजा, हदीस 758-759। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा (394) और इब्ने हिबान (306) ने सहीह कहा है।
2. अबू दाऊद, हदीस 448। इमाम इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है।
3. अबू दाऊद हदीस 449। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा 2/281-282, हदीस 1222 ने सहीह कहा है।
4. इब्ने माजा, हदीस 780। इमाम हाकिम (1/212) और इमाम ज़ेहबी ने उसे सहीह कहा है।
5. बुख़ारी, हदीस 462, 469, 2442, 2423।
6. तिर्मिज़ी, हदीस 2622, व इब्ने माजा, हदीस 802। इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1502) और इमाम इब्ने हिबान (हदीस 310) ने इसे सहीह कहा है।

मुसलमान बहन भाइयो! मस्जिदों की देखभाल किया करो। उन्हें साफ़ सुथरा रखो। रोशनी, पानी का इंतिज़ाम करो। मरम्मत का ख़्याल रखो और सबसे बड़ी देखभाल और मस्जिद की आबादी यह है कि वहां जाकर पांचों समय जमाअत से नमाज़ पढ़ो। मस्जिदों में क़ुरआन व हदीस के दर्स का आयोजन करो। मसनून नमाज़ पढ़ने वाले इमामों की नियुक्ति और पांचों समय अज़ान देने के लिए, वेतन न लेने वाले मअज़्ज़िन का इंतिज़ाम करो।

क़ब्रिस्तान और हमाम में नमाज़ की मनाही :

"हज़रत अबू सईद रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "सारी धरती मस्जिद है (अर्थात सब जगह नमाज़ जाइज़ है) सिवाए क़ब्रिस्तान और हमाम के।"[1]

जब नबी करीम सल्ल० क़ब्रिस्तान में नमाज़ पढ़ना जाइज़ नहीं फ़रमाते तो क़ब्रिस्तान में मस्जिदें बनाना भी जाइज़ न हुआ। मस्जिद के मानी हैं सज्दे की जगह, नमाज़ की जगह। जब क़ब्रिस्तान में सज्दा और नमाज़ मना हुई तो नमाज़ और सज्दे के लिए मस्जिद (सज्दे की जगह) बनाना भी मना हुई।

मस्जिद में दाख़िल होते समय की दुआ :

मस्जिद में दाख़िल होते समय रसूलुल्लाह सल्ल० पर सलाम कहना चाहिए।[2]

* «اَللّٰهُمَّ افْتَحْ لِيْ أَبْوَابَ رَحْمَتِكَ»

"या इलाही मेरे लिए अपनी रहमत के दरवाज़े खोल दे।"[3]

* «بِسْمِ اللهِ وَالسَّلَامُ عَلٰى رَسُوْلِ اللهِ اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلِيْ ذُنُوْبِيْ وَافْتَحْ لِيْ أَبْوَابَ رَحْمَتِكَ»

---

1. अबू दाऊद, हदीस 492, तिर्मिज़ी, हदीस 317। इसे इमाम हाकिम (1/251) इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (791) इब्ने हिबान (338-339) ज़ेहबी और इब्ने हज़म ने सहीह कहा है।

2. नसाई, इब्ने माजा, हदीस 772-773। इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 452) और इमाम इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है। सलाम के शब्द आगे आ रहे हैं।

3. मुस्लिम, हदीस 713।

"अल्लाह के नाम से (दाख़िल होता हूं) और (दुआ करता हूं कि) रसूलुल्लाह सल्ल० पर सलामती हो। ऐ अल्लाह! मेरे गुनाह माफ़ कर दे और मेरे लिए अपनी रहमत के दरवाज़े खोल दे।"[1]

अगर नमाज़ी मस्जिद में दाख़िल होते समय यह दुआ पढ़ ले तो बाक़ी दिन शैतान से महफ़ूज़ रहेगा :

«أَعُوذُ بِاللّٰهِ الْعَظِيمِ وَبِوَجْهِهِ الْكَرِيمِ وَسُلْطَانِهِ الْقَدِيمِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ»

"मैं महानता वाले अल्लाह, उसके इज़्ज़त वाले चेहरे और उसकी प्राचीन बादशाहत की पनाह चाहता हूं शैतान मर्दूद से।"[2]

मस्जिद से निकलते समय की दुआ :

हज़रत अबू उसैद रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम मस्जिद से निकलो तो यह पढ़ो :

«اَللّٰهُمَّ إِنِّي أَسْئَلُكَ مِنْ فَضْلِكَ»

"या इलाही! निःसन्देह मैं तुझसे तेरा फ़ज़्ल मांगता हूं।"[3]

* «بِسْمِ اللّٰهِ وَالسَّلَامُ عَلٰى رَسُوْلِ اللّٰهِ اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلِيْ ذُنُوْبِيْ وَافْتَحْ لِيْ أَبْوَابَ فَضْلِكَ»

"अल्लाह के नाम से (मस्जिद से बाहर आता हूं) और (दुआ करता हूं कि) रसूलुल्लाह सल्ल० पर सलामती हो, ऐ अल्लाह! मेरे गुनाह माफ़ कर दे और मेरे लिए अपने इनाम (व दया) के दरवाज़े खोल दे।"[4]

---

1. इब्ने माजा, हदीस 771। इसे इमाम तिर्मिज़ी (हदीस 315) ने हसन लग़ीरा कहा है।

2. अबू दाऊद, हदीस 466। इसकी सनद सहीह है।

3. मुस्लिम, हदीस 713।

4. इब्ने माजा (हदीस 771) इसे इमाम तिर्मिज़ी (हदीस 315) ने हसन लग़ीरा कहा है।

मस्जिद में आवाज़ बुलन्द करना मना है :

हज़रत उमर रज़ि० ने ताइफ़ के रहने वाले दो आदमियों से कहा (जो मस्जिद नबवी में ऊंची आवाज़ से बातें कर रहे थे) : "अगर तुम मदीना के रहने वाले होते तो मैं तुम्हें सज़ा देता। तुम रसूलुल्लाह सल्ल० की मस्जिद में अपनी आवाज़ें बुलन्द करते हो?"[1]

1. बुख़ारी, हदीस 470।

नमाज़ों के समय

पांचों नमाज़ों के समय :

हज़रत बुरीदा रज़ि० से रिवायत है कि एक आदमी ने नबी सल्ल० से नमाज़ के समयों के बारे में पूछा, आपने फ़रमाया : "इन दो दिनों में हमारे साथ नमाज़ पढ़।" जब सूरज का ढलान हुआ तो आपने बिलाल रज़ि० को ज़ोहर की अज़ान कहने का हुक्म दिया... अस्र की नमाज़ का हुक्म दिया जब सूरज बुलन्द, सफ़ेद और साफ़ था, मग़रिब की नमाज़ का हुक्म दिया जब सूरज अस्त हुआ। इशा की नमाज़ का हुक्म दिया जब सुर्ख़ी ग़ायब हुई और फ़ज्र की नमाज़ का हुक्म दिया जब सुबह हुई। (अर्थात पांचों नमाज़ों को उनके प्रथम समयों में पढ़ाया) दूसरे दिन बिलाल रज़ि० को हुक्म दिया कि ज़ोहर की नमाज़ अच्छी तरह ठंडी (देर) करके और अस्र की नमाज़ पढ़ी जबकि सूरज बुलन्द था। और उस (अव्वल) समय से विलम्ब की जो उसके लिए (पहले दिन) था। मग़रिब की नमाज़ क्षितिज (सूरज की सुर्ख़ी) ग़ायब होने से पहले पढ़ी और इशा की नमाज़ एक तिहाई रात गुज़रने पर पढ़ी। फ़ज्र की नमाज़ (सुबह) रोशन करके पढ़ी (अर्थात नमाज़ों को उनके आख़िरी समयों में पढ़ाया) और फ़रमाया : "तुम्हारी नमाज़ के समय इन दो समयों के बीच हैं जिसको तुमने देखा।"[1]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«وَقْتُ الظُّهْرِ إِذَا زَالَتِ الشَّمْسُ، وَكَانَ ظِلُّ الرَّجُلِ كَطُوْلِهِ مَا لَمْ يَحْضُرِ الْعَصْرُ، وَوَقْتُ الْعَصْرِ مَا لَمْ تَصْفَرَّ الشَّمْسُ وَوَقْتُ صَلٰوةِ الْمَغْرِبِ مَالَمْ يَغِبِ الشَّفَقُ ،وَوَقْتُ صَلٰوةِ الْعِشَاءِ إِلٰى نِصْفِ اللَّيْلِ الأَوْسَطِ، وَوَقْتُ صَلٰوةِ الصُّبْحِ مِنْ طُلُوْعِ الْفَجْرِ مَا لَمْ تَطْلُعِ الشَّمْسُ»

"नमाज़ ज़ोहर का समय सूरज ढलने से शुरू होता है और (उस समय

1. मुस्लिम, हदीस 613।

तक रहता है) जब तक आदमी का साया उसके क़द के बराबर न हो जाए (अर्थात अस्र के समय तक) और नमाज़ अस्र का समय उस समय तक है जब तक सूरज ज़र्द न हो जाए। नमाज़ मग़रिब का समय उस समय तक है जब तक क्षितिज ग़ायब न हो जाए। नमाज़ इशा का समय ठीक आधी रात तक है। और नमाज़े फ़ज्र का समय फ़ज्र उदय से लेकर उस समय तक है जब तक सूरज उदय न हो।''[1]

नमाज़ फ़ज्र अंधेरे में :

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है : ''रसूलुल्लाह सल्ल० जब नमाज़े फ़ज्र पढ़ते थे, औरतें (मस्जिद से नबी सल्ल० के साथ नमाज़ पढ़कर) अपनी चादरों में लिपटी हुई लौटतीं तो अंधेरे की वजह से पहचानी न जाती थीं।''[2]

मालूम हुआ कि नबी सल्ल० अंधेरे में अव्वल समय नमाज़ पढ़ा करते थे। यद्यपि नमाज़ का समय सुबह सादिक़ से सूरज उदय होने तक है लेकिन प्रथम समय पर पढ़ना श्रेष्ठ है।

हज़रत आइशा रज़ि० रिवायत करती हैं : ''रसूलुल्लाह सल्ल० ने कोई नमाज़ उसके आख़िरी समय में नहीं पढ़ी यहां तक कि अल्लाह ने आपको वफ़ात दे दी।''[3]

इस रिवायत से मालूम हुआ कि नबी सल्ल० हमेशा नमाज़ प्रथम समय पर अदा करते थे। अलबत्ता कुछ मौक़ों पर (शरई उज़्र की बिना पर) नमाज़ देरी से भी अदा की है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : ''पथम समय नमाज़ पढ़ना श्रेष्ठ अमल है।''[4]

---

1. मुस्लिम, हदीस 612।
2. सहीह बुख़ारी, हदीस 867, व सहीह मुस्लिम, हदीस 645।
3. बैहेक़ी (1/435) मुस्तदरक हाकिम (1/190) इसको हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।
4. बैहेक़ी (1/434) इसे हाकिम, इब्ने ख़ुज़ैमा, इब्ने हिबान और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

गर्म और ठंडे मौसमों में नमाज़े ज़ोहर का समय :

एक बार गर्मी में हज़रत बिलाल रज़ि० ने ज़ोहर की अज़ान देनी चाही तो आपने फ़रमाया : "ठंड हो जाने दो ठहर जाओ। गर्मी की सख़्ती जहन्नम के जोश से है, गर्मी की सख़्ती में उस समय तक ठहरो कि टीलों के साए नज़र आने लगें।"[1]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब गर्मी सख़्त हो तो नमाज़ ज़ोहर ठंडे समय में पढ़ो।"[2]

ठंडे समय का मतलब यह नहीं कि अस्र के समय पढ़ो बल्कि मुराद यह है कि शिद्दत की गर्मी में सूरज ढलते ही तुरन्त न पढ़ो थोड़ी देर कर लो।

हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है कि जब सर्दी होती तो रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ ज़ोहर पढ़ने में जल्दी करते (सूरज ढलते ही पढ़ लेते)।[3]

नमाज़े जुमा का समय :

हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है कि नबी अकरम सल्ल० जुमा की नमाज़ उस समय पढ़ते जब सूरज ढल जाता।[4]

हज़रत सहल बिन साअद रज़ि० से रिवायत है कि हम जुमा पढ़ने के बाद खाना खाते और दोपहर को आराम करते।[5]

हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है कि आप जुमा की नमाज़ सर्दियों में जल्द पढ़ते और सख़्त गर्मी में देर करते।[6]

नमाज़ अस्र का समय :

हज़रत बुरीदा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने नमाज़ अस्र क़ायम की यद्यपि सूरज बुलन्द, सफ़ेद और साफ़ था।[1]

---

1. बुख़ारी, हदीस 539, 629।
2. बुख़ारी, हदीस 533 व मुस्लिम हदीस 615।
3. बुख़ारी, हदीस 906, व नसाई हदीस 498।
4. बुख़ारी, हदीस 904।
5. बुख़ारी, (अल जुमा 62/10) हदीस 939 व मुस्लिम, हदीस 859।
6. बुख़ारी, हदीस 906।
7. मुस्लिम, हदीस 613।

हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० कहते हैं : "रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ अस्र पढ़ते थे और सूरज बुलन्द (ज़र्दी के बिना रोशन) होता था अगर कोई व्यक्ति नमाज़ अस्र के बाद मदीना शहर से "अवाली" (मदीना की आस पास की बस्तियां) जाता तो जब उनके पास पहुंचता तो सूरज अभी बुलन्द होता। (कुछ अवाली, मदीना से चार कोस के फ़ासले पर स्थित हैं।)"[1]

हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "कपटी की नमाज़ अस्र यह है कि वह बैठा सूरज (के ज़र्द होने) का इन्तिज़ार करता रहता है। यहां तक कि जब वह ज़र्द हो जाता है। और शैतान के दो सींगों के बीच हो जाता है। तो वह नमाज़ के लिए खड़ा हो जाता है और चार ठोंगे मारता है और उसमें अल्लाह को नहीं याद करता मगर थोड़ा।"[2]

नमाज़ मग़रिब का समय :

हज़रत सलमा रज़ि० रिवायत करते हैं कि हम नबी करीम सल्ल० के साथ सूरज अस्त होते ही मग़रिब की नमाज़ अदा कर लिया करते थे।[3]

नमाज़ इशा का समय :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से रिवायत है कि एक रात हम रसूलुल्लाह सल्ल० का नमाज़ इशा के लिए इन्तिज़ार करते रहे। जब तिहाई रात गुज़र गई तो आप तशरीफ़ लाए और फ़रमाया : "अगर मेरी उम्मत पर भारी न होता तो मैं इस समय इशा की नमाज़ पढ़ाता।" फिर मुअज़्ज़िन ने तकबीर कही और आपने नमाज़ पढ़ाई।[4]

रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ इशा से पहले सोना और नमाज़ इशा के बाद बातचीत करना नापसन्द करते थे।[5]

नबी सल्ल० इशा में कभी देरी फ़रमाते और कभी प्रथम समय पढ़ते जब

1. बुख़ारी, हदीस 550, व मुस्लिम हदीस 621।
2. सहीह मुस्लिम, हदीस 622।
3. बुख़ारी, हदीस 561।
4. मुस्लिम, हदीस 639।
5. बुख़ारी, हदीस 568।

लोग प्रथम समय जमा होते तो जल्द पढ़ते और अगर लोग देर से आते तो देर करते।[1]

मस्जिदों के इमामों को नमाज़ प्रथम समय पढ़ानी चाहिए :

हज़रत अबूज़र रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "तेरा क्या हाल होगा जिस समय तुझ पर ऐसे इमाम (हाकिम) होंगे जो नमाज़ में देर करेंगे या उसके समय से क़ज़ा करेंगे?" मैंने कहा कि आप मुझे उस हाल में क्या हुक्म फ़रमाते हैं? आपने फ़रमाया : "नमाज़ को उसके समय पर पढ़ फिर अगर तू उस नमाज़ (की जमाअत) को उनके साथ पाले तो (उनके साथ) दोबारा नमाज़ पढ़ ले यह नमाज़ तेरे लिए नफ़्ल होगी।"[2]

हज़रत उबादा बिन सामित रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "तुम पर मेरे बाद ऐसे इमाम होंगे जिनको कुछ चीज़ें समय पर नमाज़ पढ़ने से रोकेंगी। यहां तक कि उसका समय जाता रहेगा अतः नमाज़ समय पर पढ़ो (अगरचे अकेले पढ़नी पड़े)" फिर एक व्यक्ति बोला, ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल०! मैं उनके साथ भी नमाज़ पढूं? आपने फ़रमाया : "हां।"[3]

इस समय नमाज़ न पढ़ी जाए :

«أَنَّ النَّبِيَّ ﷺ نَهٰى عَنِ الصَّلٰوةِ بَعْدَ الصُّبْحِ حَتّٰى تَشْرُقَ الشَّمْسُ وَبَعْدَ الْعَصْرِ حَتّٰى تَغْرُبَ»

नबी सल्ल० ने सुबह (की नमाज़) के बाद (नफ़्ल) नमाज़ पढ़ने से मना फ़रमाया यहां तक कि सूरज ख़ूब स्पष्ट हो जाए और (नमाज़) अस्र के बाद (नफ़्ल) नमाज़ पढ़ने से मना फ़रमाया यहां तक कि सूरज अच्छी तरह ग़ायब हो जाए (क्योंकि सूरज शैतान के दोनों सींगों के बीच से निकलता है।)[4]

---

1. मुस्लिम, हदीस 646।
2. मुस्लिम, हदीस 648।
3. अबू दाऊद, हदीस 433। उसकी सनद सहीह है।
4. बुख़ारी, हदीस 581, मुस्लिम हदीस 825, 828। सींगों के बीच सूरज उदय की

और ठीक दोपहर के समय नमाज़ पढ़नी मना है।[1]

हज़रत अली रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अस्र के बाद नमाज़ न पढ़ो, मगर यह कि सूरज बुलन्द हो।"[2]

इस हदीस से ज़ाहिर है कि अस्र के बाद की मनाही सर्वथा नहीं है अतएव हज़रत कुरेब मौला इब्ने अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने अस्र के बाद दो रकअतें पढ़ीं, आपसे इसकी वजह मालूम की गई तो फ़रमाया : "बात यह है कि मेरे पास क़बीला अब्दुल क़ैस के लोग (दीन की बातें सीखने के लिए) आए थे उन्होंने (अर्थात उनके साथ मेरी व्यस्तता ने) मुझे ज़ोहर के बाद की दो सुन्नतों से रोके रखा। अतः यह वह दोनों थीं। (जो मैंने अस्र के बाद पढ़ी थीं।)"[3]

इमाम इब्ने क़दामा रह० ने अस्र के बाद सुन्नतों की क़ज़ा के जवाज़ पर यह दलील भी दी है कि अस्र के बाद की मनाही ख़फ़ीफ़ (हल्की) है। जबकि इब्ने हज़्म ने 23 सहाबा किराम रज़ि० (जिनमें चारों ख़लीफ़ा और ऊंचे सहाबा शामिल हैं) से अस्र के बाद 2 रकअत पढ़ना ज़िक्र किया है।

फ़ज्र के बाद मनाही का आरंभ सूरज उदय से होता है। जब फ़ज्र उदय हो गई तो फ़ज्र की सुन्नतों के अलावा बाक़ी नवाफ़िल मना हैं।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिसने सूरज के उदय (के शुरू) से पहले नमाज़ फ़ज्र की एक रकअत पढ़ ली वह अपनी नमाज पूरी करे। और जिसने सूरज के अस्त (के शुरू) से पहले नमाज़ अस्र की एक रकअत पढ़ ली वह अपनी नमाज़ पूरी करे, उसने फ़ज्र और अस्र की नमाज़ पा ली।"[4]

वृद्धि मुस्लिम में है।

1. सहीह मुस्लिम, हदीस 831।

2. अबू दाऊद, हदीस 1274, नसाई हदीस 574। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा, इब्ने हिबान, इब्ने हज़्म और हाफ़िज़ इब्ने हजर ने सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, हदीस 1233, 4370, व मुस्लिम हदीस 834।

4. बुख़ारी, हदीस 579 व मुस्लिम हदीस 608। यह रिआयत उस व्यक्ति के लिए है जो किसी शरई कारण की वजह से लेट हो गया वरना मात्र सुस्ती की बिना पर नमाज़ को इस क़द्र लेट करना सरासर कपट है।

छुटी हुई नमाज़ें :

हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«مَنْ نَسِيَ صَلٰوةً فَلْيُصَلِّ إِذَا ذَكَرَ لَا كَفَّارَةَ لَهَا إِلَّا ذٰلِكَ»

"जो व्यक्ति नमाज़ भूल जाए (या सो जाए) तो उसका कफ़्फ़ारा यह है कि जिस समय उसे याद आए (या बेदार हो) उस नमाज़ को पढ़ ले।"[1]

इस हदीस से मालूम हुआ कि अगर कोई व्यक्ति नमाज़ पढ़नी भूल जाए और उसका समय गुज़र जाए तो जिस समय याद आए वह उसी समय पूरी नमाज़ पढ़ ले और इसी तरह अगर कोई व्यक्ति सो जाए या सुबह आंख ही ऐसे समय खुले कि सूरज उदय हो चुका हो तो जागने वाले को उसी समय पूरी नमाज़ पढ़ लेनी चाहिए और उस पर किसी क़िस्म का कफ़्फ़ारा नहीं है।

क़ज़ाए उमरी वाले मसले की शरीअत में कोई असल नहीं अतः यह बिदअत है।

हज़रत अबू क़तादा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने एक सफ़र में फ़रमाया : "आज रात कौन हमारी हिफ़ाज़त करेगा? ऐसा न हो कि हम फ़ज्र की नमाज़ को न जागें।" हज़रत बिलाल रज़ि० ने कहा कि मैं ख़्याल रखूंगा फिर उन्होंने पूरब की तरफ़ मुंह किया और (कुछ देर बाद) बिलाल रज़ि० भी ग़ाफ़िल होकर सो रहे। जब सूरज गर्म हुआ तो जागे और खड़े हुए। रसूलुल्लाह सल्ल० और सहाबा भी जागे। आपने फ़रमाया : "ऊंट की नकेल पकड़ कर चलो क्योंकि यह शैतान की जगह है।" फिर (नई जगह पहुंच कर) रसूलुल्लाह सल्ल० ने वुज़ू का हुक्म दिया। हज़रत बिलाल रज़ि० ने अज़ान दी। नबी सल्ल० ने दो रकअतें पढ़ीं बाक़ी लोगों ने भी दो सुन्नतें पढ़ीं फिर रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़ज्र की नमाज़ पढ़ाई और फ़रमाया : "जो व्यक्ति नमाज़ भूल जाए उसे जब याद आए तो नमाज़ पढ़ ले।"[2]

---

1. सहीह बुख़ारी, हदीस 597 व मुस्लिम, हदीस 684।

2. बुख़ारी, हदीस 595 व मुस्लिम हदीस 680। प्रिय पाठको! असल हक़ीक़त आपने जान ली कि सूरज उदय होकर गर्म हो चुका था तब हज़रत बिलाल रज़ि० ने अज़ान दी मगर क़व्वालों ने एक और ही क़िस्सा गढ़ लिया : *शेष अगले पृष्ठ पर*

किसी सहीह हदीस से साबित नहीं कि छूट गई नमाज़ को दूसरे दिन उसके समय पर पढ़ा जाए बल्कि नबी सल्ल० के कर्म से बिल्कुल स्पष्ट है कि नींद से बेदार होने पर फ़ौरन नमाज़ अदा की जाए। अतः क़ज़ा नमाज़ की अदाएगी के लिए उसके बाद वाली नमाज़ के समय या अगले दिन उसी नमाज़ के समय का इन्तिज़ार नहीं करना चाहिए। बल्कि ऐसे व्यक्ति को केवल तौबा व इस्तग़फ़ार और नेकी के कामों में आगे जाने का आयोजन करना चाहिए।[1]

सफ़र में अज़ान देकर नमाज़ पढ़ना :

हज़रत उक़बा बिन आमिर रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "तुम्हारा परवरदिगार बकरियां चराने वाले से ताज्जुब करता है जो पहाड़ की चोटी पर रहकर अज़ान देता और नमाज़ पढ़ता है।" अल्लाह तआला फ़रमाता है : "मेरे बन्दे को देखो जो नमाज़ के लिए अज़ान देता और इक़ामत कहता है और मुझसे डरता है मैं ने उसको बख़्श दिया और जन्नत में दाख़िल किया।"[2]

मालूम हुआ कि कोई व्यक्ति सफ़र में हो तो अज़ान देकर इक़ामत कहकर (इमाम की तरह) नमाज़ पढ़े तो उसके लिए अज्र और सवाब है।

नमाज़ें मजबूरी में छूट जाएं तो कैसे पढ़ें?

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० से मरवी है कि हम (ग़ज़वा अहज़ाब में) रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ थे हमें काफ़िरों ने ज़ोहर, अस्र, मग़रिब और इशा

"हज़रत बिलाल ने जब तक अज़ान फ़ज्र न दी, क़ुदरत ख़ुदा की देखिए पूरी फ़ज्र न हुई" यक़ीन मानिए! क़व्वालियां मनगढ़त घटनाओं पर गाई जाती हैं ताकि जाहिल वर्ग में शिर्किया अक़ाइद व कर्मों को रिवाज दिया जाए और जाहिल लोग उन्हें रोज़ाना सुबह दम तिलावत की तरह सुनते और सवाब का काम समझते हैं। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

1. याद रहे कि किसी शरअी कारण की बिना पर जो नमाज़ छूट जाए उसे शरअी कारण ख़त्म होते ही अदा कर लिया जाए तो यही उसका कफ़्फ़ारा है। बुख़ारी, हदीस 597 व मुस्लिम/684, अलबत्ता अगर नमाज़ फ़ज्र छूट जाए तो उसे अगले दिन की नमाज़ फ़ज्र के साथ दोहराना भी मुस्तहब है। अबू दाऊद, हदीस 1203।

2. अबू दाऊद, हदीस 1203, नसाई 2 20, इसे इब्ने हिबान ने सहीह कहा है।

की नमाज़ें पढ़ने की मोहलत न दी (और उन नमाज़ों का समय गुज़र गया) जब फ़ुरसत मिली तो रसूलुल्लाह सल्ल० ने बिलाल रज़ि० को हुक्म दिया उन्होंने इक़ामत कही तो आपने ज़ोहर की नमाज़ पढ़ाई। फिर उन्होंने इक़ामत कही तो आपने अस्र की नमाज़ पढ़ाई फिर उन्होंने इक़ामत कही तो नबी सल्ल० ने मग़रिब की नमाज़ पढ़ाई। उन्होंने फिर इक़ामत कही तो नबी सल्ल० ने इशा की नमाज़ पढ़ाई।[1]

इस हदीस से मालूम हुआ कि अगर किसी सख़्त मजबूरी के बाइस नमाज़ें छूट जाएं तो उन्हें क्रमवार अदा करना मसनून है। लेकिन नमाज़ें जानकर क़ज़ा नहीं करनी चाहिएं।

1. मुस्नद अहमद, (3/25,49,67,68) नसाई (2/17) इसे इब्ने हिबान और इमाम नववी ने सहीह कहा है।

अज़ान व इक़ामत

अज़ान की शुरुआत :

रसूलुल्लाह सल्ल० जब मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ लाए तो सवाल पैदा हुआ कि नमाज़ के समयों का एलान कैसे किया जाए? कुछ लोगों ने यह प्रस्ताव रखा कि नमाज़ के समय बुलन्द जगह पर आग रोशन की जाए या नाक़ूस बजाया जाए।

हज़रत अनस रज़ि० ने फ़रमाया :

«ذَكَرُوا النَّارَ وَالنَّاقُوسَ، فَذَكَرُوا الْيَهُودَ وَالنَّصَارٰى، فَأُمِرَ بِلَالٌ أَنْ يَشْفَعَ الْأَذَانَ وَأَنْ يُوتِرَ الْإِقَامَةَ»

"कुछ सहाबा ने कहा कि आग का जलाना या नाक़ूस बजाना यहूद व नसारा की समानता है। फिर हज़रत बिलाल रज़ि० को हुक्म दिया गया कि अज़ान के कलिमात जुफ़्त (दो दो बार) कहें और तकबीर (इक़ामत) के कलिमात ताक़ (एक एक बार) कहें सिवाए "क़द क़ामतिस्सलाह" के।"[1]

अज़ान के जुफ़्त कलिमात :

«اَللّٰهُ أَكْبَرُ اللّٰهُ أَكْبَرُ، اَللّٰهُ أَكْبَرُ اللّٰهُ أَكْبَرُ، أَشْهَدُ أَنْ لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ، أَشْهَدُ أَنْ لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ، أَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا رَسُولُ اللّٰهِ، أَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا رَسُولُ اللّٰهِ، حَيَّ عَلَى الصَّلٰوةِ، حَيَّ عَلَى الصَّلٰوةِ، حَيَّ عَلَى الْفَلَاحِ، حَيَّ عَلَى الْفَلَاحِ، اَللّٰهُ أَكْبَرُ اللّٰهُ أَكْبَرُ، لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ»

"अल्लाह सबसे बड़ा है। अल्लाह सबसे बड़ा है। अल्लाह सबसे बड़ा है। अल्लाह सबसे बड़ा है। मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं। मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) माबूद नहीं। मैं गवाही देता हूं कि मुहम्मद सल्ल० अल्लाह के रसूल हैं। मैं

1. बुख़ारी, हदीस 603, 606, 607 व मुस्लिम, हदीस 378।

गवाही देता हूं कि मुहम्मद सल्ल० अल्लाह के रसूल हैं। नमाज़ की तरफ़ आओ। नमाज़ की तरफ़ आओ। निजात की तरफ़ आओ। निजात की तरफ़ आओ। अल्लाह सबसे बड़ा है। अल्लाह सबसे बड़ा है। अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं।"[1]

फ़ज्र की अज़ान में :

हज़रत अबू महज़ूरा रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने उनको अज़ान की शिक्षा दी और फ़रमाया कि :

«فَإِنْ كَانَ صَلٰوةُ الصُّبْحِ قُلْتَ: اَلصَّلٰوةُ خَيْرٌ مِّنَ النَّوْمِ، اَلصَّلٰوةُ خَيْرٌ مِّنَ النَّوْمِ»

"फ़ज्र की अज़ान में "हय-य-अ-लल फ़लाह" के बाद दो बार यह कलिमात ज़्यादा कहें "अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नोम, अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नोम, "नमाज़ नींद से बेहतर है। नमाज़ नींद से बेहतर है।[2]

हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं कि सुबह की अज़ान में "हय-य-अ-लल फ़लाह" के बाद "अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नोम" दो बार कहना सुन्नत है।[3]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० फ़रमाते हैं फ़ज्र की पहली अज़ान में "अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नोम" दो बार कहा जाए।[4]

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० ने बारिश के दिन अपने मुअज़्ज़िन से कहा कि "हय-य-अ-लस्सलाह" की बजाए "सल्लू फ़िर्रिहाल" या "सल्लू फ़ी बुयूतिकुम" (अपने घरों में नमाज़ अदा करो) कहे और फ़रमाया, रसूलुल्लाह सल्ल० ने ऐसा ही किया, जुमा अगरचे फ़र्ज़ है मगर मुझे पसन्द नहीं कि तुम

---

1. अबू दाऊद, हदीस 499, इब्ने माजा हदीस 706। इसे इमाम इब्ने हिबान (हदीस 287) तिर्मिज़ी और नववी ने सहीह कहा है।

2. अबू दाऊद, हदीस 501। नसाई 2/7 इसे इब्ने ख़ुज़ैमा, इब्ने हिबान और नववी ने सहीह कहा है।

3. इब्ने ख़ुज़ैमा, हदीस 386, बैहेक़ी (1/423) इसे इब्ने ख़ुज़ैमा ने सहीह कहा है।

4. बैहेक़ी (1/423) इसे इब्ने हजर ने हसन कहा है। यहां पहली अज़ान से मुराद वह अज़ान नहीं है जो फ़ज्र उदय से पहले दी जाती है बल्कि दूसरी अज़ान मुराद है लेकिन इक़ामत के एतेबार से इसे पहली कह दिया गया है।

कीचड़ और मिट्टी में (मस्जिद) चलो।[1]

तकबीर के ताक़ (एक एक) कलिमात :

«اَللّٰهُ اَكْبَرُ اللّٰهُ اَكْبَرُ، اَشْهَدُ اَنْ لَّا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ، اَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ، حَيَّ عَلَى الصَّلٰوةِ، حَيَّ عَلَى الْفَلَاحِ، قَدْ قَامَتِ الصَّلٰوةُ، قَدْ قَامَتِ الصَّلٰوةُ، اَللّٰهُ اَكْبَرُ اللّٰهُ اَكْبَرُ، لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ»

"अल्लाह सबसे बड़ा है। अल्लाह सबसे बड़ा है। मैं गवाही देता हूं अल्लाह के सिवा कोई इबादत के योग्य नहीं। मैं गवाही देता हूं मुहम्मद सल्ल० अल्लाह के रसूल हैं। नमाज़ की तरफ़ आओ। कामयाबी की तरफ़ आओ। नमाज़ खड़ी हो गई नमाज़ खड़ी हो गई। अल्लाह सबसे बड़ा है। अल्लाह सबसे बड़ा है। अल्लाह के सिवा कोई इबादत के योग्य नहीं।[2]

नबी रसूलुल्लाह सल्ल० ने बिलाल रज़ि० को हुक्म दिया कि अज़ान के कलिमात दो दो बार और तकबीर के एक एक बार कहें।[3]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से रिवायत है उन्होंने कहा रसूलुल्लाह सल्ल० के ज़माने में अज़ान के कलिमात दो दो बार और तकबीर के कलिमात एक एक बार थे सिवाए इसके कि मुअज़्ज़िन "क़दक़ामतिस्सलाह" दो बार कहता था।[4]

दोहरी अज़ान :

अज़ान में शहादत के चारों कलिमात पहले धीमी आवाज़ से कहना और फिर दोबारा बुलन्द आवाज़ से कहना तर्जीअ कहलाता है। हज़रत अबू महज़ूरा

---

1. बुख़ारी, हदीस 668 व मुस्लिम, हदीस 699। इससे मालूम हुआ कि अज़ान के कलिमात में "अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नोम" कहना या "अस्सलातु फ़िर्रिहाल" कहना अज़ान में वृद्धि नहीं है बल्कि नबवी काल की सुन्नत है। अतः इसे अज़ान के अंदर मनपसन्द वृद्धियों की दलील बनाना सही नहीं है।

2. अबू दाऊद, हदीस (510-511) इब्ने हिबान हदीस 290-291 ने सही कहा है।

3. बुख़ारी, हदीस 603, 605, 607 व मुस्लिम हदीस 378।

4. अबू दाऊद, हदीस 510-511, नसाई (2/20-21) दारमी (1/270) हाकिम (1/197-198) ज़ेहबी और नववी से इसे सहीह कहा है।

रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने स्वयं मुझे अज़ान सिखाई तो नबी सल्ल० ने फ़रमाया (अज़ान इस तरह) कहो[1] :

«اَللّٰهُ أَكْبَرُ اللّٰهُ أَكْبَرُ، اَللّٰهُ أَكْبَرُ اللّٰهُ أَكْبَرُ، أَشْهَدُ أَنْ لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللّٰهُ، أَشْهَدُ أَنْ لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللّٰهُ، أَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ، أَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ، (پھر دوبارہ کھو) أَشْهَدُ أَنْ لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللّٰهُ، أَشْهَدُ أَنْ لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللّٰهُ، أَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ، أَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ، حَيَّ عَلَى الصَّلٰوةِ، حَيَّ عَلَى الصَّلٰوةِ، حَيَّ عَلَى الْفَلاَحِ، حَيَّ عَلَى الْفَلاَحِ، اَللّٰهُ أَكْبَرُ اللّٰهُ أَكْبَرُ، لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللّٰهُ»

हज़रत अबू महज़ूरा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने उन्हें अज़ान के उन्नीस और इक़ामत के सतरा कलिमात सिखाए।[2]

अज़ान की विशेषताएं :

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "मुअज़्ज़िन की आवाज़ को जिन्नात, इंसान और जो जो चीज़ सुनती है वह क़यामत के दिन उसके लिए गवाही देगी।[3]

नबी करीम सल्ल० ने फ़रमाया : "मुअज़्ज़िन के लिए सवाब है उस

---

1. सहीह मुस्लिम, हदीस 379, अबू दाऊद, हदीस 503।

2. अबू दाऊद, हदीस 502, व सहीह मुस्लिम हदीस 379, तिर्मिज़ी, हदीस 192। इसे इमाम अलबानी ने सहीह कहा है। अर्थात दोहरी अज़ान और दोहरी इक़ामत सिखाई मगर अफ़सोस कि कुछ लोग केवल अपने फ़िक़्ही मस्लक की पैरवी में इंतिहाई नाइंसाफ़ी से काम लेते हुए एक ही हदीस में बयान की गई दोहरी इक़ामत पर हमेशा अमल करते हैं मगर दोहरी अज़ान हमेशा छोड़ देते हैं (कभी नहीं कहते) यद्यपि अज़ान व इक़ामत को दोहरा, या इकहरा कहना, दोनों तरह सुन्नत से साबित है। इससे मालूम हुआ कि जब तक एक मुसलमान किसी ख़ास फ़िक़्ह के तक़्लीदी बंधनों से रिहाई नहीं पाता वह नबी सल्ल० के आज्ञा पालन का हक़ अदा नहीं कर सकता अतः बेहतर यह है कि किसी मसले में विभिन्न इमामों के तर्कों का विश्लेषण करके कोई राय क़ायम की जाए। माना कि एक जाहिल आदमी ऐसा नहीं कर सकता मगर उलमा किराम तो जाहिल नहीं वह मुक़ल्लिद बनकर तस्वीर का केवल एक रुख़ लोगों को क्यों दिखाते हैं? ज़रा सोचें।

3. बुख़ारी, हदीस 609।

व्यक्ति के सवाब के बराबर जिसने (अज़ान सुनकर) नमाज़ पढ़ी।''[1]

मतलब यह हुआ कि मुअज़्ज़िन की आवाज़ सुनकर जितने आदमी मस्जिद में आकर नमाज़ पढ़ेंगे, उन सबको अपनी अपनी नमाज़ का पूरा सवाब तो मिलेगा ही मगर मुअज़्ज़िन, तमाम नमाज़ियों के सवाब के बराबर और अधिक अज्र पाएगा। क्योंकि उसने उनको नमाज़ की तरफ़ बुलाया था।

हज़रत मुआविया रज़ि० से रिवायत है कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० से सुना : ''क़यामत के दिन अज़ान देने वालों की गर्दनें लम्बी होंगी (अर्थात अल्लाह का नाम बुलन्द करने की वजह से वह प्रमुख होंगे)।[2]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : ''जब नमाज़ के लिए अज़ान दी जाती है तो शैतान पीठ फेरकर भाग जाता है। जब अज़ान ख़त्म हो जाती है तो वह आ जाता है। जब तकबीर कही जाती है तो वह पीठ फेरकर भागता है। जब तकबीर ख़त्म होती है तो फिर आ जाता है और नमाज़ी के दिल में वस्वसे डालता है। (फ़ला) फ़लां बात याद कर यहां तक कि आदमी को पता नहीं चलता कि उसने किस क़द्र नमाज़ पढ़ी।''[3]

अज़ान का जवाब देना :

हज़रत उमर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : ''जब मुअज़्ज़िन कहे ''अल्लाहु अकबर'' तो तुम भी कहो ''अल्लाहु अकबर'' फिर जब मुअज़्ज़िन कहे ''अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु'' तुम भी कहो ''अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु'' फिर जब मुअज़्ज़िन कहे ''अश्हदु अन-न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह'' तो तुम भी कहो ''अश्हदु अन-न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह'' फिर जब मुअज़्ज़िन कहे ''हय-य-अ लस्सलाह'' तो तुम कहो ''ला हव-ल वला क़ुव्व-त इल्लाबिल्लाह'' फिर जब मुअज़्ज़िन कहे ''हय-य-अ लल फ़लाह'' तो तुम कहो ''ला हव-ल वला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाह'' फिर जब मुअज़्ज़िन कहे, ''अल्लाहु अकबर'' तो तुम कहो ''अल्लाहु अकबर'' फिर जब मुअज़्ज़िन कहे

1. नसाई2/13, इसे मुंज़िरी ने पक्का कहा है।
2. मुस्लिम, हदीस 387।
3. बुख़ारी, हदीस 608, मुस्लिम हदीस 389।

"ला इला-ह इल्लल्लाह" तो तुम कहो "ला इला-ह इल्लल्लाह"। जो व्यक्ति अपने सच्चे दिल से मुअज़्ज़िन के कलिमात का जवाब देगा तो (जवाब की बरकत से) जन्नत में दाख़िल हो जाएगा।"[1]

हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० फ़रमाते हैं "अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नोम" के जवाब में "सदक़-त व बरर-त" के शब्द की कोई असल नहीं। अतः फ़ज्र की अज़ान में "अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नोम" के जवाब में भी यही कलिमा कहना चाहिए अर्थात "अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नोम"।

तकबीर के दौरान या बाद में "अक़ा-म-हल्लाहु व अदा-म-हा" कहने वाली, अबू दाऊद की रिवायत को इमाम नववी रह० ने ज़ईफ़ कहा है।[2]

अज़ान के बाद की दुआएं :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम मुअज़्ज़िन (की आवाज़ सुनो) तो तुम मुअज़्ज़िन को जवाब दो और जब अज़ान ख़त्म हो जाए तो फिर मुझ पर दुरूद भेजो तो जो मुझ पर एक बार दुरूद भेजता है अल्लाह उस पर दस बार रहमत भेजता है।"[3]

तो सब मुसलमान मर्दों और औरतों को चाहिए कि जब मुअज़्ज़िन अज़ान ख़त्म करे तो एक बार दुरूद शरीफ़ पढ़ें :

«اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى آلِ مُحَمَّدٍ، كَمَا صَلَّيْتَ عَلٰى إِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى آلِ إِبْرَاهِيْمَ، إِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ، اَللّٰهُمَّ بَارِكْ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى آلِ مُحَمَّدٍ، كَمَا بَارَكْتَ عَلٰى إِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى آلِ إِبْرَاهِيْمَ، إِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ»

---

1. मुस्लिम, हदीस 385।

2. इसे हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० ने भी ज़ईफ़ कहा है अतः "क़द क़ा-म-तिस्सलाह" के जवाब में "क़द क़ा-म-तिस्सलाह" के शब्द ही कहे जाएं बाक़ी कलिमात का जवाब (हदीस के आदेश पर अमल करते हुए) अज़ान के जवाब की तरह दिया जाएगा क्योंकि इक़ामत को भी अज़ान कहा गया है। (बुख़ारी, हदीस 627) और देखें (मिश्कातुल मसाबीह तहक़ीक़ुल बानी, हदीस 670)

3. मुस्लिम, हदीस 384।

"या इलाही रहमत भेज मुहम्मद और आले मुहम्मद पर जैसे रहमत भेजी तूने इब्राहीम और आले इब्राहीम पर बेशक तू तारीफ़ किया गया, बुज़ुर्गी वाला है। या इलाही बरकत भेज मुहम्मद पर और आले मुहम्मद पर जैसे बरकत भेजी तूने इब्राहीम पर और आले इब्राहीम पर बेशक तू प्रशंसित, बुज़ुर्गी वाला है।"[1]

हज़रत जाबिर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति अज़ान का (जवाब दे) और फिर अज़ान ख़त्म होने पर यह दुआ पढ़े उसके लिए क़यामत के दिन मेरी शफ़ाअत वाजिब हो जाती है :

«اَللّٰهُمَّ رَبَّ هٰذِهِ الدَّعْوَةِ التَّامَّةِ وَالصَّلٰوةِ الْقَائِمَةِ اٰتِ مُحَمَّدَانِ الْوَسِيْلَةَ وَالْفَضِيْلَةَ وَابْعَثْهُ مَقَامًا مَّحْمُوْدَانِ الَّذِيْ وَعَدْتَّهٗ»

"इस पूरी पुकार (अज़ान) के और (क़यामत तक) क़ायम रहने वाली नमाज़ के रब! मुहम्मद सल्ल० को वसीला और बुज़ुर्गी प्रदान कर और उन्हें मक़ामे महमूद में पहुंचा जिसका तूने उनसे वायदा किया है।"[2]

वसीले की तशरीह :

वसीले के बारे में ख़ुद रसूलुल्लाह सल्ल० फ़रमाते हैं : "वसीला जन्नत में एक दर्जा है जो केवल एक बन्दे के योग्य है और मैं उम्मीद रखता हूं कि वह बन्दा मैं ही हूं। अतः जिसने (अज़ान की दुआ पढ़कर) अल्लाह से मेरे लिए वसीला मांगा उसके लिए (मेरी) शफ़ाअत वाजिब हो गई।"[3]

नबी सल्ल० के इरशाद से मालूम हुआ कि वसीला जन्नत के एक बुलन्द व बाला दर्जे का नाम है।

दुआए अज़ान में वृद्धि :

मसनून दुआए अज़ान में कुछ लोगों ने कुछ अल्फ़ाज़ बढ़ा रखे हैं और वे शब्द नमाज़ की प्रचलित किताबों में भी मौजूद हैं। दुआए मसनून के सारे (वल फ़ज़ी-ल-त) के बाद "वद द-र-ज तर रफ़ी-अ-त" की ज़्यादती करते हैं

1. सहीह बुख़ारी, हदीस 3370।
2. बुख़ारी, हदीस 614।
3. मुस्लिम, हदीस 384।

और आगे "व अद्तहु" के ख़ालिस दूध में "वरज़ुक़्ना शफ़ा-अ-तहु यौमल क़ियामति" का पानी मिला रखा है और फिर अन्त में मसनून दुआ के अंदर "या अरहमर्राहिमीन" की मिलावट है। अफ़सोस! क्या नबी सल्ल० की फ़रमूदा दुआ में यह कमी रह गई थी जो बाद के लोगों ने अपनी वृद्धि से पूरी की है? मुसलमानों को रसूलुल्लाह सल्ल० के फ़रमान पाक में कमी या ज़्यादती करने की कल्पना से कांप जाना चाहिए।

नबी सल्ल० ने रात को बा वुज़ू सोने से पहले पढ़ने के लिए एक दुआ बताई। हज़रत बराअ बिन आज़िब रज़ि० ने पढ़कर सुनाई तो "बिनबिय्यि-क" की जगह "बि रसूलि-क" अर्थात नबी की जगह रसूल कहा। तो नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि मेरे बताए हुए शब्द नबी को रसूल से मत बदलो बल्कि "बि नबिय्यि-क" ही कहो।[1]

हज़रत साअद बिन अबी विक़ास रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति मुअज़्ज़िन (की अज़ान) सुनकर यह दुआ पढ़े तो उसके गुनाह बख़्श दिए जाएंगे। दुआ यह है :

«أَشْهَدُ أَنْ لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللّٰهُ وَحْدَهُ لاَ شَرِيكَ لَهُ، وَأَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهُ وَرَسُولُهُ، رَضِيتُ بِاللّٰهِ رَبًّا وَبِمُحَمَّدٍ رَسُولاً وَبِالإِسْلاَمِ دِينًا»

"मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं वह एक है उसका कोई शरीक नहीं और मुहम्मद सल्ल० उसके बन्दे और रसूल

---

1. बुख़ारी, हदीस 247, 6311, व मुस्लिम, हदीस 2710। इससे मालूम हुआ कि मसनून दुआएं और विर्द तौक़ीफ़ी (अल्लाह तआला की तरफ़ से) हैं और उनकी हैसियत इबादत की है अतः उनमें कमी ज़्यादती जाइज़ नहीं अतः (किसी ठोस या दलील के बिना) वाहिद मुतकल्लिम के कलिमे को जमा के कलिमे से बदलना सही नहीं है उसके बजाए बेहतर यह है कि वाहिद मुतकल्लिम का कलिमा ही बोला जाए अबलत्ता नीयत में यह रखा जाए कि मैं यही दुआ फ़लां फ़लां के हक़ में भी कर रहा हूं। और मसनून दुआओं और विर्द के होते हुए गढ़ी हुई अरबी दुआओं, विर्दो, वज़ीफ़ों और दुरूदों का आयोजन करना सही नहीं है और अगर उनके कुछ शब्द शिर्क, कुफ़्र या बिदअत पर आधारित हों तो इस सूरत में उनका पढ़ना कदापि हराम हो जाता है लेकिन अफ़सोस कि जाहिल लोग रोज़ाना सुबह सवेरे पाबन्दी के साथ उनकी "तिलावत" करते हैं। अल्लाह हम सबको हिदायत दे। आमीन

हैं। मैं अल्लाह के पालनहार होने और मुहम्मद सल्ल० के रसूल होने और इस्लाम के दीन होने पर राज़ी हूं।"[1]

अज़ान व इक़ामत के मसाइल :

हर नमाज़ के समय अज़ान देनी चाहिए। रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब नमाज़ का समय आए तो तुममें से कोई एक अज़ान कहे।"[2]

हज़रत बिलाल रज़ि० से उल्लिखित है कि वह अज़ान कहते हुए कानों में उंगलियां डालते थे।[3]

"हय-य-अ-लस्सलाह" कहते समय मुंह दायीं तरफ़ फेरें और "हय-य-अ-लल फ़लाह" कहते समय बायीं तरफ़।[4]

हज़रत उसमान बिन अबी अलआस रज़ि० की रिवायत है कि नबी सल्ल० ने उनको उनकी क़ौम का इमाम मुक़र्रर किया और फ़रमाया :

«وَاتَّخِذْ مُؤَذِّنًا لَا يَأْخُذُ عَلَى أَذَانِهِ أَجْرًا»

"कि मुअज़्ज़िन वह मुक़र्रर कर जो अपनी अज़ान पर मज़दूरी न ले।"[5]

मुअज़्ज़िन वह मुक़र्रर करना चाहिए जो बुलन्द आवाज़ वाला हो। हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ैद रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने उन्हें फ़रमाया : "बिलाल को अज़ान सिखाओ क्योंकि वह तुमसे बुलन्द आवाज़ है।[6]

एक सहाबिया रज़ि० फ़रमाती हैं कि मस्जिद के क़रीब तमाम घरों से मेरा मकान ऊंचा था और हज़रत बिलाल उस (मकान) पर (चढ़कर) फ़ज्र की अज़ान देते थे।[7]

---

1. मुस्लिम, हदीस 386।
2. बुख़ारी, हदीस 628, 631, 819 व मुस्लिम हदीस 674।
3. बुख़ारी, हदीस 197।
4. बुख़ारी, हदीस 634 व मुस्लिम, हदीस 503।
5. अबू दाऊद, हदीस 531, तिर्मिज़ी, हदीस 209। इसे हाकिम (1/199, 201), ज़ेहबी ने सहीह कहा है।
6. अबू दाऊद, हदीस 499, तिर्मिज़ी हदीस 139। इसे इमाम नववी ने सहीह कहा है।
7. अबू दाऊद, हदीस 519, इब्ने हजर ने हसन कहा है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने एक आदमी को फ़रमाया : "जैसे मुअज़्ज़िन कहता है तू भी उसी तरह जवाब दे फिर जब तू जवाब से फ़ारिग हो जाए तो (दुआ) मांग! तू दिया जाएगा।[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अज़ान और तकबीर के बीच अल्लाह तआला दुआ रद्द नहीं फ़रमाता।"[2]

बीमारियों और महामारी के मौक़े पर लोग घर घर अज़ानें देते हैं, यह सुन्नत से साबित नहीं। क्योंकि इस सिलसिले में पेश की जाने वाली तमाम रिवायात ज़ईफ़ हैं।

"अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नोम" के शब्द सिवाए अज़ान फ़ज्र के किसी और अज़ान में नहीं कहने चाहिए।

इक़ामत, अज़ान के फ़ौरन बाद नहीं होनी चाहिए क्योंकि नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि : "अज़ान और तकबीर के बीच नफ़्ल नमाज़ का समय होता है।[3]

सुबह सवेरे से कुछ देर पहले वाली अज़ान जाइज़ है। नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "तुम्हें बिलाल की अज़ान सहरी खाने से न रोके बल्कि वह रात को अज़ान देते हैं ताकि तहज्जुद पढ़ने वाला (आराम की तरफ़) लौट आए और सोने वाला (नमाज़ फ़ज्र के लिए) ख़बरदार हो जाए।[4]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जब इक़ामत हो जाए तो फ़ज्र नमाज़ के अलावा कोई नमाज़ नहीं होती।"[5]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 524। इसे इमाम इब्ने हिबान (हदीस 295) ने सहीह कहा है।

2. मुस्नद अहमद (3/225), इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 426-427) इसे इमाम इब्ने हिबान ने सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, हदीस 624 व मुस्लिम हदीस 838।

4. सहीह बुख़ारी, हदीस 621।

5. मुस्लिम, हदीस 710। अतः अगर आदमी सुन्नतें आदि तोड़कर फ़र्ज़ में शामिल होगा तो उसे वह सुन्नतें दोबारा पढ़नी होंगी फिर भी पढ़ी हुई रकअतों का सवाब उसे मिल जाएगा और अगर वह जमाअत की परवाह न करते हुए सुन्नतें जारी रखेगा तो फिर "नेकी बर्बाद गुनाह लाज़िम" वाला मुहावरा पूरा हो जाएगा

शेष अगले पृष्ठ पर

रसूलुल्लाह सल्ल० ने मैदाने अरफ़ात में दो नमाज़ें इकट्ठी पढ़ीं। आपने अज़ान एक बार दिलवाई और हर नमाज़ की इक़ामत अलग अलग कहलवाई।[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब इक़ामत कही जाए तो पंक्ति में शामिल होने के लिए न भागो बल्कि आराम के साथ चलते हुए आओ जो नमाज़ तुम (इमाम के साथ) पा लो वह ठीक है और जो रह जाए उसे बाद में पूरा करो।"[2]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "निःसन्देह बिलाल रात के समय अज़ान देते हैं अतः तुम खाओ और पियो।" (बिलाल की अज़ान सुनकर सहरी खाना न छोड़ो)।[3]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० की हदीस में इस पहली अज़ान की हिक्मत यह है कि बिलाल रज़ि० की अज़ान इसलिए होती ताकि नमाज़े तहज्जुद अदा करने वाला (नमाज़े फ़ज्र की तैयारी के लिए) कुछ आराम कर ले और जो सोया हुआ हो वह (नमाज़ फ़ज्र के लिए) जाग जाए।[4]

इस अज़ान और नमाज़ फ़ज्र की अज़ान में इतना समय नहीं होता था जितना कि आजकल किया जाता है। हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं दोनों मुअज़्ज़िनों के बीच केवल इस क़द्र समय होता था कि एक अज़ान देकर उतरता और दूसरा अज़ान के लिए चढ़ जाता।[5]

एक व्यक्ति अज़ान सुनकर मस्जिद से निकला हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० ने फ़रमाया कि निःसन्देह इस व्यक्ति ने अबुल क़ासिम सल्ल० की अवज्ञा की।[6]

अतः नमाज़ियों को चाहिए कि अगर वह तशह्हुद के क़रीब न पहुंचे हों तो फ़ौरन सुन्नतें तोड़ कर जमाअत के साथ शामिल हो जाएं हां अगर कोई व्यक्ति यही नमाज़ उससे पहले जमाअत के साथ अदा कर चुका है तो फिर वह सुन्नतें जारी रख सकता है।

1. मुस्लिम, हदीस 1218।
2. बुख़ारी, हदीस 636, 908 व मुस्लिम, हदीस 602।
3. बुख़ारी, हदीस 622, 623, 1919 व मुस्लिम, हदीस 1092।
4. बुख़ारी, हदीस 621 व मुस्लिम, हदीस 1093।
5. सहीह मुस्लिम, हदीस 1092।
6. मुस्लिम, हदीस 655। शरई कारण या नमाज़ की तैयारी के सिलसिले में बाहर जाना पड़े तो फिर जाइज़ है।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जो नमाज़ का इरादा करे तो मानो वह नमाज़ ही में है।"[1]

हमीद रिवायत करते हैं कि मैंने साबित बनानी से पूछा : क्या नमाज़ की इक़ामत हो जाने के बाद इमाम बातें कर सकता है? तो उन्होंने मुझे अनस बिन मालिक रज़ि० की हदीस बयान की कि एक बार नमाज़ की इक़ामत हो चुकी थी। इतने में एक व्यक्ति आया और इक़ामत हो जाने के बाद नबी सल्ल० से बातें करता रहा।[2]

एक बार नमाज़ की इक़ामत हो गई। लोगों ने पंक्तियां बराबर कर लीं, इतने में रसूलुल्लाह सल्ल० को याद आया कि आप जुंबी हैं आपने लोगों से कहा अपनी जगह खड़े रहो। फिर आपने (घर जाकर) ग़ुस्ल फ़रमाया और जब आप वापस तशरीफ़ लाए तो आपके सर से पानी टपक रहा था, फिर आपने नमाज़ पढ़ाई।[3]

---

1. मुस्लिम, हदीस 602। अर्थात अगर वह अकारण सुस्ती से काम न ले तो जब तक वह नमाज़ नहीं पढ़ लेता, उसे नमाज़ का सवाब निरंतर मिल रहा होता है।

2. बुख़ारी, हदीस 643।

3. बुख़ारी, हदीस 640। भूल जाना इंसानी आदत है आप सल्ल० मनुष्य थे इसीलिए भूल गए। यह भी साबित हुआ कि भूलना शाने रिसालत के ख़िलाफ़ नहीं है।

क़िबला और सुतरा

क़िबला के आदेश :

रसूलुल्लाह सल्ल० सवारी पर (नफ़्ल या वित्र) नमाज़ अदा कर रहे थे तो जिधर सवारी का मुंह होता उसी तरफ़ नबी सल्ल० का रुख़ होता :

«كَانَ النَّبِيُّ ﷺ يُصَلِّي فِي السَّفَرِ عَلَى رَاحِلَتِهِ حَيْثُ تَوَجَّهَتْ بِهِ، يُومِئُ إِيمَاءً، صَلَاةَ اللَّيْلِ إِلَّا الْفَرَائِضَ وَيُوتِرُ عَلَى رَاحِلَتِهِ»

"नबी सल्ल० दौराने सफ़र फ़र्ज़ों के अलावा, रात की नमाज़, अपनी सवारी पर, इशारे से पढ़ते थे। और सवारी पर ही वित्र पढ़ते थे।"[1]

और कभी नबी सल्ल० का यह मामूल भी देखने में आता कि जब ऊंटनी पर नवाफ़िल अदा करने का इरादा फ़रमाते तो ऊंटनी का मुंह क़िबला रुख़ करते और तकबीर तहरीमा कहकर नमाज़ शुरू फ़रमा देते उसके बाद नवाफ़िल अदा फ़रमाते रहते जिस तरफ़ भी सवारी का रुख़ होता।[2]

इस सूरत में आप रुकूअ और सज्दा सर के इशारे से करते अलबत्ता सज्दे की हालत में रुकूअ के मुक़ाबले सर को ज़्यादा झुका लेते।[3]

जब फ़र्ज़ नमाज़ अदा करना मक़्सूद होता तो सवारी से उतरते और क़िबला रुख़ खड़े हो जाते।[4]

क़िबले के बारे में नबी सल्ल० का इरशाद है : "उत्तर और दक्षिण के बीच (पश्चिम की तरफ़) तमाम सिम्त क़िबला है।"[5]

---

1. बुख़ारी, हदीस 1000, व मुस्लिम हदीस 700।

2. अबू दाऊद, हदीस 1225। इसे इब्ने हिबान और इब्ने मुल्क़न आदि ने सहीह और मुंज़िरी ने हसन कहा है।

3. तिर्मिज़ी हदीस 351। इसे इमाम तिर्मिज़ी ने सहीह कहा है।

4. बुख़ारी, हदीस 1099।

5. तिर्मिज़ी, हदीस 342, 344। इस हदीस को इमाम तिर्मिज़ी ने हसन कहा है। चूंकि दूर के लोगों के लिए ठीक ख़ाना काबा की तरफ़ रुख़ करना मुश्किल था इसलिए बैतुल्लाह के दाएं बाएं सारी दिशाओं को क़िबला क़रार दिया।

क़िबला की तरफ़ क़ब्र होने की सूरत में वहां से हट कर नमाज़ अदा करनी चाहिए। आप सल्ल० ने फ़रमाया कि : "क़ब्रों की तरफ़ मुंह करके नमाज़ अदा न करो और न क़ब्रों पर बैठो।"[1]

सुतरा का बयान :

यहां सुतरा से मुराद वह चीज़ है जिसे नमाज़ी अपने आगे खड़ा करके नमाज़ पढ़ता है ताकि उसके आगे से गुज़रने वाला (सुतरा के आगे से गुज़र जाए और) गुनाहगार न हो। यह सुतरा, लाठी, बरछी, लकड़ी, दीवार, सुतून और पेड़ आदि से होता है और इमाम का सुतरा सब नमाज़ियों के लिए काफ़ी होता है।

हज़रत तलहा बिन उबैदुल्लाह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«إِذَا وَضَعَ أَحَدُكُمْ بَيْنَ يَدَيْهِ مِثْلَ مُؤْخِرَةِ الرَّحْلِ فَلْيُصَلِّ وَلَا يُبَالِ مَنْ مَرَّ وَرَاءَ ذٰلِكَ»

"जब तुम्हारा एक व्यक्ति अपने सामने पालान की पिछली लकड़ी के बराबर (कोई चीज़) रख ले तो नमाज़ जारी रखे और जो कोई उसके सामने से गुज़रे उसकी परवाह न करे।"[2]

हज़रत अता फ़रमाते हैं कि पालान के पिछले हिस्से की लकड़ी क़रीब एक हाथ या उससे कुछ ज़्यादा (लम्बी) होती है।[3]

मालूम हुआ कि लगभग एक हाथ लम्बी लकड़ी या कोई और चीज़ सुतरा बन सकती है।

हज़रत अबू हुज़ैफ़ा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने बतहा में लोगों को नमाज़ पढ़ाई नबी सल्ल० के सामने एक बरछी गड़ी थी। आपने दो रकअत ज़ोहर की नमाज़ पढ़ाई और दो रकअत अस्र की। उस समय बरछी के दूसरी तरफ़ औरतें और गधे चले जा रहे थे।[4]

---

1. सहीह मुस्लिम, हदीस 972।
2. मुस्लिम, हदीस 499।
3. अबू दाऊद, हदीस 686। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 807) ने सहीह कहा है।
4. बुख़ारी, हदीस 495, व मुस्लिम, हदीस 503।

नमाज़ी के आगे से गुज़रने का गुनाह :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अगर नमाज़ी के सामने से गुज़रने वालो को गुज़रने की सज़ा मालूम हो जाए तो उसे एक क़दम आगे बढ़ने की बजाए चालीस (दिन, माह या चालीस साल) तक वहीं खड़े रहना पसन्द हो।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "तुम नमाज़ अदा करते समय आगे सुतरा खड़ा करो और अगर कोई व्यक्ति सुतरा के अंदर (अर्थात नमाज़ी और सुतरा के बीच) से गुज़रना चाहे तो उसकी रोक थाम करो और उसको आगे से न गुज़रने दो। अगर वह न माने तो उससे लड़ाई करो। निःसन्देह वह शैतान है।"[2]

एक रिवायत में है कि दो बार तो उसको हाथ से रोको अगर वह न रुके तो उससे हाथापाई से भी परहेज़ न किया जाए (क्योंकि) वह शैतान है।[3]

5. नबी सल्ल० सुतरा और अपने बीच में से किसी चीज़ को गुज़रने न देते थे। एक बार आप नमाज़ अदा फ़रमा रहे थे कि एक बकरी दौड़ती हुई आई वह आपके आगे से गुज़रना चाहती थीं आपने अपना पेट मुबारक दीवार के साथ लगा दिया।[4]

रसूलुल्लाह सल्ल० की नमाज़ की जगह और दीवार के बीच एक बकरी के गुज़रने का फ़ासला होता था।[5]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अगर नमाज़ी के आगे ऊंट के पालान की पिछली लकड़ी का लम्बा सुतरा न हो और बालिग़ औरत, गधा या सियाह कुत्ता आगे से गुज़र जाए तो नमाज़ टूट जाती है और सियाह कुत्ता शैतान है।"[6]

---

1. बुख़ारी, हदीस 510, मुस्लिम, हदीस 507।
2. बुख़ारी, हदीस 509, व मुस्लिम हदीस 505
3. इब्ने ख़ुज़ैमा, हदीस 818, और उन्होंने इसे सही कहा।
4. इब्ने ख़ुज़ैमा, हदीस 827। इसे इमाम हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।
5. बुख़ारी, हदीस 496।
6. मुस्लिम, हदीस 510। इमाम अहमद रह० फ़रमाते हैं कि औरत और गधा के मसले में मेरा दिल सन्तुष्ट नहीं है। इमाम मालिक, शाफ़ई, अबू हनीफ़ा और पहले के

शेष अगले पृष्ठ पर

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है कि मैं रसूलुल्लाह सल्ल० के आगे सोती थी। मेरे पांव आपके सामने होते थे। जब आप सज्दा करते तो मैं अपने पांव समेट लेती और जिस समय आप खड़े होते तो पांव फैला देती। उन दिनों घरों में चिराग़ नहीं होते थे।''[1]

मालूम हुआ कि गुज़रना मना है। अगर आगे कोई लेटा हो तो कोई हरज नहीं।

उलमा व बाद वाले फ़रमाते हैं कि नमाज़ी के सामने से किसी चीज़ के गुज़रने से उसकी नमाज़ बातिल नहीं होती बल्कि ''यक़-तउस्सलात'' का मतलब यह है कि नमाज़ में दिल की विनम्रता व भय क़ायम नहीं रहता जिसकी वजह से नमाज़ में ख़राबी और कमी पैदा हो जाती है। (अल मिंहाज फ़ी शरह सहीह मुस्लिम)

1. बुख़ारी, हदीस 513, मुस्लिम, हदीस 512। हज़रत आइशा रज़ि० का मतलब यह था कि अंधेरे की वजह से आपका ध्यान मेरी तरफ़ होने की सम्भावना न थी।

जमाअत के साथ नमाज़

महत्व :

हज़रत इब्ने मसऊद रज़ि० ने फ़रमाया कि :

«إِنَّ رَسُوْلَ اللهِ ﷺ عَلَّمَنَا سُنَنَ الْهُدٰى، وَإِنَّ مِنْ سُنَنِ الْهُدٰى الصَّلَاةَ فِي الْمَسْجِدِ الَّذِي يُؤَذَّنُ فِيْهِ - وَفِيْ رِوَايَةٍ - وَلَوْ أَنَّكُمْ صَلَّيْتُمْ فِيْ بُيُوْتِكُمْ كَمَا يُصَلِّيْ هٰذَا الْمُتَخَلِّفُ فِيْ بَيْتِهِ لَتَرَكْتُمْ سُنَّةَ نَبِيِّكُمْ وَلَوْ تَرَكْتُمْ سُنَّةَ نَبِيِّكُمْ لَضَلَلْتُمْ، وَمَا مِنْ رَجُلٍ يَتَطَهَّرُ فَيُحْسِنُ الطُّهُوْرَ ثُمَّ يَعْمِدُ إِلٰى مَسْجِدٍ مِّنْ هٰذِهِ الْمَسَاجِدِ، إِلَّا كَتَبَ اللهُ لَهُ بِكُلِّ خُطْوَةٍ حَسَنَةً، وَيَرْفَعُ بِهَا دَرَجَةً وَيَحُطُّ عَنْهُ بِهَا سَيِّئَةً وَمَا يَتَخَلَّفُ عَنْهَا إِلَّا مُنَافِقٌ مَعْلُوْمُ النِّفَاقِ وَلَقَدْ كَانَ لِرَجُلٍ يُؤْتٰى بِهِ يُهَادٰى بَيْنَ الرَّجُلَيْنِ يُقَامُ فِي الصَّفِّ»

"निःसन्देह रसूलुल्लाह सल्ल० ने हमें हिदायत के तरीक़े सिखाए, उन हिदायत के तरीक़ों में यह बात भी शामिल है कि : "उस मस्जिद में नमाज़ अदा की जाए जिसमें अज़ान दी जाती है। (और एक रिवायत में है कि उन्होंने फ़रमाया :) "अगर तुम नमाज़ अपने अपने घरों में पढ़ोगे जैसे (जमाअत से) पीछे रहने वाला यह व्यक्ति अपने घर में पढ़ लेता है तो तुम अपने नबी की सुन्नत छोड़ दोगे और अगर नबी सल्ल० की सुन्नत छोड़ दोगे तो गुमराह हो जाओगे और (यह बात भी शामिल है कि) जब कोई व्यक्ति अच्छा वुज़ू करके मस्जिद जाए तो अल्लाह तआला हर क़दम के बदले एक नेकी लिखता है, एक दर्जा बुलन्द करता है और एक बुराई मिटा देता है। सिवाए खुले कपटी के कोई पीछे नहीं रहता। बीमार भी दो आदमियों के सहारे नमाज़ को आता था।"[1]

1. रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अकेले व्यक्ति की नमाज़ से,

1. मुस्लिम, हदीस 654।

जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ना सत्ताइस दर्जे ज़्यादा (सवाब) रखता है।"[1]

2. रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "उस ज़ात की क़सम जिसके हाथ में मेरी जान है अलबत्ता मैंने इरादा किया कि मैं लकड़ियां जमा करने का हुक्म दूं। फिर अज़ान कहलवाऊं और किसी व्यक्ति को इमामत के लिए कहूं फिर उन लोगों के घर जला दूं जो नमाज़ (जमाअत) में हाज़िर नहीं होते।"[2]

हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उम्मे मक्तूम रज़ि० नाबीना थे, उन्होंने अपने अंधे होने की बात पेश करके अपने घर पर नमाज़ पढ़ने की इजाज़त चाही तो नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "अज़ान सुनते हो? अब्दुल्लाह ने कहा, जी हां! आपने फ़रमाया : "तो फिर नमाज़ में हाज़िर हो।[3]

भाइयो सोचो! नाबीना को घर में नमाज़ पढ़ने की इजाज़त न मिल सकी और आंखों वाले जो अज़ान सुनकर मस्जिद में नमाज़ पढ़ने के लिए नहीं जाते क़ियामत के दिन उनका क्या हाल होगा?

औरतों को मस्जिद में आने की इजाज़त :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम्हारी औरत मस्जिद की तरफ़ जाने की इजाज़त मांगे तो उसे कदापि मना न करो।"[4]

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० से रिवायत है कि नबी अकरम सल्ल० ने फ़रमाया : "तुम अपनी औरतों को (नमाज़ पढ़ने के लिए) मस्जिद में आने से मना न करो, यद्यपि उनके घर उनके लिए बेहतर हैं।[5]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "औरत का कमरे में नमाज़ पढ़ना सेहन में नमाज़ पढ़ने से बेहतर है। और उसका कोठरी में नमाज़ पढ़ना खुले मैदान में नमाज़ पढ़ने से बेहतर है।"[6]

---

1. बुख़ारी, हदीस 645, 649 व मुस्लिम, हदीस 650।

2. बुख़ारी, हदीस 644, 657 व मुस्लिम, हदीस 651।

3. मुस्लिम, हदीस 653।

4. बुख़ारी, हदीस 873 व मुस्लिम, हदीस 442। इससे मालूम हुआ कि हर मस्जिद में औरतों के लिए नमाज़ पढ़ने का हर संभव व्यवस्था होनी चाहिए।

5. अबू दाऊद, हदीस 567। इमाम हाकिम (1/209) इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1684) और इमाम ज़हबी ने इसे सहीह कहा है।

6. अबू दाऊद, हदीस 570। इसे इमाम हाकिम 209, इब्ने ख़ुज़ैमा (1688, 1690) और इमाम ज़ेहबी ने सहीह कहा।

औरतों को ख़ुश्बू लगाकर मस्जिद जाने की मनाही है।[1]

नमाज़ बाजमाअत के विभिन्न मसाइल :

1. रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«إِذَا أُقِيمَتِ الصَّلَاةُ وَوَجَدَ أَحَدُكُمُ الْخَلَاءَ فَلْيَبْدَأْ بِالْخَلَاءِ»

"अगर जमाअत खड़ी हो जाए और किसी व्यक्ति को पेशाब आदि की हाजत हो तो पहले उससे फ़राग़त हासिल करे (फिर नमाज़ पढ़े)।[2]

2. जो व्यक्ति अज़ान सुनकर मस्जिद में जमाअत के लिए बिना किसी शरअी कारण के न पहुंचे (और घर में नमाज़ पढ़ ले) तो रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "उसकी नमाज़ क़ुबूल नहीं की जाती।"[3]

3. जिस जगह तीन आदमी हों और वे जमाअत से नमाज़ न पढ़ें तो उन पर शैतान विजयी होता है।[4]

4. रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अगर शाम का खाना तैयार हो और नमाज़ का समय हो जाए तो पहले खाना खाओ और खाना खाने में जल्दी न करो।" हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० का खाना तैयार होता और जमाअत भी खड़ी हो जाती तो वह उस समय तक नमाज़ के लिए न आते जब तक खाना न खा लेते, यद्यपि वह इमाम की क़िरअत भी सुन रहे होते थे।[5]

5. सर्दी और बारिश की रात में रसूलुल्लाह सल्ल० ने घरों में नमाज़ पढ़ने

---

1. मुस्लिम हदीस 443। मक़सद यह है कि मस्जिद जाने वाली औरत हर उस काम से बचे जिससे वह लोगों की निगाहों का केन्द्र बने।

2. तिर्मिज़ी, हदीस 142, अबू दाऊद, हदीस 88। और इसमें "सुम्म यूसल्लू" के शब्द नहीं हैं। इसे इमाम तिर्मिज़ी, हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. इब्ने माजा, हदीस 793। इसे इब्ने हिबान, हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है। और अधिक देखिए, अरवाउल ग़लील, लिल अलबानी, 2/337।

4. अबू दाऊद, हदीस 547। नसाई 2/107-107। इसे इमाम हाकिम (1/246) इब्ने ख़ुज़ैमा, इब्ने हिबान, ज़ेहबी और इमाम नववी ने सहीह कहा है।

5. बुख़ारी, हदीस 673, 5464, मुस्लिम हदीस 559।

की इजाज़त दी है।[1]

पंक्तियों में मिलकर खड़ा होने का हुक्म :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«سَوُّوا صُفُوفَكُمْ فَإِنَّ تَسْوِيَةَ الصُّفُوفِ مِنْ إِقَامَةِ الصَّلٰوةِ»

"अपनी पंक्तियों को बराबर करो। निःसन्देह सफ़ों का बराबर करना नमाज़ के क़ायम करने में से है।"[2]

क़ुरआन हकीम में है :

﴿وَأَقِيمُوا الصَّلٰوةَ﴾ (البقرة ٢/ ٤٣)

"और नमाज़ क़ायम करो।" (सूरह बक़रा 2 : 43)

अर्थात अरकान और सुनन के अनुसार से नमाज़ पढ़ो। रसूलुल्लाह सल्ल० फ़रमाते हैं कि " :सफ़ों का सीधा करना भी नमाज़ के क़ायम करने में दाख़िल है।" इससे मालूम हुआ कि पंक्तियों का टेढ़ा होना नुक़्सान का कारण है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "पंक्तियों को सीधा करो क्योंकि पंक्ति को सीधा करना नमाज़ के हुस्न में से है।"[3]

हज़रत नोमान बिन बशीर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० हमारी पंक्तियों को (ऐसा) बराबर करते मानो उनके साथ तीरों को बराबर करते हों।[4] यहां तक कि हमने नबी सल्ल० से पंक्तियों का सीधा करना समझ लिया। एक दिन आप (जमाअत के लिए) खड़े हुए और तकबीर कहने को थे

1. बुख़ारी हदीस 666, व मुस्लिम, हदीस 697।
2. बुख़ारी, हदीस 723 व मुस्लिम, हदीस 433।
3. बुख़ारी, 722, मुस्लिम हदीस 435।
4. मुहावरे के मुताबिक़ तो यूं कहना चाहिए कि पंक्ति तीर की तरह सीधी हो जाती थी लेकिन जब उसके विपरीत यूं कहा गया कि तीर अगर पंक्ति की तरह सीधा कर दिया जाए तो निश्चय ही निशाने को जा लगे तो उसमें ज़्यादा अतिश्योक्ति पाई जाती है। मक़्सद भी यही है कि पंक्तियां अत्यन्त सीधी होती थीं यहां तक कि उनकी मदद से निशाने की तरफ़ तीरों का रुख़ भली प्रकार सीधा किया जा सकता था।

कि एक व्यक्ति को देखा उसका सीना पंक्ति से बाहर निकला हुआ था। तो फ़रमाया : "अपनी पंक्तियों को बराबर और सीधा करो वरना अल्लाह तआला तुममें मतभेद डाल देगा।"[1]

उल्लिखित हदीस की रू से पंक्तियों का सीधा करना अत्यन्त ज़रूरी है। इक़ामत हो चुकने के बाद जब सफ़ें सीधी सही और बराबर हो जाएं तो फिर इमाम को तकबीरे ऊला कहनी चाहिए।

ख़बरदार! पंक्तियां टेढ़ी न हों कि पंक्तियों का टेढ़ापन आपसी फूट, दिलों के मतभेद और आन्तरिक कदूरत का कारण है।

हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अपनी पंक्तियां मिली हुई रखो (अर्थात कंधे से कंधा और क़दम से क़दम मिलाकर खड़े हो) और पंक्तियों के बीच नज़दीकी करो, (अर्थात दो पंक्तियों के बीच इतना फ़ासला न छोड़ो कि वहां एक और पंक्ति खड़ी हो सके) और गर्दनें बराबर रखो। (अर्थात सब बराबर जगह पर खड़े हो कि गर्दनें बराबर हों)। क़सम है उस ज़ात की जिसके हाथ में मेरी जान है मैं शैतान देखता हूं जो पंक्ति की दराड़ों में दाख़िल होता है मानो कि वह बकरी का स्याह बच्चा है।"[2]

हज़रत नोमान बिन बशीर रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने लोगों की तरफ़ मुंह करके फ़रमाया :

"लोगो! अपनी पंक्तियां सीधी करो। लोगो! अपनी पंक्तियां सही करो। लोगो! अपनी पंक्तियां बराबर करो। सुनो! अगर तुमने पंक्तियां सीधी न कीं तो अल्लाह तआला तुम्हारे दिलों में मतभेद और फूट डाल देगा। फिर तो यह हालत हो गयी कि हर व्यक्ति अपने साथी के टख़ने से टख़ना, घुटने से घुटना और कंधे से कंधा चिपका देता था।"[3]

हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "पंक्तियों को सीधा किया करो क्योंकि मैं तुम्हें पीछे से भी देखता हूं।" (यह

---

1. मुस्लिम, हदीस 436।

2. अबू दाऊद, हदीस 667। इसे इमाम इब्ने हिबान (387) और इब्ने ख़ुज़ैमा (1545) ने सहीह कहा है।

3. अबू दाऊद, हदीस 662, इब्ने हिबान (396) ने इसे सहीह कहा है।

आपका चमत्कार था), अनस रज़ि० कहते हैं कि हममें से हर व्यक्ति (पंक्तियों में) अपना कंधा दूसरे के कंधे से और अपना क़दम दूसरे के क़दम से मिला देता था।[1]

---

1. बुख़ारी, हदीस 718, 725। इस हदीस में आप सल्ल० के एक चमत्कार का उल्लेख है। चमत्कार या करामत की हक़ीक़त समझने के लिए निम्न बातें विचारर्णीय हैं :

1. इंसान का वुजूद, उसकी अक़्ल, ताक़त, समस्त आदतें, स्वभाव और गुण सब अल्लाह तआला की प्रदान की हुई हैं।

2. इंसानी आदत और रूटीन है कि जिस काम में भी किसी आदमी की अक़्ल और ताक़त ख़र्च होती है वह काम कितना ही अनोखा क्यों न हो दूसरे आदमी भी मेहनत और अभ्यास करके वह काम कर ही लेते हैं।

3. लेकिन जब किसी आदमी से ऐसा काम हो जो आम क़ानूने क़ुदरत से हटा हुआ हो, उसमें किसी ज्ञान या कला का हाथ न हो और संसाधनों को भी इस्तेमाल में न लाया गया हो और हर आम व ख़ास उसके मुक़ाबले से या तो सिरे से ही विवश हो या साधनों के बिना विवश हो तो इसका मतलब यह है कि जिस आदमी से यह कारनामे होते हैं उसमें मात्र उसकी अक़्ल और ताक़त काम नहीं कर रही बल्कि उसे किसी परोक्ष ताक़त की "अनदेखी मदद" हासिल है।

4. अगर ऐसा काम किसी नबी और रसूल से हो तो उसे मोजिज़ा (चमत्कार) कहते हैं, और अगर किसी सहीह अक़ीदा, आलिमे दीन और मुत्तबअ़ सुन्नत (वली अल्लाह) से हो तो उसे करामत कहते हैं।

5. लोगों से अंबिया व रुसुल की सच्चाई मनवाने के लिए अल्लाह तआला उन्हें आम तौर पर दो चीज़ों से नवाज़ते हैं : 1. दलील व बुरहान की ताक़त, 2. विभिन्न मोजिज़ात (चमत्कार) का होना।

6. यह तो हो सकता है कि किसी नबी को मोजिज़ा न मिले मगर ऐसा कभी नहीं हुआ कि उसे दलील व निशानी की ताक़त से वंचित रखा गया हो।

7. जिस नबी को भी मोजिज़ा मिला, उसने कभी यह दावा नहीं किया कि संसाधनों को इस्तेमाल में लाए बिना हर क़िस्म का कारनामा कर दिखाना मेरी ताक़त में है या मेरे पद में यह दाख़िल है और न ही उसके सहाबा ने यह अक़ीदा रखा कि वह उन मोजिज़ों की बुनियाद पर साधनों के बिना दूसरे इंसानों का हाजत पूरी करने वाला और मुश्किल हल करने वाला है।

8. किसी भी ग़ैर नबी की दावत (अक़ीदा व अमल) की सच्चाई : 1. क़ुरआन पाक,

2. मक़बूल अहादीस, 3. सहाबा किराम रज़ि० सूझ बूझ व अमल और 4. उम्मत के उलमा से परखी जाएगी। अगर उसकी दावत और कार्य विधि उस स्तर पर पूरी उतरती है तो उससे ज़ाहिर होने वाला ख़िलाफ़े आदत काम "करामत" होगा वरना नहीं।

9. अगर बदअक़ीदा और बदअमल होने के बावजूद उससे उमूर अजीबा ज़ाहिर होते हैं तो उसकी दो ही वजहें हो सकती हैं : 1. अल्लाह ने उसकी रस्सी लम्बी कर दी है ताकि वह और उसके अनुयायी ज़्यादा से ज़्यादा अज़ाबे आख़िरत के हक़दार बनें। (2) उसने विभिन्न शिर्किया "अमल" करके जिन्नों और शैतानों की समीपता हासिल की है जो उसके साथ, नज़र न आने वाला सहयोग करते और उसे पेशगी ख़बरें पहुंचाते हैं

10. मतलब यह कि मोजिज़ा और सच्ची करामत अल्लाह की ग़ैबी मदद, ताक़त और हुक्म से सामने आती है जबकि झूठी करामतों में शैतान की अनदेखी मदद काम कर रही होती है। बन्दा अपनी ताक़त से ऐसे अजीब कामों का प्रदर्शन नहीं कर सकता।

11. हालत नमाज़ में क़िबला रुख़ होने के बावजूद पीछे खड़े नमाज़ियों पर नज़र रखना, वास्तव में नबी अकरम सल्ल० का मोजिज़ा था मगर यह कैफ़ियत हर समय नहीं होती थी बल्कि जब अल्लाह चाहता था ऐसे होता था और जब नहीं चाहता था, नहीं होता था अतएव सहीह हदीस में है कि आप सल्ल० नमाज़ पढ़ा रहे थे जब "समीअ़ल्लाहु लिमन हमिदा" कहा तो पीछे से एक आदमी ने यह दुआ पढ़ी "रब्बना व लकल हम्दन" तो सलाम फेरने के बाद आपने फ़रमाया "मिनल मुतकल्लिम?" (दुआ किसने पढ़ी थी?) (अल हदीस बुख़ारी, अध्याय 126, हदीस 799)

12. एक रात नबी अकरम सल्ल० अपने बिस्तर से उठकर बाहर चले गए, हज़रत आइशा रज़ि० भी उनके पीछे बाहर निकल गईं। आप सल्ल० ने बक़ीउल ग़रक़द (मदीना मुनव्वरा का क़ब्रिस्तान) पहुंचकर दुआए मग़फ़िरत की और वापस आ गए। हज़रत आइशा रज़ि० उनसे पहले अपने बिस्तर पर पहुंचने में कामयाब हो गईं लेकिन सांस चढ़ी (फूली) हुई थी। नबी अकरम सल्ल० ने वजह मालूम की, हज़रत आइशा रज़ि० ने टालना चाहा, आपने फ़रमाया "आइशा! बता दो वरना मेरा अल्लाह मुझे बता देगा।" इस पर हज़रत आइशा रज़ि० ने सारी बात सुना दी। (मुस्लिम, हदीस 974) इससे मालूम हुआ कि घर से निकलते समय हज़रत आइशा रज़ि० को मालूम न था कि नबी अकरम सल्ल० किधर और क्यों जा रहे हैं और नबी सल्ल० को भी मालूम न हुआ कि आइशा भी मेरे पीछे गई थी?

इस घटना से यह ग़लतफ़हमी भी दूर हो जानी चाहिए कि "आप सल्ल० चूंकि प्राणी होने की वजह से नूरुम मिन नूरिल्लाह थे अतः रात को आपकी मौजूदगी में गुमशुदा सूई भी नज़र आ जाया करती थी, चिराग़ जलाने की ज़रूरत पेश नहीं आती थी।"

हज़रत बराअ बिन आज़िब रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० पंक्ति के अंदर आते, हमारे सीनों और कंधों को बराबर करते और फ़रमाते थे : "आगे पीछे मत हो। (वरना) तुम्हारे दिल भी अलग अलग हो जाएंगे।" और फ़रमाते थे : "अल्लाह तआला पहली पंक्ति वालों पर अपनी रहमत भेजता है और फ़रिश्ते उनके लिए (रहमत की) दुआ करते हैं।"[1]

हज़रत नोमान बिन बशीर रज़ि० से रिवायत है कि जब हम नमाज़ के लिए खड़े होते तो रसूलुल्लाह सल्ल० हमारी पंक्तियों को बराबर करते थे जब पंक्तियां बराबर हो जातीं तो (फिर) आप अल्लाहु अकबर कहकर नमाज़ शुरू करते।[2]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से रिवायत है, रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "पंक्तियों को क़ायम करो, कंधे बराबर करो, (पंक्तियों के अंदर) उन जगहों को पूर करो जो ख़ाली रह जाएं, अपने भाइयों के हाथों में नर्म हो जाओ, पंक्तियों के अंदर शैतान के लिए जगह न छोड़ो। और जो व्यक्ति पंक्तियां मिलाएगा अल्लाह भी उसे (अपनी रहमत से) मिलाएगा।"[3]

अपने भाइयों के हाथों में नर्म हो जाने का मतलब है कि अगर पंक्ति सही करने के लिए कोई तुमको आगे या पीछे करे तो बड़ी नर्मी और मुहब्बत से आगे या पीछे हो जाओ। अगर पंक्ति से कोई निकल कर चला जाए तो उसकी जगह लेकर पंक्ति को मिलाओ, अल्लाह तुम पर रहमत करेगा। पंक्ति के अंदर (जान बूझकर) एक दूसरे से दूर दूर खड़े होना पंक्ति को काटना है। ऐसे लोगों को अल्लाह अपनी रहमत से दूर करेगा।

पंक्तियों का क्रम :

हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "पहले पहली पंक्ति को पूरा करो। फिर उसको जो पहली के निकट है।[4]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 664, व मुस्तदरक हाकिम 1/571-572, 573, 575, इमाम इब्ने हिबान (386) इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा और इमाम नववी ने इसे सहीह कहा है।

2. अबू दाऊद, हदीस 665, इसकी सनद सहीह है।

3. अबू दाऊद, हदीस 666। इसे हाकिम (1/213) इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1549) इमाम ज़ेहबी और नववी ने सहीह कहा है।

4. अबू दाऊद, हदीस 671। इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1546-1547) और इमाम इब्ने हिबान (हदीस 390) ने इसे सहीह कहा है।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "मर्दों की पंक्तियों में (सवाब के हिसाब से) सबसे बेहतर पहली पंक्ति है। और सबसे बुरी आख़िरी पंक्ति है और औरतों की पंक्तियों में सबसे बुरी पहली पंक्ति है और सबसे बेहतर आख़िरी पंक्ति है।"[1]

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "हमेशा लोग (पहली पंक्ति से) पीछे हटते रहेंगे यहां तक कि अल्लाह भी उनको (अपनी रहमत में) पीछे डाल देगा।"[2]

हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं कि हम रसूलुल्लाह सल्ल० के दौर में (स्तंभों के बीच पंक्तियां बनाने से) बचते थे।[3]

पंक्ति के पीछे अकेले नमाज़ पढ़ना :

पंक्ति के पीछे अकेले खड़े होकर नमाज़ नहीं पढ़नी चाहिए। रसूलुल्लाह सल्ल० ने एक व्यक्ति को पंक्ति के पीछे अकेले नमाज़ पढ़ते हुए देखा तो आपने उसको नमाज़ लौटाने का हुक्म दिया।[4]

अगर पंक्ति में जगह है तो पीछे अकेले आदमी की नमाज़ नहीं होती और अगर पंक्ति में जगह नहीं है तो यह मजबूरी की कैफ़ियत होगी ऐसी सूरत में अकेले ही खड़े हो जाना चाहिए नमाज़ हो जाएगी क्योंकि अगली पंक्ति में से किसी नमाज़ी को पीछे खींचना किसी सहीह हदीस से साबित नहीं। इमाम मालिक, अहमद, औज़ाई, इस्हाक़, और अबू दाऊद रह० का यही मत है कि पंक्ति से आदमी न खींचा जाए, अलबत्ता एक इमाम और एक

1. मुस्लिम, हदीस 440। इमाम नववी फ़रमाते हैं : "यह तब है जब औरतें भी मर्दों के साथ नमाज़ में हाज़िर हों, क्योंकि अगर मर्द आख़िरी पंक्ति में खड़े हों और उनके तुरन्त बाद औरतें खड़ी हों तो उनका ख़्याल एक दूसरे की तरफ़ रहेगा, लेकिन अगर मर्द पहली पंक्तियों में हों और औरतें आख़िरी पंक्तियों में हों जबकि बीच में बच्चे हों तो फिर ऐसी संभावना नहीं रहेगी।"

2. सहीह मुस्लिम, हदीस 438।

3. अबू दाऊद, हदीस 673। इसे इमाम तिर्मिज़ी ने हसन जबकि इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

4. अबू दाऊद, हदीस 682। इमाम इब्ने हिबान (5/575-576) इमाम अहमद, इस्हाक़ और इब्ने हज़्म ने इसे सहीह कहा है।

नमाज़ी वाले मसले पर अनुमान करके उसका जवाज़ मिलता है।[1]

पंक्तिबद्ध के दर्जे :

हज़रत अबू मसऊद रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ में अपने हाथ हमारे कंधों पर रखते और फ़रमाते बराबर हो जाओ और मतभेद न करो वरना तुम्हारे दिल अलग अलग हो जाएंगे। (और) वे लोग जो व्यस्क और (दीनी हिसाब से) अक़्लमंद हैं पंक्ति में मेरे क़रीब रहें, फिर जो उनसे क़रीब हैं, फिर जो उनसे क़रीब हैं।"[2]

हज़रत अबू मालिक अशअरी रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ के लिए खड़े हुए पहले मर्दों ने पंक्तियां बांधीं फिर लड़कों ने, उसके बाद आपने नमाज़ पढ़ाई। फिर फ़रमाया : "मेरी उम्मत की नमाज़ इसी तरह है।"[3]

हज़रत अनस रज़ि० की लम्बी हदीस में है कि मैंने और एक बच्चे ने इकट्ठे रसूलुल्लाह सल्ल० के पीछे पंक्ति बनाई और एक बुढ़िया हमारे पीछे अकेली ही पंक्ति में खड़ी हो गई।[4]

अल्लामा सुबकी फ़रमाते हैं : "इस हदीस से मालूम हुआ कि जब बच्चा अकेला हो तो मर्दों के साथ खड़ा हो जाए। अगर बच्चे दो या दो से ज़्यादा हों तो वे अपनी अलग पंक्ति बनाएं। इसी तरह अगर मर्द अकेला हो और बच्चे एक या एक से ज़ायदा हों तो इस सूरत में भी उनको मर्द के साथ पंक्ति बनाना होगी।"

इमामत का बयान :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

---

1. अर्थात जब एक और नमाज़ी आएगा तो वह पहले को खींचकर पीछे कर लेगा और दोनों पंक्ति बनाएंगे।

2. मुस्लिम, हदीस 432।

3. अबू दाऊद, हदीस 677। इसकी सनद हाफ़िज़ ज़ेहबी और हाफ़िज़ इब्ने हजर की शर्त पर हसन है।

4. बुख़ारी, हदीस 727 व 380, मुस्लिम, हदीस 658। इससे मालूम हुआ कि एक और भी पीछे नमाज़ में खड़े हो जाए तो उसे पंक्ति शुमार किया जाएगा।

«يَؤُمُّ الْقَوْمَ أَقْرَؤُهُمْ لِكِتَابِ اللهِ. فَإِنْ كَانُوا فِي الْقِرَاءَةِ سَوَاءً، فَأَعْلَمُهُمْ بِالسُّنَّةِ فَإِنْ كَانُوا فِي السُّنَّةِ سَوَاءً فَأَقْدَمُهُمْ هِجْرَةً فَإِنْ كَانُوا فِي الْهِجْرَةِ سَوَاءً، فَأَقْدَمُهُمْ سِلْمًا، وَلاَ يَؤُمَّنَّ الرَّجُلُ الرَّجُلَ فِي سُلْطَانِهِ وَلاَ يَقْعُدْ فِي بَيْتِهِ عَلَى تَكْرِمَتِهِ إِلاَّ بِإِذْنِهِ»

"लोगों का इमाम वह होना चाहिए जो उनमें सबसे ज़्यादा क़ुरआन अच्छी तरह (सहीह पढ़ना) जानता हो और अगर क़िरअत में सब बराबर हों तो फिर वह इमामत कराए जो सुन्नत को सबसे ज़्यादा जानता हो। (अर्थात सबसे ज़्यादा आदेश और मसाइल की हदीसें जानता हो) फिर अगर सुन्नत के ज्ञान में भी सब बराबर हों तो फिर इमामत वह कराए जिसने सबसे पहले (मदीना की तरफ़) हिजरत की। अगर हिजरत में भी सब बराबर हों तो फिर वह इमामत कराए जो सबसे पहले मुसलमान हुआ। और (बिना इजाज़त) कोई व्यक्ति, किसी की जगह इमामत न कराए और न किसी के घर में साहिबे ख़ाना की मस्नद पर उसकी इजाज़त के बिना बैठे।"[1]

अगर किताबुल्लाह किसी नाबालिग़ बच्चे को ज़्यादा याद हो तो उसे इमाम बनाया जा सकता है। हज़रत अम्र बिन सलमा रज़ि० फ़रमाते हैं कि अपने क़बीले में सबसे ज़्यादा क़ुरआन मुझे याद था तो मुझे इमाम बनाया गया यद्यपि मेरी उम्र सात साल थी।[2]

अंधे को इमाम बनाना जाइज़ है क्योंकि नबी अकरम सल्ल० ने अब्दुल्लाह बिन उम्मे मक्तूम रज़ि० को इमाम मुक़र्रर किया था। यद्यपि वह नाबीना थे।[3]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "उस इमाम की नमाज़ क़ुबूल नहीं होती कि जिस पर लोग (बिदआत, जिहालत व गुनाह आदि के कारण) नाराज़ हों।"[4]

हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० की सी

1. सहीह मुस्लिम, हदीस 673।
2. बुख़ारी, हदीस 4302।
3. अबू दाऊद, हदीस 595। इमाम इब्ने हिबान (हदीस 370) ने इसे सहीह कहा है।
4. अबू दाऊद, हदीस 593। इमाम तिर्मिज़ी (हदीस 360) ने इसे हसन कहा है।

बहुत हल्की और बहुत कामिल नमाज़ मैंने किसी इमाम के पीछे नहीं पढ़ी। जब आप (औरतों की पंक्ति में) बच्चे के रोने की आवाज़ सुनते तो इस डर से नमाज़ हल्की कर देते कि उसकी मां को तकलीफ़ होगी।[1]

हज़रत अबू क़तादा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "मैं, नमाज़ लम्बी करने के इरादे से, नमाज़ में दाख़िल होता हूं। फिर (औरतों की पंक्ति में) बच्चे के रोने की आवाज़ सुनता हूं तो अपनी नमाज़ में कमी कर देता हूं (हल्की पढ़ता हूं) कि बच्चे के रोने से उसकी मां को तकलीफ़ होगी।"[2]

लम्बी नमाज़ पर नबी करीम सल्ल० का क्रोध :

हज़रत अबू मसऊद अंसारी रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को किसी उपदेश में इतने क्रोध में नहीं देखा जितना (लम्बी नमाज़ पढ़ाने वालों पर) उस दिन देखा। आपने फ़रमाया : "तुम (लम्बी नमाज़ें पढ़ाकर) लोगों को नफ़रत दिलाने वाले हो, (सुनो) जब तुम लोगों को नमाज़ पढ़ाओ तो हल्की पढ़ाओ इसलिए कि उन (नमाज़ियों) में उम्रदार, बूढ़े और हाजतमंद भी होते हैं।[3]

हज़रत उसमान बिन अबी अलआस रज़ि० रिवायत करते हैं कि मुझे रसूलुल्लाह सल्ल० की आख़िरी वसीयत यह थी : "जब तुम लोगों की इमामत करो तो उनको नमाज़ हल्की पढ़ाओ क्योंकि तुम्हारे पीछे बूढ़े, मरीज़, कमज़ोर और कामकाज वाले लोग होते हैं। और जब अकेले नमाज़ पढ़ो तो जितनी चाहे लम्बी पढ़ो।"[4]

हल्की नमाज़ का यह मतलब नहीं है कि रुकूअ, सुजूद, क़ौमे और जल्से को तितर बितर करके रख दिया जाए। स्पष्ट हो कि अरकाने नमाज़ क्रम व विनय के बिना नमाज़ बातिल होती है[5] बल्कि हल्की नमाज़ का मतलब यह

---

1. बुख़ारी, हदीस 708।
2. बुख़ारी, हदीस 707, 868।
3. बुख़ारी, हदीस 702, 704, 90 व मुस्लिम हदीस 460।
4. मुस्लिम, हदीस 468।
5. और यह मतलब भी नहीं है कि नमाज़ के शब्दों को अनुचित हद तक तेज़ पढ़ा जाए इस तरह दरबारे इलाही का सम्मान जाता रहता है।

है कि क़िरअत कम की जाए, मगर क़याम ज़्यादा मुख़्तसर भी न हो नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "श्रेष्ठ नमाज़ वह है जिसमें क़याम लम्बा हो।"[1]

नमाज़ में सन्तोष :

हज़रत अबू क़तादा रज़ि० ने कहा कि :

«بَيْنَمَا نَحْنُ نُصَلِّي مَعَ رَسُوْلِ اللهِ ﷺ فَسَمِعَ جَلَبَةً فَقَالَ: "مَا شَأْنُكُمْ؟" قَالُوْا: اسْتَعْجَلْنَا إِلَى الصَّلٰوةِ، قَالَ: "فَلَا تَفْعَلُوْا إِذَا أَتَيْتُمُ الصَّلٰوةَ فَعَلَيْكُمُ السَّكِيْنَةُ فَمَا أَدْرَكْتُمْ فَصَلُّوْا وَمَا سَبَقَكُمْ فَأَتِمُّوْا»

"उस दौरान कि हम रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ नमाज़ पढ़ रहे थे, आपने लोगों की खटपट सुनी। नमाज़ के बाद आपने पूछा : "तुम क्या कर रहे थे?" उन्होंने अर्ज़ किया हम नमाज़ की तरफ़ जल्दी आ रहे थे। आपने फ़रमाया : "ऐसा न करो। जब तुम नमाज़ को आओ तो आराम से आओ, जो नमाज़ तुम्हें मिल जाए (अर्थात जो तुम पा लो) पढ़ लो और जो छूट जाए उसे बाद में पूरा करो।"[2]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० की रिवायत में है आप सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम नमाज़ का इरादा करते हो तो नमाज़ ही में होते हो (अतः आराम और सन्तोष के साथ आया करो)।"[3]

इमामों पर मुसीबत :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अगर इमामों ने नमाज़ अच्छी तरह (अरकान और सुन्नतों की पूर्णता के साथ) पढ़ाई तो तुम्हारे लिए भी सवाब है और उनके लिए भी सवाब है और अगर नमाज़ पढ़ाने में कमी की (अर्थात रुकूअ व सज्दों की गड़बड़ी, और क़ौमे जल्से में कमी से नमाज़ पढ़ाई) तो तुम्हारे (मुक़तदियों के) लिए (तो) सवाब है और उनके लिए मुसीबत है।"[4]

---

1. मुस्लिम, हदीस 756।
2. मुस्लिम, हदीस 603।
3. मुस्लिम, हदीस 602।
4. बुख़ारी, हदीस 694।

इमाम बग़वी रह० फ़रमाते हैं : "इस हदीस में इस बात की दलील है कि अगर कोई इमाम बे वुज़ू या जनाबत की हालत में नमाज़ पढ़ा देता है तो मुक़तदियों की नमाज़ सहीह और इमाम पर नमाज़ का दोहराना है चाहे उसने यह काम इरादतन किया हो या अनजाने की बिना पर।"

नमाज़ पढ़ाकर इमाम मुक़तदियों की तरफ़ मुंह फेरे :

हज़रत समरा बिन जुंदुब रज़ि० से रिवायत है, वह कहते हैं : "जब रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ पढ़ चुकते तो हमारी तरफ़ मुतवज्जह होते।[1]

हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० अपने दायीं तरफ़ से मुड़ते थे।[2]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० कहते हैं तुम अपनी नमाज़ में से केवल दायीं तरफ़ से फिरकर शैतान का हिस्सा मुक़र्रर न करो। मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को देखा कि वह अपने बायीं तरफ़ से भी फिरते थे।[3]

मालूम हुआ कि इमाम को फिरने के लिए केवल एक जगह मुक़र्रर नहीं कर लेनी चाहिए। बल्कि कभी दायीं तरफ़ से फिरा करे कभी बायीं तरफ़ से। मगर अधिकांश दायीं तरफ़ से मुड़ना चाहिए।

हज़रत बराअ रज़ि० से रिवायत है कि हम रसूलुल्लाह सल्ल० के पीछे नमाज़ पढ़ते तो हम आपके दायीं तरफ़ खड़े होने को पसन्द करते थे ताकि आपका चेहरा हमारी तरफ़ हो।[4]

इमाम की इमामत के आदेश :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "इमाम से पहल न करो! जब वह तकबीर कहे, उसके बाद तुम तकबीर कहो। और जब इमाम "वलज़्ज़ाल्ली न" कहे तो तुम उसके बाद आमीन कहो। और जब इमाम रुकूअ करे तुम उसके बाद रुकूअ करो और जब इमाम "समिअल्लाहु लिमन हमिदा" कहे तो तुम "अल्लाहुम-म रब्बना

---

1. बुख़ारी, हदीस 845, 1143, 1386।
2. सहीह मुस्लिम, हदीस 708।
3. बुख़ारी, हदीस 852, मुस्लिम हदीस 708।
4. मुस्लिम, हदीस 709।

लकल हम्दु" कहो।"[1]

हज़रत बराअ बिन आज़िब रज़ि० रिवायत करते हैं कि हम रसूलुल्लाह सल्ल० के पीछे नमाज़ पढ़ते थे तो जब आप "समिअल्लाहु लिमन हमिदा" कहते (तो हम आपके पीछे क़ौमे में खड़े हो जाते थे और फिर) हममें से कोई अपनी, पीठ (सज्दे में जाने के लिए) न झुकाता था यहां तक कि रसूलुल्लाह सल्ल० अपनी पेशानी ज़मीन पर रख देते।"[2]

हज़रात! सोच विचार किया आपने! कि जब तक रसूलुल्लाह सल्ल० क़ौमे से सज्दे में पहुंचकर अपनी पेशानी मुबारक ज़मीन पर न रख देते थे उस समय तक तमाम सहाबा रज़ि० खड़े रहते थे। कोई पीठ तक न झुकाता था और हमारा यह हाल है कि इमाम क़ौमे से सज्दे में आने के लिए अभी "अल्लाहु अकबर" ही कहता है तो मुक़तदी इमाम के सज्दे में पहुंचने से पहले ही सज्दे में पहुंच गए होते हैं।

नबी रहमत सल्ल० फ़रमाते हैं : "इमाम से पहले रुकूअ करो न सज्दा और इमाम से पहले खड़े हो न पहले सलाम फेरो।"[3]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया: "क्या तुम डरते नहीं कि अल्लाह तआला (इमाम से पहले उठने वाले) के सर को गधे के सर की तरह कर दे?"[4]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब नमाज़ में कोई बात कहनी हो तो मुक़तदी सुब्हानल्लाह कहें और ताली बजाना औरतों के लिए है।"[5]

हज़रत मसवर बिन यज़ीद रज़ि० से रिवायत है कि एक बार नबी सल्ल० ने क़िरअत में क़ुरआन का कुछ हिस्सा छोड़ दिया। एक आदमी ने कहा : आपने फ़लां फ़लां आयत छोड़ दी तो आपने फ़रमाया : "तूने मुझे याद क्यों न दिलाया?"[6]

---

1. मुस्लिम, हदीस 415।
2. बुख़ारी, हदीस 690, 747, 811, व मुस्लिम, हदीस 474।
3. मुस्लिम, हदीस 426।
4. बुख़ारी, हदीस 691 व मुस्लिम, हदीस 427।
5. बुख़ारी, हदीस 1203, 1204, 684, मुस्लिम, हदीस 422। बी बी सुब्हानल्लाह कहने की बजाए एक हाथ को दूसरे हाथ की पुश्त पर मारेगी।
6. अबू दाऊद, हदीस 907। इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा और इमाम इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा।

औरत की इमामत :

पहली पंक्ति के बीच में (दूसरी औरतों के साथ, बराबर) खड़ी होकर औरत औरतों की इमामत करा सकती है।

हज़रत उम्मे वरक़ा रज़ि० फ़रमाती हैं :

«أَمَرَهَا أَنْ تَؤُمَّ أَهْلَ دَارِهَا»

"रसूलुल्लाह सल्ल० ने उन्हें हुक्म दिया कि वह अपने घर वालों की इमामत कराएं।[1]

हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० औरतों की इमामत कराती और पंक्ति के बीच खड़ी होती थीं।[2]

इमामत के कुछ मसाइल :

1. हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है :

«صَلَّى رَسُولُ اللهِ ﷺ فِي حُجْرَتِهِ وَالنَّاسُ يَأْتَمُّونَ بِهِ مِنْ وَرَاءِ الْحُجْرَةِ»

"रसूलुल्लाह सल्ल० ने अपने हुजरे में नमाज़ पढ़ी और लोगों ने हुजरे से बाहर आपकी इमामत में नमाज़ अदा की।"[3]

मालूम हुआ कि इमाम और मुक़तदियों के बीच अगर दीवार आ जाए तो नमाज़ हो जाएगी।

2. हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० कहते हैं कि मैं रात की नमाज़ में नबी सल्ल० के बायीं तरफ़ खड़ा हुआ, आपने मेरा हाथ अपनी पीठ के पीछे से पकड़ा और मुझे अपनी दायीं तरफ़ कर दिया।[4]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 592। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1676) ने सहीह कहा है।
2. इब्ने अबी शैबा, 2/89। इमाम इब्ने हज़्म ने इसे सहीह कहा है।
3. अबू दाऊद, हदीस 1126।
4. बुख़ारी, हदीस 726, 698, 117, मुस्लिम, हदीस 763। इससे मालूम हुआ कि नवाफ़िल की जमाअत में तकबीर (इक़ामत) नहीं है और अगर अकेले आदमी ने नमाज़ शुरू की फिर दूसरा आकर उसके साथ आ मिला तो पहला नमाज़ी इमामत की नीयत करके नमाज़ जारी रखेगा।

3. हज़रत जाबिर रज़ि० कहते हैं कि मैं नमाज़ में नबी सल्ल० के पीछे खड़ा हो गया तो आपने मेरा कान पकड़कर मुझे अपने दायीं जानिब कर लिया। (यह एक सफ़र की घटना है, उसमें रसूलुल्लाह सल्ल० ने एक ही चादर में नमाज़ पढ़ी।[1]

अगर मुक़तदी एक हो तो वह इमाम के दायीं तरफ़ और उसके बराबर खड़ा होगा।[2]

4. हज़रत बिलाल रज़ि० रसूलुल्लाह सल्ल० को देखकर तकबीर कहते और आपके मुसल्ले पर खड़े होने से पहले तकबीर कही जाती और लोग सफ़बन्दी कर लेते थे।[3]

5. हज़रत अनस रज़ि० कहते हैं कि मैं जमाअत में आप सल्ल० के दायीं तरफ़ खड़ा हुआ और एक औरत हमारे पीछे खड़ी हुई।[4]

मालूम हुआ कि अगर मुक़तदियों में से एक मर्द और एक औरत हो तो मर्द इमाम के दायीं तरफ़ और औरत पीछे खड़ी होगी।

6. रसूलुल्लाह सल्ल० की बीमारी के दिनों में हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने इमामत कराई। एक दिन आपने तकलीफ़ में कमी पाई तो आप दो सहाबा रज़ि० के कंधों पर हाथ टेकते हुए मस्जिद में दाख़िल हुए। जब हज़रत अबूबक्र रज़ि० ने आपकी आमद महसूस की तो पीछे हटना चाहा, आपने इशारा किया कि पीछे न हटो। आप सल्ल० अबूबक्र रज़ि० की बायीं तरफ़ बैठ गए और बैठकर नमाज़ अदा की और अबूबक्र रज़ि० खड़े थे। अबूबक्र रज़ि० रसूलुल्लाह सल्ल० की इक़्तदा करते और लोग अबूबक्र रज़ि० की इक़्तदा करते। यह ज़ोहर की नमाज़ थी।[5]

7. हज़रत मुआज़ रज़ि० रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ नमाज़ पढ़ते फिर

---

1. मुस्लिम, हदीस 766। इसमें उन लोगों का खंडन है जो बड़ी ग़ैर ज़िम्मेदारी से यह कह देते हैं कि नबी अकरम सल्ल० ने कभी नंगे सर नमाज़ नहीं पढ़ी।

2. सहीह बुख़ारी, हदीस 697, 698, 699।

3. मुस्लिम, हदीस 605, 606।

4. सहीह मुस्लिम, हदीस 660।

5. बुख़ारी, हदीस 713, 198, मुस्लिम, हदीस 418।

अपनी क़ौम के पास आते और उन्हें नमाज़ पढ़ाते।"[1]

मालूम हुआ कि फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ चुकने के बाद दूसरों को (वही) नमाज़ पढ़ा सकते हैं।

हज़रत अबू सईद रज़ि० कहते हैं कि एक आदमी मस्जिद में आया, आप नमाज़ पढ़ा चुके थे। नबी सल्ल० ने पूछा : इस पर कौन सदक़ा करेगा? एक व्यक्ति खड़ा हुआ और उसने आने वाले के साथ जमाअत से नमाज़ पढ़ी।[2]

---

1. बुख़ारी, हदीस 700-701, मुस्लिम, हदीस 465। यह नमाज़ हज़रत मुआज़ रज़ि० के लिए नफ़िल और मुक़तदियों के लिए फ़र्ज़ बन जाती थी, इससे मालूम हुआ कि नमाज़ में इमाम और मुक़तदी की नीयत का भिन्न भिन्न होना जाइज़ है।

2. अबू दाऊद, हदीस 574। इमाम तिर्मिज़ी इमाम हाकिम और इमाम ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

नमाज़े नबवी : पहली तकबीर से सलाम तक

ग्यारह सहाबा रज़ि० की गवाही :

हज़रत अबू हमीद साअदी रज़ि० से रिवायत है कि उन्होंने रसूलुल्लाह सल्ल० के दस सहाबा (की जमाअत) में कहा कि मैं तुम (सब) से ज़्यादा रसूलुल्लाह सल्ल० की नमाज़ के तरीक़े को जानता हूं। सहाबा किराम रज़ि० ने कहा फिर (हमारे सामने रसूलुल्लाह सल्ल० की नमाज़) बयान करो। अबू हमीद ने कहा : जब रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ के लिए खड़े होते (तो) अपने दोनों हाथ कंधों के बराबर उठाते फिर तकबीर (तहरीमा) कहते फिर क़ुरआन पढ़ते फिर (रुकूअ के लिए) तकबीर कहते और अपने दोनों हाथ कंधों के बराबर उठाते फिर रुकूअ करते और अपनी हथेलियां अपने घुटनों पर रखते फिर (रुकूअ के दौरान) कमर सीधी करते, अतः न अपना सर झुकाते और न बुलन्द करते। (अर्थात पीठ और सर हमवार रखते।) और फिर अपना सर रुकूअ से उठाते तो कहते "समिअल्लाहु लिमन हमिदा" फिर अपने दोनों हाथ उठाते यहां तक कि उनको अपने कंधों के बराबर करते और (क़ौमा में इत्मीनान से) सीधे खड़े हो जाते फिर "अल्लाहु अकबर" कहते फिर ज़मीन की तरफ़ सज्दे के लिए झुकते फिर अपने दोनों हाथ (बाज़ू) अपने दोनों पहलुओं, (रानों और ज़मीन) से दूर रखते और अपने दोनों पांव की उंगलियां खोलते (इस तरह कि उंगलियों के सिरे क़िबला रुख़ होते) फिर अपना सर सज्दे से उठाते और अपना बायां पांव मोड़ते (अर्थात बिछा लेते) फिर उस पर बैठते और सीधे होते यहां तक कि हर हड्डी अपनी जगह पर आ जाती (अर्थात बड़े इत्मीनान से जल्से में बैठते) फिर (दूसरा) सज्दा करते, फिर "अल्लाहु अकबर" कहते और उठते और अपना बायां पांव मोड़ते। फिर उस पर बैठते और दिल जमी से एतेदाल करते यहां तक कि हर हड्डी अपने ठिकाने पर आ जाती (अर्थात इत्मीनान से जल्सए इस्तराहत में बैठते) फिर (दूसरी रकअत के लिए) खड़े होते फिर उसी तरह दूसरी रकअत में करते। फिर जब दो रकअत पढ़कर खड़े होते तो "अल्लाहु अकबर" कहते और अपने दोनों हाथ कंधों के बराबर उठाते। जैसे नमाज़ के शुरू में तकबीर ऊला के समय किया था। फिर

इसी तरह अपनी बाक़ी नमाज़ में करते यहां तक कि जब वह सज्दा होता जिसके बाद सलाम है (अर्थात आख़िरी रकअत का दूसरा सज्दा जिसके बाद बैठकर तशह्हुद, दुरूद और दुआ पढ़कर सलाम फैरते हैं) अपना बायां पांव (दायीं पिंडली के नीचे से बाहर) निकालते और बायीं जानिब कूल्हे पर बैठते फिर सलाम फेरते। (यह सुनकर) उन सहाबा ने कहा, (ऐ अबू हमीद साअदी) तूने सच कहा रसूलुल्लाह सल्ल० इसी तरह नमाज़ पढ़ा करते थे।"[1]

नमाज़ की नीयत :

रसूलुल्लाह सल्ल० फ़रमाते हैं :

«إِنَّمَا الأَعْمَالُ بِالنِّيَّاتِ»

"कर्मों का आधार नीयतों पर है।"[2]

इसलिए ज़रूरी है कि हम अपने तमाम (जाइज़) कामों में (सबसे) पहले, निष्ठापूर्वक नीयत कर लिया करें क्योंकि जैसी नीयत होगी वैसा ही फल मिलेगा। हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "एक शहीद, अल्लाह के सामने क़ियामत में लाया जाएगा अल्लाह उससे पूछेगा कि, तूने क्या अमल किया? वह कहेगा कि मैं तेरी राह में लड़कर शहीद हुआ। अल्लाह फ़रमाएगा : "तू झूठा है बल्कि तू इसलिए लड़ा था कि तुझे बहादुर कहा जाए" अतः कहा गया (अर्थात तेरी नीयत दुनिया में पूरी हो गई। अब मुझसे क्या चाहता है) फिर मुंह के बल घसीट कर आग में डाल दिया जाएगा। इसी तरह फिर एक आलिम जिसने इल्म, शोहरत की नीयत से पढ़ा और पढ़ाया था। अल्लाह के सामने पेश होकर जहन्नम में झोंक दिया जाएगा। फिर एक शोहरत की ग़र्ज़ से दान करने वाले मालदार का भी यही हश्र होगा।"[3]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 730, 963, तिर्मिज़ी, हदीस 304। इसे इब्ने हिबान, तिर्मिज़ी और नववी ने सहीह कहा है। इस हदीस से बहत सी बातें मालूम होती हैं जिनमें से एक यह कि सहाबा किराम रज़ि० के निकट रसूलुल्लाह सल्ल० की वफ़ात तक रफ़अ यदैन निरस्त नहीं हुआ।

2. बुख़ारी, हदीस 1, 54, 2529, 3898, 5070, 2520, 6689, 953, व मुस्लिम, हदीस 1907।

शेष अगले पृष्ठ पर

वुज़ू करते समय दिल में यह नीयत करें कि अल्लाह के समक्ष (नमाज़ में) हाज़िर होने के लिए पाकी (वुज़ू) करने लगा हूं और फिर जब नमाज़ पढ़ने लगें तो दिल में यह इरादा और नीयत करें कि केवल अपने अल्लाह ही की ख़ुशनूदी के लिए उसका हुक्म बजा लाता हूं।

नीयत चूंकि दिल से ताल्लुक़ रखती है इसलिए ज़बान से अदा करने की कोई ज़रूरत नहीं। और नीयत का ज़बान से अदा करना रसूलुल्लाह सल्ल० की सुन्नत और सहाबा रज़ि० के अमल से साबित नहीं है।[1]

---

3. मुस्लिम, हदीस 1905। इससे मालूम हुआ कि दिलों के भेद केवल अल्लाह ही जानता है और उसके हाथ में एक नेक व बद का आख़िरी अंजाम है।

1. अपने दिल में किसी काम की नीयत करना और ज़रूरत के समय किसी को अपनी नीयत से सचेत करना एक जाइज़ बात है। मगर नमाज़ से पहले नीयत पढ़ना अक़्ल, कथन और शब्दकोष तीनों के ख़िलाफ़ है :

1. अक़्ल के ख़िलाफ़ इसलिए है कि असंख्य ऐसे काम हैं जिनको शुरू करते समय हम ज़बान से नीयत नहीं पढ़ते क्योंकि हमारे दिल में उन्हें करने की नीयत और इरादा मौजूद होता है जैसे ज़कात देने लगते हैं तो कभी नहीं पढ़ते : "ज़कात देने लगा हूं" आदि। तो क्या नमाज़ ही एक ऐसा काम है जिसके आरंभ में उसकी नीयत पढ़ना ज़रूरी हो गया है? नमाज़ की नीयत तो उसी समय हो जाती है जब आदमी अज़ान सुनकर मस्जिद की तरफ़ चल पड़ता है और इसी नीयत की वजह से उसे हर क़दम पर नेकियां मिलती हैं। अतः नमाज़ शुरू करते समय जो कुछ पढ़ा जाता है वह नीयत नहीं बिदअत है।

2. कथन के ख़िलाफ़ इसलिए है नबी अकरम सल्ल० और सहाबा किराम रज़ि० बाक़ायदगी के साथ नमाज़ें पढ़ा करते थे और अगर वह अपनी नमाज़ों से पहले "नीयत" पढ़ना चाहते तो ऐसा कर सकते थे उनके लिए कोई रुकावट नहीं थी लेकिन उनमें से कभी किसी ने नमाज़ से पहले प्रचलित नीयत नहीं पढ़ी उसके विपरीत वह हमेशा अपनी नमाज़ों का आरंभ तकबीर तहरीमा (अल्लाहु अकबर) से करते रहे, साबित हुआ कि नमाज़ से पहले नीयत पढ़ना बिदअत है।

3. शब्दकोष के इसलिए ख़िलाफ़ है कि नीयत अरबी ज़बान का शब्द है अरबी में इसका मायना "इरादा" है और इरादा दिल से किया जाता है ज़बान से नहीं। बिल्कुल इसी तरह जैसे देखा आंख से जाता है पांव से नहीं। दूसरे शब्दों में नीयत दिल से की जाती है। ज़बान से पढ़ी नहीं जाती।

शेष अगले पृष्ठ पर

इमाम इब्ने तैमिया रह० फ़रमाते हैं कि शब्दों से नीयत करना उलमा मुस्लिमीन में से किसी के नज़दीक भी सुन्नत नहीं। रसूलुल्लाह सल्ल०, आपके चारों ख़लीफ़े और अन्य सहाबा रज़ि० और न ही इस उम्मत के सल्फ़ और अइम्मा में से किसी ने शब्दों से नीयत की। इबादात में जैसे वुज़ू, ग़ुस्ल, नमाज़, रोज़ा और ज़कात आदि में जो नीयत वाजिब है, आम सहमति सारे मुस्लिम उलमा के नज़दीक इसकी जगह दिल से। (फ़तावा कुबरा)

इमाम इब्ने हमाम और इब्ने क़य्यिम भी इसको बिदअत कहते हैं :

क़याम :

हज़रत इमरान बिन हसीन रज़ि० बयान फ़रमाते हैं मुझे बवासीर की तकलीफ़ थी। नबी सल्ल० ने फ़रमाया :

"صَلِّ قَائِمًا، فَإِنْ لَّمْ تَسْتَطِعْ فَقَاعِدًا، فَإِنْ لَّمْ تَسْتَطِعْ فَعَلٰى جَنْبٍ"

"(मुमकिन हो तो) खड़े होकर नमाज़ अदा करो अगर ताक़त न हो तो बैठकर, बैठकर अदा करने की भी ताक़त न हो तो लेटकर नमाज़ अदा करो।"[1]

नबी सल्ल० ने देखा कि कुछ लोग बैठकर नमाज़ें अदा कर रहे हैं।

नोट : कुछ लोग रोज़ा रखने की दुआ, हज के तल्बिया और निकाह में ईजाब व क़ुबूल से नमाज़ वाली नीयत को साबित करने की कोशिश करते हैं मतलब यह है कि "रोज़ा रखने की दुआ, वाली हदीस ज़ईफ़ है। अतः हुज्जत नहीं है। हज का तल्बिया सहीह हदीसों से साबित है वह नबी अकरम सल्ल० के अनुसरण में कहना ज़रूरी है मगर नमाज़ वाली प्रचलित नीयत किसी हदीस में नहीं आई, रह गया निकाह में ईजाब व क़ुबूल का मसला, चूंकि निकाह का ताल्लुक़ हुक़ूक़ुल इबाद से भी है और हक़ूक़ुल इबाद में मात्र नीयत से नहीं बल्कि इक़रार, तहरीर, और गवाही से मामलात तय पाते हैं जबकि नमाज़ में तो बन्दा रब के हुज़ूर खड़ा होता है जो तमाम नीयतों को ख़ूब जानने वाला है और फिर वहां नीयत पढ़ने की क्या तुक बनती है? अतः अहले इस्लाम से गुज़ारिश है कि वह इस बिदअत से निजात पाएं और सुन्नत के मुताबिक़ नमाज़ शुरू करके रसूलुल्लाह सल्ल० हो मुहब्बत का सुबूत दें।

1. बुख़ारी, हदीस 1117। इससे मालूम हुआ कि ताक़त के बावजूद बैठकर फ़र्ज़ नमाज़ अदा करना जाइज़ नहीं है और यह क़ुरआन के भी ख़िलाफ़ है जो कहता है। (सूरह बक़रा 2/238) "और अल्लाह के लिए सम्मानपूर्वक खड़े हुआ करो।"

आपने फ़रमाया : "बैठकर नमाज़ अदा करने वाले को खड़े होकर नमाज़ अदा करने वालों की निस्बत निस्फ़ सवाब मिलेगा।"[1]

जब नबी सल्ल० की उम्र ज़्यादा हो गई तो आपने जाए नमाज़ के क़रीब एक सुतून तैयार कराया जिस पर आप (नमाज़ के दौरान) टेक लगाते थे।[2]

नबी सल्ल० रात का बड़ा हिस्सा खड़े होकर नाफ़िल अदा करते और कभी बैठकर। जब क़िरअत खड़े होकर फ़रमाते तो (उसी हालत) क़याम से रुकूअ की हालत में मुंतक़िल होते और जब बैठकर क़िरअत फ़रमाते तो उसी हालत में रुकूअ भी फ़रमाते।[3]

और कभी आप सल्ल० बैठकर क़िरअत फ़रमाते। जब क़िरअत से तीस या चालीस आयात बाक़ी होतीं तो आप सल्ल० खड़े होकर उनकी तिलावत फ़रमाते फिर (हालते क़याम से) रुकूअ में चले जाते, दूसरी रकअत में भी आप सल्ल० का यही मामूल होता।[4]

पहली तकबीर :

(1) (क़िबले की तरफ़ मुंह करके) अल्लाहु अकबर कहते हुए रफ़अ यदैन करें। अर्थात दोनों हाथों को (कंधों तक) उठाएं। हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० फ़रमाते हैं :

«رَأَيْتُ النَّبِيَّ ﷺ افْتَتَحَ التَّكْبِيْرَ فِي الصَّلٰوةِ فَرَفَعَ يَدَيْهِ حِيْنَ يُكَبِّرُ حَتّٰى يَجْعَلَهُمَا حَذْوَ مَنْكِبَيْهِ»

"मैंने नबी सल्ल० को देखा आपने नमाज़ की तकबीर कही और अपने

---

1. इब्ने माजा, हदीस 1230, हाफ़िज़ बूसीरी ने इसे सहीह कहा है। इससे मालूम हुआ कि किसी उज़्र के बिना बैठकर, नवाफ़िल या सुन्नतें अदा करने से निस्फ़ अज्र मिलता है।

2. अबू दाऊद, हदीस 948, हाकिम और ज़ेहबी ने इसको सहीह कहा है। आपने बैठकर नमाज़ पढ़ने की बजाए सुतून के सहारे खड़ा होने को वरीयता दी। इससे मालूम हुआ कि कोइ शरअी कारण हो तो किसी चीज़ का सहारा लेकर क़याम किया जा सकता है। चाहे फ़र्ज़ नमाज़ हो या नफ़िल।

3. मुस्लिम, हदीस 730। इससे मालूम हुआ कि आप सल्ल० ने कभी सारी रात इबादत नहीं फ़रमाई बल्कि आप सोते भी थे और उठकर इबादत भी करते थे।

4. बुख़ारी, हदीस 1119, व मुस्लिम, हदीस 731।

हाथ कंधों तक उठाए।"[1]

2. हाथ उठाते समय उंगलियां (नार्मल तरीक़े पर) खुली रखें। उंगलियों के बीच ज़्यादा फ़ासला करें न उंगलियां मिलाएं।[2]

3. रसूलुल्लाह सल्ल० दोनों हाथ कंधों तक उठाते।[3]

4. नबी अकरम सल्ल० (कभी कभी) हाथों को कानों तक बुलन्द फ़रमाते।[4]

शैख़ अलबानी फ़रमाते हैं कि (रफ़अ यदैन करते समय) हाथों से कानों को छूने की कोई दलील नहीं है। इनका छूना बिदअत है या वसवसा। मसनून तरीक़ा हथेलियां कंधों या कानों तक उठाना है। हाथ उठाने के मक़ाम में मर्द और औरत दोनों बराबर हैं। ऐसी कोई सहीह हदीस[5] मौजूद नहीं जिसमें यह भेद हो कि मर्द कानों तक और औरतें कंधों तक हाथ बुलन्द करें।

5. फिर दायां हाथ बाएं हाथ पर रखकर सीने पर बांध लें।

सीने पर हाथ बांधना :

हज़रत वाइल बिन हजर रज़ि० कहते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ नमाज़ पढ़ी। तो आपने अपने हाथ, दायां हाथ बाएं हाथ पर रखकर, सीने पर बांधे।[6]

---

1. बुख़ारी, हदीस 738। इसे पहली तकबीर इसलिए कहते हैं कि यह नमाज़ की सबसे पहली तकबीर है और इससे नमाज़ शुरू होती है और इसे तकबीरे तहरीमा भी कहते हैं क्योंकि उसके साथ ही बहुत सी चीज़ें नमाज़ी पर हराम हो जाती हैं।

2. अबू दाऊद, हदीस753। इसे इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, हदीस 735, व मुस्लिम, हदीस 390।

4. मुस्लिम, हदीस 391।

5. मक़बूल हदीस की चार बुनियादी क़िसमें हैं : 1. सहीह लज़ाता, 2. सहीह लग़ीरा, 3. हसन लज़ाता और 4. हसन लग़ीरा। लेकिन जब कोई मुहद्दिस इस तरह कहे कि "फ़लां मसले में कोई सहीह हदीस नहीं है" तो यह एक मुहावरा होता है इसका यह मतलब नहीं होता कि सहीह हदीस तो नहीं अलबत्ता हसन हदीस मौजूद है बल्कि इसका मतलब यह होता है कि (उसके नज़दीक) इस मसले में किसी क़िस्म की मक़बूल हदीस वारिद नहीं है।

6. इब्ने ख़ुज़ैमा 1/243, हदीस 479, इसे इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा ने सहीह कहा है।

हज़रत हलब रज़ि० फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को सीने पर हाथ रखे हुए देखा।[1]

हज़रत वाइल बिन हजर रज़ि० रसूलुल्लाह सल्ल० की नमाज़ का तरीक़ा बयान करते हुए फ़रमाते हैं कि आपने दाएं हाथ को बाएं की हथेली को (की पुश्त), उसके जोड़ और कलाई पर रखा।[2]

हमें भी दायां हाथ बाएं हाथ पर इस तरह रखना चाहिए कि दायां हाथ बाएं हाथ की हथेली की पुश्त, जोड़ और कलाई पर आ जाए और दोनों को सीने पर बांधा जाए ताकि तमाम रिवायात पर अमल हो सके।

हज़रत सहल बिन साअद रज़ि० से रिवायत है कि लोगों को रसूलुल्लाह सल्ल० की तरफ़ से यह हुक्म दिया जाता था : "नमाज़ में दायां हाथ बायीं कलाई (ज़राअ) पर रखें।"[3]

रही हज़रत अली रज़ि० की रिवायत कि सुन्नत यह है कि हथेली को हथेली पर ज़ेरे नाफ़ रखा जाए[4] तो उसे इमाम बैहेक़ी और हाफ़िज़ इब्ने हजर ने ज़ईफ़ क़रार दिया है और इमाम नववी फ़रमाते हैं कि उसके ज़ईफ़ होने पर सबकी सहमति है।

औरतों और मर्दों की नमाज़ में कोई अन्तर नहीं :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "नमाज़ इसी तरह पढ़ो जिस तरह तुम मुझे नमाज़ पढ़ते हुए देखते हो।"[5] अर्थात हूबहू मेरे तरीक़े के मुताबिक़ सब औरतें और सब मर्द नमाज़ पढ़ें। फिर अपनी तरफ़ से यह हुक्म लगाना कि औरतें सीने पर हाथ बांधें और मर्द ज़ेरे नाफ़ और औरतें सज्दा करते समय ज़मीन पर कोई और रूप इख़्तियार करें और मर्द कोई और...यह दीन में हस्तक्षेप है। याद रखें कि तकबीरे तहरीमा से शुरू करके "अस्सलामु आलैकुम

1. मुस्नद अहमद (5/226) हाफ़िज़ इब्ने अब्दुल बर और अल्लामा अज़ीम आबादी ने इसे सहीह कहा है।

2. नसाई, 490। इसे इब्ने हिबान (हदीस 485), इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 480) ने सहीह कहा है।

3. सहीह बुख़ारी, हदीस 740।

4. अबू दाऊद, हदीस 756।

5. सहीह बुख़ारी, हदीस 231।

व रहमतुल्लाहि" कहने तक औरतों और मर्दों के लिए एक हैयत (रूप) और एक ही शक्ल की नमाज़ है। सब का क़याम, रुकूअ, क़ौमा, सज्दा, जल्सा इस्तराहत, क़ाअदा और हर हर मक़ाम पर पढ़ने की पढ़ाई समान हैं। रसूलुल्लाह सल्ल० ने मर्द और औरत की नमाज़ के तरीक़े में कोई अन्तर नहीं बताया।

सीने पर हाथ बांधकर यह दुआ पढ़ें :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० तकबीर (ऊला) और क़िरअत के बीच कुछ देर चुप रहते। तो मैंने कहा : मेरे मां-बाप आप पर क़ुरबान, ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल०! आप तकबीर और क़िरअत के बीच ख़ामोश रहकर क्या पढ़ते हैं? आपने फ़रमाया : मैं यह पढ़ता हूं :

* «اَللّٰهُمَّ بَاعِدْ بَيْنِيْ وَبَيْنَ خَطَايَايَ كَمَا بَاعَدْتَّ بَيْنَ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ، اَللّٰهُمَّ نَقِّنِيْ مِنَ الْخَطَايَا، كَمَا يُنَقَّى الثَّوْبُ الأَبْيَضُ مِنَ الدَّنَسِ، اَللّٰهُمَّ اغْسِلْ خَطَايَايَ بِالْمَاءِ وَالثَّلْجِ وَالْبَرَدِ»

"या अल्लाह! मेरे और मेरे गुनाहों के बीच दूरी डाल दे जैसे तूने पूरब और पश्चिम के बीच दूरी रखी है। ऐ अल्लाह! मुझे गुनाहों से इस तरह पाक कर जैसा कि सफ़ेद कपड़ा मैल से पाक किया जाता है। ऐ अल्लाह! मेरे गुनाह (अपनी बख़्शिश से) पानी, बर्फ़ और ओलों से धो डाल।'[1]

या यह दुआ पढ़ें :

रसूलुल्लाह सल्ल० के पीछे एक व्यक्ति ने कहा :

* «اللهُ أَكْبَرُ كَبِيْرًا، وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ كَثِيْرًا، وَسُبْحَانَ اللهِ بُكْرَةً وَّأَصِيْلًا»

"अल्लाह सबसे बड़ा है। बहुत बड़ा। सारी प्रशंसा उसकी है। वह (हर बुराई से) पाक है। सुबह और शाम हम उसकी पाकी बयान करते हैं।"

यह सुनकर रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि : "इस व्यक्ति के लिए

---

1. सहीह बुख़ारी, हदीस 744, व सहीह मुस्लिम, हदीस 598।

आसमान के दरवाज़े खोल दिए गए हैं।"

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० ने फ़रमाया : जबसे मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० से यह बात सुनी है, मैंने इन कलिमात को कभी नहीं छोड़ा।[1]

या यह दुआ पढ़ें :

* «سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ وَبِحَمْدِكَ وَتَبَارَكَ اسْمُكَ وَتَعَالٰى جَدُّكَ وَلَآ إِلٰهَ غَيْرُكَ»

"ऐ अल्लाह तू पाक है, (हम) तेरी प्रशंसा के साथ (तेरी पाकी बयान करते हैं) तेरा नाम (बड़ा ही) बरकत वाला है, तेरी बुज़ुर्गी बुलन्द है, तेरे सिवा कोई माबूद नहीं।"[2]

फिर यह पढ़ें :

«أَعُوْذُ بِاللّٰهِ السَّمِيْعِ الْعَلِيْمِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيْمِ مِنْ هَمْزِهِ وَنَفْخِهِ وَنَفْثِهِ»

"अल्लाह की पनाह मांगता हूं जो (हर आवाज़ को) सुनने वाला (और हर चीज़ को) जानने वाला है, मर्दूद शैतान (के शर) से, उसके ख़तरे से, उसकी फूंकों से और उसके वसवसे से।"[3]

﴿بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝ مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ۝ إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ ۝ اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ۝ صِرَاطَ الَّذِيْنَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ غَيْرِ الْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّيْنَ ۝﴾ (الفاتحة ١/ ١-٧)

"अल्लाह के नाम से (शुरू करता हूं) जो बड़ी दया करने वाला अत्यन्त मेहरबान है। सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो तमाम प्राणियों का पालनहार

1. मुस्लिम, हदीस 601।

2. तिर्मिज़ी, हदीस 243 व सुनन अबी दाऊद, हदीस 775-776, इब्ने माजा, हदीस 806। इसे हाकिम (1/235) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. अबू दाऊद, हदीस 775। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 467) ने सहीह कहा है।

है। अत्यन्त रहम करने वाला अत्यन्त मेहरबान है। बदले के दिन का मालिक है। (ऐ अल्लाह!) हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझी से मदद मांगते हैं।'

---

2. रही बात ग़ैरुल्लाह से मदद मांगने की तो इस सिलसिले में निम्न तथ्य विचार्णीय हैं :

(1) अल्लाह तआला ने यह बात स्पष्ट रूप से फ़रमा दी है कि हर क़िस्म की मदद अल्लाह ही की तरफ़ से आती है। (आले इमरान 3 : 126, 160)

(2) अन्तर केवल यह है कि कभी अल्लाह तआला केवल अपने हुक्म (कलिमए कुन) की ताक़त से सीधे अपने बन्दों की मदद करता है (तमाम मोजिज़ात व करामात इसकी खुली मिसाल हैं) और कभी लोगों को साधनों और तौफ़ीक़ से नवाज़ता है तो वह एक दूसरे की मदद करते हैं।

(3) लेकिन जब किसी पाक रूह को हर चीज़ को जानने वाली और हर चीज़ पर क़ुदरत रखने वाली समझ कर पुकारा जाए या उसी अक़ीदे के साथ उस पाक रूह की तरफ़ संबंधित किसी चीज़ (बुत, क़ब्र या जानवर आदि) का सम्मान किया जाए ताकि उस पाक रूह की ग़ैबी समीपता हासिल हो और वह ख़ुश होकर हमारी हाजतरवाई और मुश्किलकुशाई करे, तो यह शिर्क अकबर है। क्योंकि हर चीज़ को जानना और हर चीज़ पर क़ुदरत रखना अल्लाह तआला का ख़ास गुण हैं जो उसने कभी किसी को प्रदान नहीं किया।

(4) केवल उसी ग़ैरुल्लाह से मदद मांगी जाएगी जिससे मदद मांगने का अल्लाह ने हुक्म दिया है जैसे अल्लाह तआला ने दुनिया के ज़िंदा इंसानों को (नेकी के कामों में) एक दूसरे से मदद लेने और एक दूसरे के काम आने का हुक्म दिया है। (अल-माइदा 5 : 2) मगर इंसानों को यह हुक्म नहीं दिया कि वह जिन्नों या पाक रूहों से ग़ैबी मदद का मुतालबा करें।

(5) जिस (अक़ीदे और) तरीक़े से अल्लाह से मदद मांगी जाती है उस (अक़ीदे और) तरीक़े से ग़ैरुल्लाह से मदद नहीं मांगी जाएगी।

(6) और जिस तरीक़े से अल्लाह तआला अपने प्राणियों की मदद करता है उस तरीक़े से प्राणी एक दूसरे की मदद नहीं कर सकते।

(7) केवल अल्लाह ही से हर प्रकार की मदद मांगी जा सकती है ग़ैरुल्लाह से ऐसी मदद मांगने के लिए ज़रूरी है कि अल्लाह ने उस ग़ैरुल्लाह को फ़रियादें सुनने और पूरा करने का इख़्तियार दिया हो और मजबूर व बेकस लोगों को उससे फ़रियाद करने का हुक्म दिया हो।

(8) अल्लाह तआला ने आत्म लोक में तमाम अंबिया अलैहिमुस्सलाम से यह

शेष अगले पृष्ठ पर

हमें सीधे रास्ते पर चला, उन लोगों के रास्ते पर जिन पर तूने इनाम किया।[1] जिन पर प्रकोप नहीं किया गया जो गुमराह नहीं हुए।" (आमीन)

हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल०, हज़रत अबूबक्र और उमर रज़ि० क़िरअत "अलहम्दुलिल्लाहि रब्बिल आलमीन" से शुरू करते।"[2]

हज़रत अनस रज़ि० कहते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल०, अबूबक्र, उमर

वायदा लिया था कि "अगर तुम्हारी ज़िंदगी में मेरा आख़िरी रसूल सल्ल० आ गया तो तुम्हें उस पर ईमान लाना होगा और उसकी मदद करना होगी, जो ऐसा नहीं करेगा वह अवज्ञाकारी हो जाएगा।" (आले इमरान 3 : 81-82)

(9) अब सवाल पैदा होता है कि क्या किसी साहिबे क़ब्र, बुज़ुर्ग की रूह को अल्लाह तआला ने अहले दुनिया का निगरां बनाया है? उसे लोगों की दुआएं सुनने का इख़्तियार दिया है? और क्या अहले दुनिया को उससे मदद मांगने का हुक्म दिया है?

क्या नबी अकरम सल्ल० ने अपनी पूरी पाक ज़िन्दगी में उल्लिखित वायदे के हवाले से या अपने तौर पर जंगों या मुसीबतों में कभी किसी नबी की रूह से परोक्ष रूप से मदद मांगी? यह नारा लगाया "या इब्राहीम अलैहि० अल मदद" "या ज़करिया अलैहि० अलमदद"? अलहम्दुलिल्लाह! किसी भी पैग़म्बर ने किसी पैग़म्बर की रूह से परोक्ष रूप से फ़रियाद नहीं की।

सहाबा किराम रज़ि० ने आपको देखे बिना या आपसे मुलाक़ात किए बिना (उल्लिखित अक़ीदे के साथ) कभी "या रसूलल्लाह" कहा? उनकी तदफ़ीन के बाद उन्हें अपना निगरां, आलिमुल ग़ैब, हाज़िर व नाज़िर और मुख़्तार कुल समझकर उनके हुज़ूर अपनी फ़रियादें पेश कीं?

पुराने ज़माने में कोई मज़ार था जहां नबी अकरम सल्ल०, सहाबा किराम रज़ि० ताबईन और तबअ ताबईन (रहिमल्लाह) सालाना उर्स व ज़ियारत के लिए क़ाफ़िला दर क़ाफ़िला पहुंचते हों?

असल में वसीले की इस बनावटी धारणा ने बन्दे की बेबसी व विनम्रता और बन्दगी को अल्लाह और बन्दों के बीच बांट दिया है जो कि अल्लाह के यहां एक नाक़ाबिले माफ़ी जुर्म है। अल्लाह हम सबको हिदायत प्रदान करे। आमीन!

1. इंनाम उसी को मिलता है जो सहीह अक़ीदा वाला हो जिसका अमल सुन्नते नबवी के ठीक मुताबिक़ हो जो केवल अल्लाह की रज़ा चाहे अक़ीदा व अमल में अगर कुफ़्र, शिर्क और बिदअत आ जाएं तो फिर इनाम नहीं मिला करता।

2. बुख़ारी, हदीस 743, व मुस्लिम, हदीस 399।

और उसमान रज़ि० के पीछे नमाज़ पढ़ी वह बुलन्द आवाज़ से "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" नहीं पढ़ते थे।[1]

आप "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" धीमे (आहिस्ता) पढ़ते थे।[2]

इमाम इब्ने तैमिया रह० फ़रमाते हैं कि हदीस की पहचान रखने वाले इस बात पर सहमत हैं कि (इमाम के लिए) बिस्मिल्लाह ज़ोर से पढ़ने की कोई सरीह रिवायत नहीं।

अगर नमाज़ में जमाई आ जाए तो उसे जहां तक हो सके रोकें, न रुके तो मुंह पर हाथ रखें और आवाज़ बुलन्द न करें।[3]

नमाज़ और सूरह फ़ातिहा :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«لاَ صَلٰوةَ لِمَنْ لَمْ يَقْرَأْ بِفَاتِحَةِ الْكِتَابِ»

"जिस व्यक्ति ने (नमाज़ में) सूरह फ़ातिहा नहीं पढ़ी उसकी नमाज़ नहीं।"[4]

हज़रत उबादा बिन सामित रज़ि० रिवायत करते हैं कि हम नमाज़ फ़ज्र में रसूलुल्लाह सल्ल० के पीछे थे आपने क़ुरआन पढ़ा तो आप पर पढ़ना भारी हो गया। जब नमाज़ से फ़ारिग हुए तो फ़रमाया : "शायद तुम अपने इमाम के पीछे पढ़ा करते हो?" हमने कहा हां, ऐ अल्लाह के रसूल! आपने फ़रमाया : "सिवाए फ़ातिहा के और कुछ न पढ़ा करो क्योंकि उस व्यक्ति की

---

1. मुस्लिम, हदीस 399।
2. इब्ने ख़ुज़ैमा, हदीस 495।
3. तिर्मिज़ी, हदीस 370। इमाम तिर्मिज़ी ने इसे सहीह कहा है।
4. बुख़ारी, हदीस 756, मुस्लिम, हदीस 394। इस हदीस से मालूम हुआ कि जो व्यक्ति भी नमाज़ में हो, अकेला हो या जमाअत के साथ, इमाम हो या मुक़तदी, मुक़ीम हो या मुसाफ़िर, फ़र्ज़ पढ़ रहा हो या नवाफ़िल, इमाम सूरह फ़ातिहा पढ़ रहा हो या कोई और सूरह, बुलन्द आवाज़ से पढ़ रहा हो या आहिस्ता अगर उसे सूरह फ़ातिहा आती हो फिर भी न पढ़े तो उसकी नमाज़ नहीं होगी। इस मसले की तफ़्सील रुकूअ के बयान में आएगी, इंशाअल्लाह।

नमाज़ नहीं होती जो सूरह फ़ातिहा न पढ़े।"[1]

एक रिवायत में (यह भी) है। नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि : "मैं (अपने दिल में कहता था) कि क़ुरआन का पढ़ना मुझ पर मुश्किल क्यों (हो रहा) है? फिर मैंने जान लिया कि तुम्हारे पढ़ने की वजह से मुश्किल हुआ। तो जब मैं पुकार कर पढ़ूं (जहरी नमाज़ में) तो क़ुरआन से सूरह फ़ातिहा के सिवा कुछ भी न पढ़ो।"[2]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिस व्यक्ति ने नमाज़ पढ़ी और उसमें सूरह फ़ातिहा न पढ़ी बस वह (नमाज़) नाक़िस है, नाक़िस है, नाक़िस है, पूरी नहीं।" अबू हुरैरह रज़ि० से पूछा गया, हम इमाम के पीछे होते हैं (फिर भी पढ़ें?) तो हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० ने कहा (हां) तू उसको दिल में पढ़।[3]

हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने अपने सहाबा रज़ि० को नमाज़ पढ़ाई। फ़ारिग होकर उनकी तरफ़ मुतवज्जह होकर पूछा क्या तुम अपनी नमाज़ में इमाम की क़िरअत के दौरान में पढ़ते हो? सब ख़ामोश रहे। तीन बार आपने उनसे पूछा, तो उन्होंने जवाब दिया हां! हम ऐसा करते हैं। आप सल्ल० ने फ़रमाया : "ऐसा न करो तुम केवल सूरह फ़ातिहा दिल में पढ़ लिया करो।"[4]

इन अहादीस से साबित हुआ कि मुक़तदियों को इमाम के पीछे (चाहे वह बुलन्द आवाज़ से क़िरअत करे या न करे) अलहम्दु शरीफ़ ज़रूर पढ़नी चाहिए।[5]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 823, तिर्मिज़ी, हदीस 311। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा 1581, इब्ने हिबान 460-461, बैहेक़ी ने सहीह जबकि इमाम तिर्मिज़ी और दारे क़ुतनी ने हसन कहा है।

2. अबू दाऊद, हदीस 824। दारे क़ुतनी ने इसे हसन और बैहेक़ी ने सहीह कहा है।

3. मुस्लिम, हदीस 395।

4. इब्ने हिबान, 5/152, 162, बैहेक़ी 2/166 इसकी सेहत के बारे में मज्मउज़्ज़वाइद में इमाम हैसमी फ़रमाते हैं : इसके सब रावी सिक़ा हैं। इब्ने हजर ने इसे हसन कहा है।

5. और अधिक जानकारी के लिए देखिए मेरी किताब "अल कवाकिबुद्दुरिया फ़ी वजूबुल फ़ातिहा" ख़ल्फ़ इमाम फ़ी जरीयह"

आमीन का मसला :

जब आप अकेले नमाज़ पढ़ रहे हों तो आमीन आहिस्ता कहें। जब ज़ोहर और अस्र इमाम के पीछे पढ़ें तो फिर भी आहिस्ता ही कहें। लेकिन जब आप जहरी नमाज़ में इमाम के पीछे हों तो जिस समय इमाम "वलज़्ज़ाल्लीन" कहे तो आपको ऊंची आवाज़ से आमीन कहनी चाहिए। बल्कि इमाम भी सुन्नत की पैरवी में आमीन पुकार कर कहे। और मुक़तदियों को इमाम के आमीन शुरू करने के बाद आमीन कहनी चाहिए।[1]

हज़रत वाइल बिन हजर रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैंने सुना रसूलुल्लाह सल्ल० ने पढ़ा। "ग़ैरिल मग़ज़ूबि अलैहिम वलज़्ज़ॉल्लीन" फिर आपने बुलन्द आवाज़ से आमीन कही।[2]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते हैं कि जब रसूलुल्लाह सल्ल० "ग़ैरिल मग़ज़ूबि अलैहिम वलज़्ज़ॉल्लीन" पढ़ते तो आप कहते आमीन। (इतनी ऊंची आवाज़ से) कि पहली पंक्ति में आपके आस पास के लोग सुन लेते।[3]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब इमाम आमीन कहे तो तुम भी आमीन कहो। जिस व्यक्ति की आमीन फ़रिश्तों की आमीन के समान हो गई तो उसके पहले सब गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।"[4]

---

1. अर्थात आमीन का आग़ाज़ पहले इमाम करेगा उसकी आवाज़ सुनते ही तमाम मुक़तदी हज़रात भी आमीन कहेंगे इमाम से पहले या बाद में ऊंची आमीन कहना सही नहीं है (मुहम्मद अब्दुल जब्बार) लेकिन अगर इमाम बुलन्द आवाज़ से आमीन न कहे तो मुक़तदी हज़रात को आमीन कह देनी चाहिए क्योंकि नबी अकरम सल्ल० का आज्ञा पालन, इमाम के अनुसरण पर मुक़द्दम है।

2. तिर्मिज़ी, हदीस 248, अबू दाऊद, हदीस 932, तिर्मिज़ी ने हसन जबकि इब्ने हजर और इमाम दारे कुतनी ने सहीह कहा है।

3. बैहेक़ी (2/58), इब्ने ख़ुज़ैमा, हदीस 571, इब्ने हिबान, हदीस 462। इसे इमाम हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

4. बुख़ारी, हदीस 780, मुस्लिम हदीस 410। इस हदीस से मालूम हुआ कि जिस मुक़तदी ने अभी सूरह फ़ातिहा शुरू या ख़त्म नहीं की वह भी आमीन कहने में दूसरों के साथ शरीक होगा ताकि उसे भी पिछले गुनाहों की माफ़ी मिल जाए बाद में वह अपनी फ़ातिहा मुकम्मल करके दोबारा आहिस्ता आमीन कहेगा।

इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा इस हदीस की तशरीह में फ़रमाते हैं : इस हदीस से साबित हुआ कि इमाम ऊंची आवाज़ से आमीन कहे क्योंकि नबी सल्ल० मुक़तदी को इमाम की आमीन के साथ आमीन कहने का हुक्म इसी सूरत में दे सकते हैं जब मुक़तदी को मालूम हो कि इमाम अमीन कह रहा है। कोई विद्वान कल्पना नहीं कर सकता कि रसूलुल्लाह सल्ल० मुक़तदी को इमाम की आमीन के साथ आमीन कहने का हुक्म दें जबकि वह अपने इमाम की आमीन को सुन न सके।[1]

नईम मुजमिर रज़ि० फ़रमाते हैं कि हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० ने हमें रसूलुल्लाह सल्ल० के तरीक़े के मुताबिक़ नमाज़ पढ़ाई फिर नईम उस तरीक़े को बयान करते हुए कहते हैं कि उन्होंने आमीन कही और जो लोग आपके अनुसरण में नमाज़ अदा कर रहे थे उन्होंने भी आमीन कही।[2]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० और उनके मुक़तदी इतनी बुलन्द आवाज़ से आमीन कहा करते थे कि मस्जिद गूंज उठती थी।[3]

इकरिमा रह० फ़रमाते हैं : "मैंने देखा कि इमाम जब "वलज़्ज़ॉल्लीन" कहता तो लोगों के आमीन की वजह से मस्जिद गूंज जाती।[4]

अता बिन अबी रिबाह रह० फ़रमाते हैं : "मैंने दो सौ (200) सहाबा किराम को देखा कि बैतुल्लाह में जब इमाम "वलज़्ज़ॉल्लीन" कहता तो सब बुलन्द आवाज़ से आमीन कहते।"[5]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जितने यहूदी, सलाम और आमीन से चिढ़ते हैं उतना किसी और चीज़ से नहीं चिढ़ते। तो तुम अधिकता से आमीन कहना।"[6]

---

1. सहीह इब्ने ख़ुज़ैमा, 1/286।

2. नसाई, 2/134, इब्ने ख़ुज़ैमा 1/251, हदीस 499। इसे हाकिम, ज़ेहबी और बैहेक़ी ने सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, 2/262, (लेखक अब्दुर्रज़्ज़ाक़ 2/96) इमाम बुख़ारी रह० ने इसे हज़्म के कलिमे के साथ ज़िक्र किया है। जो इसके सहीह होने की दलील है।

4. लेखक इब्ने अबी शैबा, 2/187।

5. बैहेक़ी 2/59। किताबुस्सिक़ात, इब्ने हिबान, इसकी सनद इमाम इब्ने हिबान की शर्त पर सहीह है।

6. इब्ने माजा, हदीस 856। इसे इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा 1/288, हदीस 574, 3/38 हदीस 1585 और बूसीरी ने सहीह कहा है।

हाफ़िज़ इब्ने अब्दुल बर रह० ने ज़िक्र किया कि इमाम अहमद बिन हंबल रह० उस व्यक्ति पर सख़्त नाराज़ होते जो बुलन्द आवाज़ से आमीन कहने को मक्रूह समझता। क्योंकि यहूदी आमीन से चिढ़ते हैं।

दुआ, तअव्वुज़ (अऊज़ुबिल्लाह), तस्मिया (बिस्मिल्लाह) और सूरह फ़ातिहा पढ़कर आमीन कह चुकने के बाद क़ुरआन मजीद में से जो कुछ याद हो उसमें से कुछ पढ़ें।[1]

तिलावत के शिष्टाचार :

हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० से रिवायत है :

«يُقَطِّعُ قِرَاءَتَهُ آيَةً آيَةً»

"रसूलुल्लाह सल्ल० क़ुरआन मजीद की हर आयत पर ठहरते (बाद वाली आयत को पहली आयत के साथ नहीं मिलाते थे।)"[2]

यह हदीस कसरत तर्क़ के साथ मरवी है। इस मसले में उसको बुनियादी हैसियत हासिल है। अइम्मा सल्फ़ सालेहीन की एक जमाअत हर आयत पर ठहर जाती थी अगर बाद की आयत अर्थ के हिसाब से पहले आयत के साथ संबंधित होती थी फिर भी अलग करके पढ़ते थे। तिलावत क़ुरआन का मसनून तरीक़ा यही है लेकिन आज सारे क़ारी इस तरह तिलावत करने से बचते हैं।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "नमाज़ी अपने रब के साथ सरगोशी करता है। उसे ध्यान करना चाहिए कि वह किस क़िस्म की सरगोशी कर रहा है और तुम क़ुरआन मजीद ऊंची आवाज़ के साथ तिलावत करके अपने साथियों को परेशानी में न डालो।"[3]

रसूलुल्लाह सल्ल०, अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ आहिस्ता आहिस्ता क़ुरआन पाक की तिलावत फ़रमाते बल्कि एक एक अक्षर अलग अलग पढ़ते।

---

1. बुख़ारी, हदीस 793।

2. अबू दाऊद, हदीस 4001, (हदीस 1466) इसे इमाम हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. मोत्ता इमाम मालिक, 1/80, अबू दाऊद, हदीस 1332। इसे इब्ने ख़ुज़ेमा ने सहीह कहा है।

यूं मालूम होता कि छोटी सूरत, लम्बी सूरत से भी ज़्यादा लम्बी हो गई। अतएव आपका इरशाद है कि : "हाफ़िज़ क़ुरआन को कहा जाएगा : "तुम क़ुरआन पढ़ते जाओ और जन्नत की सीढ़ियां चढ़ते जाओ। जिस तरह तुम दुनिया में आहिस्ता आहिस्ता पढ़ा करते थे इस तरह पढ़ते चलो। तुम्हारी मंज़िल वहां है जहां तुम्हारा क़ुरआन (पढ़ना) ख़त्म होगा।"[1]

रसूले अकरम सल्ल० क़ुरआन को अच्छी आवाज़ से पढ़ने का हुक्म फ़रमाते इसलिए कि मधुर आवाज़ के साथ क़ुरआन पाक पढ़ने में मज़ीद हुस्न पैदा होता है।[2]

हज़रत उक़बा बिन आमिर रज़ि० फ़रमाते हैं : "अल्लाह की किताब का ज्ञान हासिल करो। उसको ज़ेहन में महफ़ूज़ करो और उसे मधुर आवाज़ से पढ़ो। मुझे उस ज़ात की क़सम जिसके हाथ में मेरी जान है ऊंट के घुटनों की रस्सी अगर खोल दी जाए तो वह इतनी तेज़ी से नहीं भागता जितना तेज़ी से क़ुरआन पाक हाफ़िज़ से निकल जाता है।"[3]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "अल्लाह तआला किसी आवाज़ के लिए इतना कान नहीं लगाता जितना वह अच्छी आवाज़ के साथ क़ुरआन पाक पढ़ने पर लगाता है।"[4]

नमाज़ की मसनून क़िरअत :

अकेला नमाज़ी जहां से और जितना चाहे क़ुरआन मजीद पढ़ सकता है। अलबत्ता इमाम को नमाज़ पढ़ते समय मुक़तदियों की हालत को देखते हुए ज़रूर सार से काम लेना चाहिए।

नमाज़ में यद्यपि हम जहां से चाहें क़ुरआन पढ़ सकते हैं, लेकिन यहां हम नबी सल्ल० की क़िरअत का ज़िक्र करते हैं कि आप कौन कौन सी सूरत किस किस नमाज़ में पढ़ते थे।

---

1. अबू दाऊद, हदीस 1464, इब्ने हिबान और तिर्मिज़ी, हदीस 2919 ने इसे सहीह कहा है।

2. अबू दाऊद, हदीस 1468, इसे इमाम इब्ने हिबान और इब्ने ख़ुज़ैमा ने सहीह कहा है।

3. दारमी, हदीस 3352, व मुसनद अहमद 4/146 व 150।

4. बुख़ारी, हदीस 5023-5024 व मुस्लिम, हदीस 792।

सूरह इख़्लास का महत्व :

एक अंसारी, मस्जिदे क़ुबा में इमामत कराते थे। उनका तरीक़ा था कि सूरह फ़ातिहा के बाद कोई दूसरी सूरह पढ़ने से पहले "क़ुल हुवल्लाहु अहद" (अर्थात सूरह इख़्लास) तिलावत फ़रमाते, हर रकअत में इसी तरह करते। मुक़तदियों ने इमाम से कहा कि आप पहले "क़ुल हुवल्लाहु अहद" की तिलावत करते हैं फिर बाद में दूसरी सूरह मिलाते हैं, क्या एक सूरह तिलावत के लिए काफ़ी नहीं है? अगर "क़ुल हुवल्लाहु अहद" की तिलावत काफ़ी नहीं तो उसको छोड़ दें और दूसरी सूरह की तिलावत किया करें। इमाम ने जवाब दिया, मैं "क़ुल हुवल्लाहु अहद" की तिलावत नहीं छोड़ सकता। उन्होंने रसूलुल्लाह सल्ल० की ख़िदमत में मसला पेश किया तो नबी सल्ल० ने इमाम से कहा कि "तुम मुक़तदियों की बात क्यों तस्लीम नहीं करते उस सूरह को हर रकअत में क्यों लाज़मी पढ़ते हो? उन्होंने कहा मुझे इस सूरह के साथ मुहब्बत है। नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "इस सूरह के साथ तेरी मुहब्बत तुझे जन्नत में दाख़िल करेगी।"[1]

एक सहाबी ने नबी सल्ल० से कहा कि मेरा एक पड़ौसी रात के क़याम (नमाज़) में केवल "क़ुल हुवल्लाहु अहद" तिलावत करता है दूसरी कोई आयत तिलावत नहीं करता। आपने फ़रमाया : "उस ज़ात की क़सम जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है यह सूरत तिहाई क़ुरआन के बराबर है।"[2]

नमाज़े जुमा और ईदैन में तिलावत :

हज़रत नोमान बिन बशीर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० दोनों ईदों और जुमा (की नमाज़ों) में "सब्बिहिस्मा रब्बिकल आला" और

---

1. बुख़ारी, इमाम तिर्मिज़ी ने इसे हसन सहीह ग़रीब कहा है देखिए : सुनन तिर्मिज़ी, हदीस 2906। याद रहे कि ग़रीब हदीस वह होती है जिसका रावी किसी वर्ग (या ज़माने) में केवल एक हो और किसी हदीस का ग़रीब होना उसके मक़बूल या मर्दूद होने की दलील नहीं बल्कि अगर इसमें मक़बूल हदीस की शराइत मौजूद हैं तो वह मक़बूल हदीस है वरना मर्दूद है। इस हदीस से मालूम होता है कि नमाज़ में सूरतों को तर्तीब से तिलावत करना ज़रूरी नहीं।

2. सहीह बुख़ारी, हदीस 5015, सहीह मुस्लिम, हदीस 811-812।

"हल अता-क हदीसुल ग़ाशियह" पढ़ते थे। नोमान बिन बशीर रज़ि० ने कहा जब ईद और जुमा एक दिन में जमा होते तो फिर भी नबी सल्ल० ये दोनों सूरतें दोनों नमाज़ों में पढ़ते।"[1]

अब्दुल्लाह बिन अबी राफ़ेअ से रिवायत है कि मरवान ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० को मदीने का गवर्नर मुक़र्रर किया और स्वयं मक्का चले गए। वहां हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० ने जुमा की नमाज़ पढ़ाई और उसमें सूरह जुमा और मुनाफ़िक़ून पढ़ीं और कहा कि इन सूरतों को जुमा में पढ़ते हुए मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को सुना था।"[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० ईद क़ुरबान और ईदुल फ़ित्र में "क़ाफ़ वल क़ुरआनिल मजीद" और "इक़-त-र-ब तिस्साअतु" पढ़ते थे।[3]

जुमा के दिन नमाज़े फ़ज्र में :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० जुमा के दिन फ़ज्र की नमाज़ में "अलिफ़०लाम०मीम० तंज़ील" पहली रकअत में और "हल अता-क अ़लल इंसान" दूसरी रकअत में पढ़ते थे।[4]

नमाज़े फ़ज्र में :

हज़रत जाबिर बिन समरा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़े फ़ज्र में सूरह "क़ाफ़ वल क़ुरआनिल मजीद" और उसकी तरह (कोई और सूरह) पढ़ते थे।[5]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने हमें मक्का फ़तह होने के बाद फ़ज्र की नमाज़ पढ़ाई अतः सूरह मोमिनून "क़द अफ़लहल मोमिनून" शुरू की यहां तक कि मूसा और हारून अलैहिस्सलाम का ज़िक्र आया (तो) नबी सल्ल० को खांसी आ गई और आप रुकूअ में चले गए।[6]

1. मुस्लिम, हदीस 878।
2. मुस्लिम, हदीस 877।
3. मुस्लिम, हदीस 891।
4. बुख़ारी, हदीस 891 व मुस्लिम हदीस 879।
5. मुस्लिम, हदीस 458।
6. मुस्लिम, हदीस 455।

हज़रत अम्र बिन हारीस रज़ि० रिवायत करते हैं कि उन्होंने रसूलुल्लाह सल्ल० को नमाज़े फ़ज्र में "वल्लैलि इज़ा अ़स्असा" (अर्थात सूरह तकवीर) पढ़ते हुए सुना।[1]

हज़रत उक़बा बिन आमिर रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैं सफ़र में रसूलुल्लाह सल्ल० की ऊंटनी की महार पकड़े हुए चल रहा था। आप (सफ़र में) नमाज़ सुबह के लिए उतरे तो आपने सुबह की नमाज़ में "क़ुल अऊज़ु बिरब्बिल फ़लक़" और "क़ुल अऊज़ु बिरब्बिन्नास" पढ़ी।[2]

हज़रत मुआज़ बिन अब्दुल्लाह रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने नमाज़े फ़ज्र में दोनों रकअतों में "इज़ा ज़ुलज़िलत" तिलावत फ़रमाई।[3]

रसूलुल्लाह सल्ल० फ़ज्र की सुन्नत की दोनों रकअतों में निहायत हल्की क़िरअत फ़रमाते।[4] यहां तक कि हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं : मुझे सन्देह गुज़रता कि शायद नबी सल्ल० ने सूरह फ़ातिहा भी नहीं पढ़ी।"[5]

आप सल्ल० सुन्नतों की पहली रकअत में "क़ुल या अय्युहल काफ़िरून" और दूसरी रकअत में "क़ुल हुवल्लाहु अहद" पढ़ते।[6]

ज़ोहर व अस्र की नमाज़ में :

हज़रत अबू क़तादा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ज़ोहर व अस्र की पहली दो रकअतों में सूरह फ़ातिहा और कोई एक सूरह पढ़ते और पिछली दो रकअतों में केवल फ़ातिहा पढ़ते थे और कभी कभार हमें एक आध आयत (बुलन्द आवाज़ से पढ़कर) सुना देते थे।[7]

---

1. मुस्लिम, हदीस 456।

2. नसाई 2/158 व 8/252, अबू दाऊद, हदीस 1462। इसे हाकिम 1/240, इब्ने ख़ुज़ैमा और इब्ने हिबान ने सहीह कहा है।

3. अबू दाऊद, हदीस 816। इसे इमाम नववी ने सहीह कहा है।

4. मुस्नद इमाम अहमद, (6/183) इसकी सनद सहीह है।

5. बुख़ारी, हदीस 1171, व मुस्लिम, हदीस 724।

6. मुस्लिम, हदीस 726।

7. सहीह बुख़ारी, हदीस 776, सहीह मुस्लिम, हदीस 451। याद रहे कि सहीह बुख़ारी के पुराने नुस्ख़ों में किताबुल अज़ान एक मोटी किताब है जिसमें अज़ान के अलावा

शेष अगले पृष्ठ पर

हज़रत जाबिर बिन समरा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ज़ोहर में "वल्लैलि इज़ा यग़शा" पढ़ते थे। एक और रिवायत में है कि "सब्बिहिस्मा रब्बिकल आला" और अस्त्र में भी इसकी मानिन्द (कोई सूरह) पढ़ते थे और फ़ज्र में लम्बी सूरतें पढ़ते थे।[1]

हज़रत जाबिर बिन समरा रज़ि० की एक रिवायत है जिसमें नबी सल्ल० का ज़ोहर और अस्त्र में "वस्समा-इ ज़ातिल बुरूज" और "वस्समा-इ वत तारिक़" पढ़ना आया है।[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० ज़ोहर की आख़िरी दोनों रकअतों में पंद्रह आयात के बराबर क़िरअत फ़रमाते।[3]

मालूम हुआ कि आख़िरी दोनों रकअतों में सूरह फ़ातिहा के बाद क़िरअत मसनून है। और कभी आप आख़िरी दो रकअतों में केवल फ़ातिहा की क़िरअत फ़रमाते।[4]

जबकि नमाज़े अस्त्र की पहली दोनों रकअतों में हर रकअत के अंदर 15 आयात तिलावत फ़रमाते।[5] और आख़िरी दो दकअतों में केवल फ़ातिहा पढ़ते।[6]

हज़रत अबू मअमर रह० ने ख़ब्बाब रज़ि० से कहा : क्या रसूलुल्लाह सल्ल० ज़ोहर व अस्त्र में क़िरअत करते थे? ख़ब्बाब रज़ि० ने कहा : हां, पूछा गया कि आपको कैसे मालूम हुआ? ख़ब्बाब फ़रमाने लगे कि आपकी दाढ़ी की जुंबिश से।[7]

अन्य विषयों की अहादीस भी शामिल हैं कुछ आधुनिक नुस्ख़ों में हर विषय की अहादीस को नया शीर्षक देकर अलग किताब बना दिया गया है (अध्याय वही हैं) अतएवं जदीद नुस्ख़ों में बुख़ारी की यह हदीस किताब सुफ़तुस्सलात में मिलेगी जबकि पुराने नुस्ख़ों में किताबुल अज़ान में मिलेगी हमने दोनों हवाले दे दिए हैं।

1. मुस्लिम, हदीस 459-460।
2. अबू दाऊद, हदीस 805, इब्ने हिबान (हदीस 465) ने इसे सहीह कहा है।
3. मुस्लिम, हदीस 452।
4. बुख़ारी, हदीस 776, मुस्लिम, हदीस 451।
5. मुस्लिम, हदीस 452।
6. सहीह बुख़ारी, हदीस 776, व सहीह मुस्लिम, हदीस 451।
7. बुख़ारी, हदीस 777।

मालूम हुआ कि ज़ोहर व अस्र की नमाज़ों में आप सिर्री (अर्थात दिल में) क़िरअत करते थे।

कभी आपकी क़िरअत लम्बी होती। एक बार ज़ोहर की जमाअत की इक़ामत हुई तो एक व्यक्ति अपने घर से बक़ीअ क़ब्रिस्तान की तरफ़ पेशाब पाख़ाना के लिए गया वहां से फ़ारिग होकर घर पहुंचा वुज़ू किया फिर मस्जिद आया तो मालूम हुआ कि अभी तक नबी सल्ल० पहली रकअत में हैं।[1]

सहाबा किराम रज़ि० फ़रमाते हैं कि आप पहली रकअत को इतना लम्बा इसलिए फ़रमाते थे कि नमाज़ी पहली रकअत में ही शरीक हो सकें।[2]

नमाज़े मग़रिब में :

हज़रत जुबैर बिन मुतइम रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को नमाज़े मग़रिब में सूरह तूर पढ़ते सुना।[3]

उम्मे फ़ज़्ल दी बेटी हारिसा रज़ि० कहती हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को (नमाज़) मग़रिब में सूरह "वल मुरसलाति उरफ़ा" पढ़ते हुए सुना।[4]

हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने नमाज़ मग़रिब, सूरह आराफ़ के साथ पढ़ी और उस सूरह को दोनों रकअतों में अलग अलग पढ़ा।[5]

नमाज़े इशा में :

हज़रत बराअ बिन आज़िब रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को नमाज़ इशा में "वत-तीनि वज़-ज़ैतूनि" पढ़ते हुए सुना और मैंने नबी सल्ल० से ज़्यादा ख़ुश आवाज़ किसी को नहीं सुना।[6]

हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ि० ने इशा की नमाज़ में सूरह बक़रा पढ़ी।

---

1. मुस्लिम, हदीस 454।
2. अबू दाऊद, हदीस 800। इस हदीस की असल बुख़ारी और मुस्लिम में मौजूद है।
3. बुख़ारी, हदीस 765 व मुस्लिम, हदीस 463।
4. बुख़ारी, हदीस 763 व मुस्लिम, हदीस 462।
5. नसाई (2/170) इसे इमाम नववी ने हसन कहा है।
6. बुख़ारी, हदीस 769, व मुस्लिम, हदीस 464।

मुक़तदियों में से, एक खेती बाड़ी का काम करने वाले ने सलाम फेर दिया। फिर उसने रसूलुल्लाह सल्ल० की ख़िदमत में हाज़िर होकर अर्ज़ किया : ऐ अल्लाह के रसूल! हम लोग ऊंटों वाले हैं, दिन भर मेहनत मुशक़्क़त करते हैं। मुआज़ ने इशा में सूरह बक़रा शुरू कर दी। (मुझे दिन के थके हुए को लम्बी क़िरअत से कष्ट हुआ) हादी आलम सल्ल० ने मुआज़ रज़ि० से कहा : "तू लोगों को नफ़रत दिलाता है और फ़ितना खड़ा करता है? आप सल्ल० ने तीन बार यह बात दोहराई (फिर फ़रमाया) जब तुम जमाअत कराओ तो "वश-शम्सि वज़्ज़ुहा-" और "वल्लैलि इज़ा यग़शा" और "सब्बिहिस्मा रब्बिकल आला" की तिलावत करो इसलिए कि तेरे पीछे बूढ़े, कमज़ोर और ज़रूरतमंद (भी) नमाज़ अदा करते हैं।"[1]

इस हदीस से इशा की नमाज़ की क़िरअत भी मालूम हुई और साथ ही इस हदीस ने नमाज़ के इमामों को भी सचेत कर दिया है कि वह नमाज़ पढ़ाते समय मुक़तदियों का ख़ास तौर पर ध्यान रखें और ख़ूब समझें कि नमाज़ में मुक़तदियों के हालात को देखते हुए कमी करना रसूलुल्लाह सल्ल० की सुन्नत है।

विभिन्न आयतों का जवाब :

हमारे यहां यह रिवाज है कि इमाम जब कुछ ख़ास आयात की तिलावत करता है तो वह और कुछ मुक़तदी, नमाज़ में ऊंची आवाज़ से उनका जवाब देते हैं। यह सही नहीं है क्योंकि इस बारे में कोई सहीह जवाब दे तो जाइज़ है अतएव हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि० रसूलुल्लाह सल्ल० की नमाज़े तहज्जुद की कैफ़ियत बयान करते हैं कि जब आप तस्बीह वाली आयत पढ़ते तो तस्बीह करते जब सवाल वाली आयत तिलावत करते तो सवाल करते और जब तअव्वुज़ वाली आयत पढ़ते तो अल्लाह की पनाह पकड़ते।[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० का तरीक़ा था कि जब आप (नमाज़ आदि में) "अलै-स ज़ालि-क बिक़ादिरिन अ़ला अयं युहूयियल मौता" (अल-क़ियामह 75/40) तिलावत फ़रमाते तो "सुब्हा-न-क फ़ बला" कहते और जब "सब्बि

1. बुख़ारी, हदीस 705, व मुस्लिम, हदीस 465।
2. मुस्लिम, हदीस 772।

हिस-म रब्बिकल आला" (अल-आला 87/1) कहते तो "सुब्हा-न रब्बियल आला" कहते।[1]

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० जब "रब्बिहिस-म रब्बिकल आला" पढ़ते तो "सुब्हा-न रब्बियल आला" कहते।[2]

सूरह ग़ाशियह के समापन पर "अल्लाहुम-म हासिबी हिसाबयं यसीरा" कहने की कोई दलील नहीं। किसी हदीस में अदना सा इशारा भी नहीं कि नबी सल्ल० ने इन कलिमात को सूरह ग़ाशियह के समापन पर कहा हो।

हज़रत उसमान बिन अबी अल आस रज़ि० ने रसूलुल्लाह सल्ल० से मालूम किया कि : ऐ अल्लाह के रसूल! शैतान मेरी नमाज़ और मेरी क़िरअत के बीच हाइल हो जाता है। और क़िरअत में गड़बड़ी पैदा करता है। आपने फ़रमाया : "उस शैतान का नाम "ख़िन्ज़ब" है जब तुझे उसका ध्यान आए तो "अऊज़ुबिल्लाह" के (पूरे) कलिमात पढ़ो और बायीं तरफ़ तीन बार थुतकारो (थू करो)।

हज़रत उसमान बिन अबी अल आस रज़ि० बयान करते हैं कि मैंने ऐसे ही किया, अतएव अल्लाह ने उसे (शैतान को) मुझसे दूर कर दिया।"[3]

नमाज़ के बीच कोई सोच आने पर नमाज़ बातिल नहीं होती। हज़रत उक़बा बिन हारिस रज़ि० फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ नमाज़े अस्र पढ़ी। नमाज़ के बाद आप फ़ौरन खड़े हो गए और पाक पत्नियों के पास तशरीफ़ ले गए फिर वापस तशरीफ़ लाए, सहाबा रज़ि० के चेहरों पर हैरत के चिन्ह देखकर फ़रमाया : "मुझे नमाज़ के दौरान याद आया कि हमारे घर में सोना रखा हुआ है और मुझे एक दिन या एक रात के लिए भी अपने घर में सोना रखना पसन्द नहीं अतः मैंने उसे बांटने का हुक्म दिया।"[4]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 587, अध्याय दुआ फ़िस्सलात, हदीस 884। इसे इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है। हदीस 884 जिहालत रावी की वजह से ज़ईफ़ है।

2. अबू दाऊद, हदीस 883। इसे इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. मुस्लिम, हदीस 2203ह।

4. बुख़ारी, हदीस 851।

नमाज़ में रोना :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन शख़ीर रज़ि० फ़रमाते हैं कि मैंने रसूले अकरम सल्ल० को नमाज़ पढ़ते देखा। नमाज़ में रोने की वजह से आपके सीने से चक्की के चलने की-सी आवाज़ आ रही थी।[1]

रफ़अ यदैन :

रफ़अ यदैन अर्थात दोनों हाथों का उठाना नमाज़ में चार जगह साबित है :

1. शुरू नमाज़ में तकबीरे तहरीमा कहते समय, 2. रुकूअ से पहले, 3. रुकूअ के बाद और 4. तीसरी रकअत के शुरू में।

इन स्थानों पर रफ़अ यदैन करने के तर्क निम्न हैं :

1. हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० फ़रमाते हैं :

«صَلَّيْتُ خَلْفَ أَبِيْ بَكْرٍ الصِّدِّيْقِ رَضِيَ اللهُ عَنْهُ فَكَانَ يَرْفَعُ يَدَيْهِ إِذَا افْتَتَحَ الصَّلٰوةَ وَإِذَا رَكَعَ وَإِذَا رَفَعَ رَأْسَهُ مِنَ الرُّكُوْعِ وَقَالَ أَبُوْبَكْرٍ صَلَّيْتُ خَلْفَ رَسُوْلِ اللهِ ﷺ فَكَانَ يَرْفَعُ يَدَيْهِ إِذَا افْتَتَحَ الصَّلٰوةَ وَإِذَا رَكَعَ وَإِذَا رَفَعَ رَأْسَهُ مِنَ الرُّكُوْعِ»

"मैंने अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० के पीछे नमाज़ पढ़ी वह नमाज़ के शुरू में, और रुकूअ से पहले और जब रुकूअ से सर उठाते तो अपने दोनों हाथ (कंधों तक) उठाते थे और कहते थे कि रसूलुल्लाह सल्ल० भी नमाज़ के शुरू में, रुकूअ से पहले और रुकूअ से सर उठाने के बाद (इसी तरह) रफ़अ यदैन करते थे।"[2]

2. हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने एक बार लोगों को नमाज़ का तरीक़ा बताने का इरादा किया तो क़िबला रुख़ होकर खड़े हो गए और दोनों हाथों को कंधों तक उठाया, फिर अल्लाहु अकबर कहा, फिर रुकूअ किया और उसी तरह (हाथों को बुलन्द) किया और रुकूअ से सर उठाकर भी रफ़अ यदैन किया।[3]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 904, नसाई 18।
2. बैहेक़ी, 2/73 व सनद सहीह।
3. बैहेक़ी, 1/415-416।

3. हज़रत अली रज़ि० फ़रमाते हैं : कि रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ के शुरू में, रुकूअ में जाने से पहले और रुकूअ से सर उठाने के बाद और दो रकअतें पढ़कर खड़े होते समय रफ़अ यदैन करते थे।[1]

4. हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० फ़रमाते हैं : रसूलुल्लाह सल्ल० शुरू नमाज़ में, रुकूअ से पहले और रुकूअ के बाद अपने दोनों हाथ कंधों तक उठाया करते थे।[2]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० (स्वयं भी) शुरू नमाज़ में, रुकूअ से पहले, रुकूअ के बाद और दो रकअतें पढ़कर खड़े होते समय रफ़अ यदैन करते थे और फ़रमाते थे कि रसूलुल्लाह सल्ल० भी इसी तरह करते थे।[3]

इमाम बुख़ारी के उस्ताद, अली बिन मदीनी रह० फ़रमाते हैं कि हदीस इब्ने उमर रज़ि० की बिना पर मुसलमानों पर रफ़अ यदैन करना ज़रूरी है।[4]

5. हज़रत मालिक बिन हुवेरिस रज़ि० शुरू नमाज़ में रफ़अ यदैन करते, फिर जब रुकूअ करते तो रफ़अ यदैन करते, और जब रुकूअ से सर उठाते तो रफ़अ यदैन करते और यह फ़रमाते थे कि रसूलुल्लाह सल्ल० भी इसी तरह किया करते थे।[5]

6. हज़रत वाइल बिन हजर रज़ि० फ़रमाते हैं : मैंने नबी अकरम सल्ल० को देखा, जब आप नमाज़ शुरू करते तो अल्लाहु अकबर कहते और अपने दोनों हाथ उठाते। फिर अपने हाथ कपड़े में ढांक लेते फिर दायां हाथ बाएं पर रखते। जब रुकूअ करने लगते तो कपड़ों से हाथ बाहर निकालते, अल्लाहु अकबर कहते और रफ़अ यदैन करते, जब रुकूअ से उठते तो "समिअल्लाहु लिमन हमिदा" कहते और रफ़अ यदैन करते।[6]

हज़रत वाइल बिन हजर 9 हि० और 10 हि० में रसूलुल्लाह सल्ल० के पास आए। अतः साबित हुआ कि रसूलुल्लाह सल्ल० 10 हि० तक रफ़अ यदैन करते थे, 11 हिजरी में नबी सल्ल० ने वफ़ात पाई अतः आख़िर उमर

---

1. अबू दाऊद, हदीस 744। इसे इमाम अलबानी ने हसन सहीह कहा है।
2. सहीह बुख़ारी, हदीस 735-736, 738 व सहीह मुस्लिम, हदीस 390।
3. सहीह बुख़ारी, हदीस 739।
4. अल तलख़ीसुल कबीर, भाग 1, पृ० 218, तबअ़ जदीद।
5. बुख़ारी, हदीस 737 व मुस्लिम, हदीस 391।
6. मुस्लिम, हदीस 401।

तक रफ़अ यदैन करना साबित हुआ।

7. हज़रत अबू हमीद साअदी रज़ि० ने सहाबा किराम रज़ि० की एक सभा में बयान किया कि : रसूलुल्लाह सल्ल० जब नमाज़ शुरू करते और जब रुकूअ में जाते, जब रुकूअ से सर उठाते और जब दो रकअतें पढ़कर खड़े होते तो रफ़अ यदैन करते थे। तमाम सहाबा ने कहा : "तुम सच बयान करते हो, रसूलुल्लाह सल्ल० इसी तरह नमाज़ पढ़ते थे।[1]

इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा इस हदीस को रिवायत करने के बाद फ़रमाते हैं कि मैंने मुहम्मद बिन याह्या को यह कहते हुए सुना कि जो व्यक्ति हदीस अबू हमीद सुनने के बावजूद रुकूअ में जाते और उससे सर उठाते समय रफ़अ यदैन नहीं करता तो उसकी नमाज़ नाक़िस होगी।[2]

8. हज़रत अबू मूसा अशअरी रज़ि० ने (एक दिन लोगों से) फ़रमाया : "क्या मैं तुम्हें रसूलुल्लाह सल्ल० की नमाज़ न बताऊं?" यह कहकर उन्होंने नमाज़ पढ़ी, जब तकबीरे तहरीमा कही तो रफ़अ यदैन किया, फिर जब रुकूअ किया तो रफ़अ यदैन किया और तकबीर कही, फिर "समिअल्लाहु लिमन हमिदा" कहकर दोनों हाथ (कंधों तक) उठाए। फिर फ़रमाया : "इसी तरह किया करो।"[3]

9. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० शुरू नमाज़ में, रुकूअ से पहले और रुकूअ के बाद अपने दोनों हाथ (कंधों तक) उठाया करते थे।[4]

10. हज़रत जाबिर रज़ि० जब नमाज़ शुरू करते, जब रुकूअ करते और जब रुकूअ से सर उठाते तो रफ़अ यदैन करते और फ़रमाते थे कि रसूलुल्लाह

---

1. अबू दाऊद, हदीस 730, तिर्मिज़ी हदीस 304, इब्ने हिबान (5/182, 184) इसे इमाम तिर्मिज़ी ने हसन सहीह कहा है।

2. सहीह इब्ने ख़ुज़ैमा, 1/298, हदीस 588।

3. दारे क़ुतनी, 1/292। हाफ़िज़ इब्ने हजर ने कहा उसके रावी सिक़ा हैं। अल-तलख़ीस 1/219।

4. अबू दाऊद, हदीस 738, इसे इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (1/344, हदीस 694) ने सहीह कहा है।

सल्ल० भी इसी तरह करते थे।[1]

रफ़अ यदैन न करने वालों के तर्कों का विश्लेषण :

जिन अहादीस से रफ़अ यदैन न करने की दलील दी जाती है उनका सार में विश्लेषण देखें :

पहली हदीस :

हज़रत जाबिर बिन समरा रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "क्या बात है कि मैं तुमको इस तरह हाथ उठाते देखता हूं मानो कि वह सरकश घोड़ों की दुमें हैं। नमाज़ में सुकून इख़्तियार करो।"[2]

विश्लेषण : इस हदीस में उस मक़ाम का ज़िक्र नहीं जिस पर सहाबा रज़ि० हाथ उठा रहे थे और आप सल्ल० ने उन्हें मना फ़रमाया। जाबिर बिन समरा ही से सहीह मुस्लिम में इसी हदीस से मिली हुई दो रिवायात और भी हैं जो बात को पूरी तरह स्पष्ट कर रही हैं :

(1) हज़रत जाबिर बिन समरा रज़ि० फ़रमाते हैं : रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ जब हम नमाज़ पढ़ते तो नमाज़ के ख़ात्मे पर दाएं बाएं "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि" कहते हुए हाथ से इशारा भी करते यह देखकर आपने फ़रमाया : "तुम अपने हाथ से इस तरह इशारा करते हो जैसे शरीर घोड़ों की दुमें हिलती हैं। तुम्हें यही काफ़ी है कि तुम क़ाअदा में अपनी रानों पर हाथ रखे हुए दाएं और बाएं मुंह मोड़कर "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि" कहो।"[3]

(2) हज़रत जाबिर बिन समरा रज़ि० का बयान है : हम रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ नमाज़ के ख़ात्मे पर "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि"

---

1. मुसनद सिराज, इब्ने माजा, हदीस 868। इब्ने हजर ने कहा है कि इसके रावी सिक़ा हैं। कभी कभी इमाम जहरी नमाज़ों में, आयत सज्दा, तिलावत करता है। इस सूरत में इमाम और मुक़तदी रुकूअ से पहले सज्दा तिलावत करते हैं, तो उस समय क़याम से सज्दे में जाते हुए रफ़अ यदैन नहीं किया जाएगा क्योंकि यह रसूलुल्लाह सल्ल० से साबित नहीं है।

2. मुस्लिम, हदीस 430।

3. मुस्लिम, हदीस 431।

कहते हुए हाथ से इशारा भी करते थे यह देखकर आपने फ़रमाया तुम्हें क्या हो गया है तुम अपने हाथों से इस तरह इशारा करते हो मानो वह शरीर घोड़ों की दुमें हैं। तुम नमाज़ के ख़ात्मे पर केवल ज़बान से "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि" कहो और हाथ से इशारा न करो।"[1]

इमाम नववी रह० "अल मज्मूआ" में फ़रमाते हैं : जाबिर बिन समरा रज़ि० की इस रिवायत से रुकूअ में जाते और उठते समय रफ़अ यदैन न करने की दलील लेना अजीब बात और सुन्नत से जिहालत की बुरी क़िस्म है। क्योंकि यह हदीस रुकूअ को जाते और उठते समय के रफ़अ यदैन के बारे में नहीं बल्कि तशह्हुद में सलाम के समय दोनों तरफ़ हाथ से इशारा करने की मनाही के बारे में है। मुहद्दिसीन और जिनको मुहद्दिसीन के साथ थोड़ा सा भी संबंध है, उनके बीच इस बारे में कोई मतभेद नहीं। इसके बाद इमाम नववी, इमाम बुख़ारी रह० का कथन नक़ल करते हैं कि इस हदीस से कुछ जाहिल लोगों का दलील पकड़ना सहीह नहीं क्योंकि यह सलाम के समय हाथ उठाने के बारे में है। और जो विद्वान है वह इस तरह की दलील नहीं पकड़ता क्योंकि यह प्रसिद्ध व मशहूर बात हैं इसमें किसी का मतभेद नहीं और अगर यह बात सहीह होती तो नमाज़ और ईद का रफ़अ यदैन भी मना हो जाता मगर इसमें ख़ास रफ़अ यदैन को बयान नहीं किया गया। इमाम बुख़ारी फ़रमाते हैं अतः इन लोगों को इस बात से डरना चाहिए कि वह नबी सल्ल० पर वह बात कह रहे हैं जो आपने नहीं कही क्योंकि अल्लाह फ़रमाता है :

﴿فَلْيَحْذَرِ ٱلَّذِينَ يُخَالِفُونَ عَنْ أَمْرِهِۦٓ أَن تُصِيبَهُمْ فِتْنَةٌ أَوْ يُصِيبَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ﴾

(النور ٢٤/ ٦٣)

"तो उन लोगों को जो नबी सल्ल० का विरोध करते हैं इस बात से डरना चाहिए कि उन्हें (दुनिया में) कोई फ़ितना या (आख़िरत में) दर्दनाक अज़ाब पहुंचे।" (अन्नूर 24 : 63)

दूसरी हदीस :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० ने फ़रमाया : क्या मैं तुम्हें

---

1. मुस्लिम, हदीस 431 की उप हदीस

रसूलुल्लाह सल्ल० की नमाज़ बताऊं? फिर उन्होंने नमाज़ पढ़ी और हाथ न उठाए मगर पहली बार।[1]

विश्लेषण : इमाम अबू दाऊद इस हदीस के बारे में फ़रमाते हैं :

«لَيْسَ هُوَ بِصَحِيحٍ عَلَى هَذَا اللَّفْظِ»

"यह हदीस इन शब्दों के साथ सहीह नहीं है।"[2]

जबकि इमाम तिर्मिज़ी रह० ने अब्दुल्लाह बिन मुबारक रह० का कथन नक़ल किया है :

«لَمْ يَثْبُتْ حَدِيثُ ابْنِ مَسْعُودٍ رضي الله عنه»

"अर्थात अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० के रफ़अ यदैन के छोड़ने की हदीस साबित नहीं है।"[3]

इमाम इब्ने हिबान रह० ने तो यहां तक लिख दिया है कि इसमें बहुत सी उलझनें हैं जो इसे बातिल बना रही हैं। (मसलन इसमें सुफ़ियान सूरी मुदल्लिस हैं और अन से रिवायत करते हैं। मुदल्लिस की अन वाली रिवायत तफ़र्रुद की सूरत में ज़ईफ़ होती है।)

तीसरी हदीस :

हज़रत बराअ रज़ि० कहते हैं मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को देखा आप जब नमाज़ शुरू करते तो दोनों हाथ कानों तक उठाते "सुम-म ला यऊदु" फिर नहीं उठाते थे।[4]

विश्लेषण : इमाम नववी रह० फ़रमाते हैं कि यह हदीस ज़ईफ़ है इसे सुफ़ियान बिन ईना, इमाम शाफ़ई, इमाम बुख़ारी के उस्ताद इमाम हमीदी और इमाम अहमद बिन हंबल जैसे अइम्मा हदीस रहिमहुल्लाह ने ज़ईफ़ क़रार दिया है। क्योंकि यज़ीद बिन अबी ज़ियाद पहले "ला यऊद" नहीं कहता था, अहले कूफ़ा के पढ़ने पर उसने ये शब्द बढ़ा दिए। इसके अलावा यज़ीद बिन

1. अबू दाऊद, हदीस 748, तिर्मिज़ी, हदीस 257।
2. अबू दाऊद, हवाला मज़्कूर।
3. तिर्मिज़ी, हवाला मज़्कूर, हदीस 255।
4. अबू दाऊद, हदीस 749।

अबी ज़ियाद ज़ईफ़ और शीआ भी था। आख़िरी उमर में हाफ़िज़ा ख़राब हो गया था (तक़रीब) और मुदल्लिस था।

इसके अलावा रफ़अ यदैन की अहादीस ऊला हैं क्योंकि वह सकारात्मक हैं और नकारात्मक पर सकारात्मक को वरीयता हासिल होती है।

कुछ लोग दलील देते हैं कि कपटी आस्तीनों और बग़लों में बुत रखकर लाते थे बुतों को गिराने के लिए रफ़अ यदैन किया गया, बाद में छोड़ दिया गया। लेकिन हदीस की किताबों में इसका कहीं कोई सुबूत नहीं है। अलबत्ता यह कथन जाहिलों की ज़बानों पर घूमता रहता है।[1]

यह भी दलील दी जाती है कि इब्ने ज़ुबैर रज़ि० कहते हैं : रसूलुल्लाह सल्ल० ने रफ़अ यदैन किया था और बाद में छोड़ दिया।[2]

---

1. निम्न तथ्य इस कथन की कमज़ोरी स्पष्ट कर देते हैं :

(1) मक्का में बुत थे मगर जमाअत फ़र्ज़ नहीं थी। मदीना में जमाअत फ़र्ज़ हुई मगर बुत नहीं थे, फिर कपटी मदीना, किन बुतों को बग़लों में दबाए मस्जिदों में चले आते थे?

(2) हैरत है कि जाहिल लोग इस गप को सही मानते हैं और इसके साथ साथ नबी सल्ल० को परोक्ष ज्ञान वाले भी मानते हैं यद्यपि अगर आप परोक्ष ज्ञान वाले होते तो रफ़अ यदैन करवाने के बिना भी जान सकते थे कि फ़लां फ़लां व्यक्ति मस्जिद में बुत ले आया है।

(3) बुत ही गिराने थे तो यह, तकबीरे तहरीमा कहते समय जो रफ़अ यदैन की जाती है और उसी तरह रुकूअ और सज्दे के दौरान भी गिर सकते थे इसके लिए अलग से रफ़अ यदैन की सुन्नत जारी करने की कोई ज़रूरत नहीं थी।

(4) कपटी भी कितने मूर्ख थे कि बुत जेबों में भर लाने की बजाए उन्हें बग़लों में दबा लाए?

(5) निश्चय ही जाहिल लोग और उनक पेशवा यह बताने में नाकाम हैं कि उनके कथनानुसार अगर रफ़अ यदैन के दौरान कपटियों की बग़लों से बुत गिरे थे तो फिर आपने उन्हें क्या सज़ा दी थी?

असल यह कहानी मात्र गढ़ा हुआ अफ़साना है। जिसका हक़ीक़त के साथ तनिक सा संबंध भी नहीं है।

2. (नस्बुर्राया 1/404) लेकिन यह रिवायत भी मुरसल और ज़ईफ़ है। तहक़ीक़ तो यह है कि मसला रफ़अ यदैन में निवर्तन हुआ ही नहीं है क्योंकि निवर्तन हमेशा

शेष अगले पृष्ठ पर

इसी तरह इस सिलसिले में एक और रिवायत भी पेश की जाती है कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० ने फ़रमाया : "मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० व अबूबक्र व उमर रज़ि० के साथ नमाज़ पढ़ी ये लोग शुरू नमाज़ के अलावा हाथ नहीं उठाते थे।"

इमाम बैहेक़ी (2/79-80) और दारे क़ुतनी लिखते हैं कि इसका रावी मुहम्मद बिन जाबिर ज़ईफ़ है। बल्कि कुछ उलमा (इब्ने जोज़ी, इब्ने तैमिया आदि) ने इसे मौज़ूअ कहा है। (अर्थात यह रिवायत इब्ने मसऊद रज़ि० की बयान की हुई नहीं है बल्कि किसी ने स्वयं गढ़ कर उनकी तरफ़ संबंधित कर दी है) अतः ऐसी रिवायात पेश करना जाइज़ नहीं है।

वहां होता है जहां (अ) दो हदीसें आपस में टकराती हों (ब) दोनों मक़बूल हों (स) उनका कोई संयुक्त अर्थ न निकलता हो (द) दलाइल से साबित हो जाए कि उन दोनों में से फ़लां पहले दौर की है और फ़लां बाद में इरशाद फ़रमाई गई, तब बाद वाली हदीस, पहली हदीस को निरस्त कर देती है।

मगर यहां रफ़अ यदैन करने की हदीसें ज़्यादा भी हैं और सहीह भी, जबकि न करने की हदीसें कम भी हैं और कमज़ोर भी (उन पर मुहद्दिसीन की बहस है) अब न तो मक़बूल और मर्दूद हदीस का संयुक्त अर्थ निकालना जाइज़ है और न ही मर्दूद हदीसों से मक़बूल हदीसों को निरस्त किया जा सकता है।

लेकिन अगर मान लें इस मसले में निवर्तन का दावा तस्लीम कर लिया जाए तो भी हालात गवाही देते हैं कि रफ़अ यदैन करना संबंधित नहीं बल्कि न करना निरस्त है क्योंकि (अ) सहाबा किराम रज़ि० ने पाक जीवन के अन्तिम हिस्से (9 हि० और 10 हि०) में नबी अकरम सल्ल० से रफ़अ यदैन करना रिवायत किया है। (ब) सहाबा किराम रज़ि० नबवी काल के बाद भी रफ़अ यदैन पर अमल करते रहे। (स) कहा जाता है कि चारों इमाम बरहक़ हैं अगर ऐसा ही है तो इन चारों में से तीन रफ़अ यदैन को मानते हैं। (द) जिन मुहद्दिसीने किराम रह० ने रफ़अ यदैन की हदीसों को अपनी विभिन्न मक़बूल सनदों के साथ रिवायत किया है उनमें से किसी ने यह टिप्पणी नहीं की कि "रफ़अ यदैन निरस्त है" साबित हुआ कि सहाबा व ताबईन और फ़ुक़्हा व मुहद्दिसीन रहिमहुल्लाह के नज़दीक रफ़अ यदैन निरस्त नहीं बल्कि सुन्नते नबवी है और ज़ाहिर है कि सुन्नत छोड़ने के लिए नहीं, अपनाने के लिए होती है। अब जो व्यक्ति एक ग़ैर मासूम उम्मती के अमल को सुन्नते नबवी पर वरीयता देता है और सुन्नत को जानकर हमेशा छोड़े हुए है उसे रसूल की मुहब्बत का दावा करना जचता नहीं है। अल्लाह तआला हम सबको हिदायत दे। आमीन!

सारांश : रफ़अ यदैन की अधिकांश हदीसें और सहीहतरीन सनदों से मरवी हैं। रफ़अ यदैन न करने की हदीसों की सनद साबित नहीं। इमाम बुख़ारी रह० लिखते हैं कि विद्वानों के निकट किसी एक सहाबी से भी रफ़अ यदैन न करना साबित नहीं है।

रुकूअ़ का बयान :

रुकूअ में जाते समय अल्लाहु अकबर कहकर दोनों हाथ कंधों (या कानों) तक उठाएं। जैसा कि इब्ने उमर रज़ि० का फ़रमान है :

١۔«كَانَ يَرْفَعُ يَدَيْهِ حَذْوَ مَنْكِبَيْهِ - وَإِذَا كَبَّرَ لِلرُّكُوعِ»

1. "नबी सल्ल० जब रुकूअ के लिए तकबीर कहते तब भी अपने दोनों हाथ कांधों तक उठाते थे।"[1]

2. रुकूअ में पीठ (पुश्त) बिल्कुल सीधी रखें और सर को पीठ के बराबर अर्थात सर न तो ऊंचा हो और न नीचा और दोनों हाथों की हथेलियां दोनों घुटनों पर रखें।[2]

3. हाथों की उंगलियां कुशादा रखें।[3]

4. दोनों हाथों (बाज़ुओं) को तान कर रखें ज़रा टेढ़े न हो उंगलियों के बीच फ़ासला हो और घुटनों को मज़बूत थामें।[4]

5. रुकूअ की हालत में नबी सल्ल० की हथेलियां आपके घुटनों पर यूं रखी जाती थीं जैसा कि आपने घुटनों को पकड़ा हुआ हो।[5]

6. रुकूअ की हालत में नबी सल्ल० अपनी कोहनियों को पहलुओं से दूर रखते थे।[6]

---

1. बुख़ारी, हदीस 73-736, 738, व मुस्लिम, हदीस 390।
2. सहीह मुस्लिम, हदीस 498।
3. अबू दाऊद, हदीस 731। इसे इमाम हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।
4. अबू दाऊद, हदीस 731, 734। इसे तिर्मिज़ी और नववी ने सहीह कहा है।
5. तिर्मिज़ी, हदीस 260।
6. तिर्मिज़ी, हवाला साबिक़ा, इसे इमाम तिर्मिज़ी ने सहीह कहा है।

रुकूअ की दुआएं :

हज़रत हुज़ैफ़ा फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० रुकूअ में फ़रमाते :

«سُبْحَانَ رَبِّيَ الْعَظِيْمِ»

"मेरा रब महान (हर बुराई से) पाक है।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिसने रुकूअ में तीन बार "सुब्हान रब्बियल अज़ीमि" कहा उसका रुकूअ पूरा हो गया मगर यह अदना दर्जा (कम से कम तादाद) है।[2]

नबी अकरम सल्ल० रुकूअ में तीन बार पढ़ते थे :

«سُبْحَانَ اللهِ وَبِحَمْدِهِ»

"अल्लाह (हर बुराई से) पाक है हम उसकी प्रशंसा के साथ (उसकी पाकी बयान करते हैं)।"[3]

नबी अकरम सल्ल० रुकूअ में फ़रमाते :

«سُبْحَانَكَ وَبِحَمْدِكَ لاَ إِلٰهَ إِلاَّ أَنْتَ»

"ऐ अल्लाह! तेरे ही लिए पाकी और प्रशंसा है, तेरे सिवा कोई (सच्चा) माबूद नहीं है।"[4]

हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं कि नबी अकरम सल्ल० अपने रुकूअ में अकसर कहते थे :

«سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ رَبَّنَا وَبِحَمْدِكَ اللّٰهُمَّ اغْفِرْلِيْ»

"ऐ हमारे परवरदिगार अल्लाह! तू पाक है, हम तेरी प्रशंसा बयान करते हैं। या इलाही मुझे बख़्श दे।"[5]

---

1. मुस्लिम, हदीस 772।
2. अबू दाऊद, इब्ने माजा। इसे इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा और इमाम इब्ने हिबान ने सहीह कहा है।
3. अबू दाऊद, हदीस 885। इसे इब्ने हिबान ने सहीह कहा है।
4. मुस्लिम, हदीस 485।
5. बुख़ारी, हदीस 794, 817, 4293, 4967, 4968 व मुस्लिम, हदीस 484।

हज़रत आइशा रज़ि० रिवायत करती हैं कि नबी अकरम सल्ल० अपने रुकूअ और सज्दे में कहते थे :

«سُبُّوحٌ قُدُّوسٌ رَبُّ الْمَلَائِكَةِ وَالرُّوحِ»

"फ़रिश्तों और रूह (जिब्रील) का परवरदिगार अत्यन्त पाक है।"[1]

हज़रत औफ़ बिन मालिक रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० अपने रुकूअ में कहते थे :

«سُبْحَانَ ذِي الْجَبَرُوتِ وَالْمَلَكُوتِ وَالْكِبْرِيَاءِ وَالْعَظَمَةِ»

"क़हर, (ग़लबा) बादशाही, बड़ाई और बुज़ुर्गी का मालिक अल्लाह, (बड़ा ही) पाक है।"[2]

हज़रत अली रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० रुकूअ में यह पढ़ते :

«اَللّٰهُمَّ لَكَ رَكَعْتُ وَبِكَ اٰمَنْتُ وَلَكَ أَسْلَمْتُ، خَشَعَ لَكَ سَمْعِيْ وَبَصَرِيْ وَمُخِّيْ وَعَظْمِيْ وَعَصَبِيْ»

"ऐ अल्लाह मैं तेरे आगे झुक गया, तुझ पर ईमान लाया, तेरा वफ़ादार हुआ, मेरा कान, मेरी आंख, मेरा मस्तिष्क, मेरी हड्डी और मेरे पुट्ठे तेरे आगे लाचार बन गए।"[3]

सन्तोष, नमाज़ का रुक्न है :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि एक व्यक्ति मस्जिद में दाख़िल हुआ, रसूलुल्लाह सल्ल० मस्जिद के कोने में तशरीफ़ फ़रमा थे। उस व्यक्ति ने नमाज़ पढ़ी (और रुकूअ, सुजूद, क़ौमे और जल्से की रिआयत न की और जल्दी जल्दी नमाज़ पढ़कर) रसूलुल्लाह सल्ल० की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और आपको सलाम किया। आपने फ़रमाया : "व अलैकुमुस्सलाम"

---

1. मुस्लिम, हदीस 487 व सुनन अबी दाऊद, हदीस 872।
2. अबू दाऊद, हदीस 873।
3. मुस्लिम, हदीस 771।

वापस जा। इसलिए कि तूने नमाज़ नहीं पढ़ी।" वह गया, फिर नमाज़ पढ़ी (जिस तरह पहले पढ़ी थी) फिर आया और सलाम किया आपने फिर फ़रमाया : "व अलैकुमुस्सलाम" जा फिर नमाज़ पढ़। क्योंकि तूने नमाज़ नहीं पढ़ी।" उस व्यक्ति ने तीसरी या चौथी बार (वैसे ही) नमाज़ पढ़ने के बाद कहा : "आप मुझे (नमाज़ पढ़ने का सही तरीक़ा) सिखा दें।" तो आपने फ़रमाया : "जब तू नमाज़ के इरादे से उठे तो पहले ख़ूब अच्छी तरह वुज़ू कर, फिर क़िबला रुख़ खड़ा होकर तकबीरे तहरीमा कह, फिर क़ुरआन मजीद में से जो तेरे लिए आसान हो पढ़, फिर रुकूअ कर, यहां तक कि इत्मीनान से रुकूअ (पूरा) कर, फिर (रुकूअ से) सर उठा यहां तक कि (क़ौमा में) सीधा खड़ा हो जा, फिर सज्दा कर यहां तक कि इत्मीनान से सज्दा (मुकम्मल) कर, फिर इत्मीनान से अपना सर उठा और (जल्से में) बैठ जा, फिर सज्दा कर यहां तक कि इत्मीनान से सज्दा (पूरा) कर, फिर (सज्दे से) अपना सर उठा और (दूसरी रकअत के लिए) सीधा खड़ा हो जा, फिर इस तरह अपनी तमाम नमाज़ पूरी कर।[1]

इस हदीस में जिस नमाज़ी का ज़िक्र है वह रुकूअ और सज्दे बहुत जल्दी जल्दी करता था, क़ौमा और जल्सा इत्मीनान से ठहर ठहर कर नहीं करता था, रसूलुल्लाह सल्ल० ने हर बार उसे फ़रमाया कि फिर नमाज़ पढ़ क्योंकि तूने नमाज़ पढ़ी ही नहीं। आपने इन अरकान की अदाएगी में अविश्वास को नमाज़ के बातिल होने का सबब क़रार दिया है।

हज़रत अबू मसऊद अंसारी रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "आदमी की नमाज़ क़ुबूल नहीं होती यहां तक कि रुकूअ और सज्दे में अपनी पीठ सीधी न करे।[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने सहाबा किराम रज़ि० से पूछा कि शराबी, ज़ानी और चोर के बारे में तुम्हारी क्या राय है (अर्थात उनका गुनाह कितना है)?

---

1. बुख़ारी, हदीस 793 व मुस्लिम, हदीस 397।

2. अबू दाऊद, हदीस 855, नसाई (3/183 व 214), तिर्मिज़ी, हदीस 265। इमाम तिर्मिज़ी और इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है। यहां (फ़ी), (मिन) के मायना में है वरना सज्दे में पीठ सीधी नहीं हो सकती हदीस का मायना यह है कि उस व्यक्ति की नमाज़ क़ुबूल नहीं होती जो रुकूअ से सर उठाकर बिल्कुल सीधा खड़ा नहीं होता या सज्दे से उठकर बिल्कुल इत्मीनान के साथ सीधा बैठ नहीं जाता।

सहाबा ने कहा : अल्लाह ओर उसके रसूल बेहतर जानते हैं। आपने फ़रमाया कि यह गुनाह कबीरा हैं और उनमें सज़ा बहुत है। और (कान खोल कर) सुनो बहुत बरी चोरी, उस आदमी की है जो अपनी नमाज़ में चोरी करता है। सहाबा ने कहा वह किस तरह? फ़रमाया : "जो नमाज़ का रुकूअ और सज्दा पूरा न करे वह नमाज़ में चोरी करता है।"[1]

अल्लाहु अकबर! कितना भय का मक़ाम है आह! हमारी ग़ैर मसनून नमाज़ों का क्या हश्र होगा? हमें नमाज़ को तकबीरे ऊला से लेकर सलाम फेरने तक मसनून तरीक़े से अदा करना चाहिए।

हज़रत अबूबक्र रज़ि० से रिवायत है कि वह नबी अकरम सल्ल० के साथ नमाज़ में शामिल हुए उस समय आप रुकूअ में थे। हज़रत अबूबक्र रज़ि० ने पंक्ति में पहुंचने से पहले ही रुकूअ कर लिया और उसी हालत में चलकर पंक्ति में पहुंचे। नबी सल्ल० को यह बात बताई गई। आपने फ़रमाया : "अल्लाह तेरा शौक़ ज़्यादा करे आइंदा ऐसा न करना।"[2]

---

1. मोत्ता इमाम मालिक 1/167, इब्ने हिबान, 8/209-210। इसे हाकिम ओर ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

2. बुख़ारी, हदीस 783। कुछ लोग इस हदीस से यह नुक्ता निकालते हैं कि अगर नमाज़ी हालते रुकूअ में इमाम के साथ शामिल हो तो वह उसे रकअत शुमार करेगा क्योंकि हज़रत अबूबक्र रज़ि० ने रकअत नहीं दोहराई न ही आप सल्ल० ने उन्हें ऐसा करने का हुक्म दिया और इससे यह भी मालूम हुआ कि क़याम ज़रूरी है न फ़ातिहा।

यह विचार रहे क्योंकि (1) नबी अकरम सल्ल० ने उन्हें रकअत लौटाने का हुक्म दिया था या नहीं? या उन्होंने स्वयं रकअत को लौटाया था या नहीं? इसके बारे में हदीस ख़ामोश है इस संबंध में जो कुछ भी कहा जाता है वह केवल गुमान की बुनियाद पर कहा जाता है। (2) इसके विपरीत ऐसे खुले दलाइल मौजूद हैं जो (हर सामर्थ के लिए) क़याम और फ़ातिहा दोनों को लाज़िम क़रार देते हैं और (3) क़ायदा यह है कि जब एहतमाल और सराहत आमने सामने आ जाएं तो एहतमाल को छोड़ दिया जाएगा और सराहत पर अमल किया जाएगा। (4) सीधी सी बात है कि इस हदीस शरीफ़ का मर्कज़ी नुक्ता हज़रत अबूबक्र रज़ि० का यह कार्य है कि पहले वह हालते रुकूअ में इमाम के साथ शामिल हुए फिर उसी हालत में आगे बढ़ते हुए पंक्ति में दाख़िल हुए, आप सल्ल० ने उन्हें इस काम से रोका था। जमाअत में शामिल होने का शौक़ बजा मगर इस शौक़ को पूरा करने का यह तरीक़ा बहरहाल मुस्तहकम न था, (5) अतः इस हदीस को इसके असल नुक्ते से हटकर मानना और फ़ातिहा से ख़ाली रकअत के जवाज़ पर लाना सही मालूम नहीं

होता।

इस सिलसिले में एक विवेचन यह भी सामने आया है वह यह कि नमाज़ में सूरह फ़ातिहा पढ़ने का मौक़ा व ज़रूरत चूंकि क़याम है अतः केवल वही नमाज़ी सूरह फ़ातिहा पढ़ेगा जिसने इमाम को हालत क़याम में पाया और जिसने इस हालत रुकूअ में पाया उसके हक़ में सूरह फ़ातिहा की क़िरअत साक़ित हो जाएगी क्योंकि उसके लिए उसकी क़िरअत का मौक़ा व महल बाक़ी नहीं रहा। यह विवेचन भी महल नज़र है, नक़ल व अक़्ल दोनों इसका इंकार करते हैं जैसे :

(1) अमीरुल मोमिनीन फ़िल हदीस हज़रत इमाम बुख़ारी रह० ने सहीह बुख़ारी (किताबुल अज़ान) में एक अध्याय (95) यूं क़ायम किया है : अर्थात "नमाज़ में सूरह फ़ातिहा पढ़ना हर नमाज़ी पर वाजिब है स्वयं इमाम हो या मुक़तदी, मुक़ीम हो या मुसाफ़िर, नमाज़ सिर्री हो या जहरी।"

(2) रसूलुल्लाह सल्ल० का इरशाद गिरामी है : अर्थात "जिसने (नमाज़ में) सूरह फ़ातिहा नहीं पढ़ी उसकी नमाज़ ही नहीं" इससे मालूम हुआ कि अगर एक रकअत में भी सूरह फ़ातिहा रह जाए तो सारी नमाज़ नहीं होती क्योंकि सूरह फ़ातिहा पढ़ना नमाज़ का स्तंभ है और स्तंभ किसी भी मक़ाम से रह जाए, नमाज़ नाक़िस हो जाती है जैसा कि सहीह मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि नबी अकरम सल्ल० ने तीन बार फ़रमाया : अर्थात "जिसने नमाज़ में सूरह फ़ातिहा नहीं पढ़ी उसकी नमाज़ नाक़िस व अधूरी है।" (मुस्लिम, हदीस 14) (बिल्कुल इसी तरह जैसे एक हामिला ऊंटनी समय से कुछ माह पहले अपना अधूरा बच्चा गिरा दे तो वह किसी काम का नहीं होता उसी को अरबी में (ख़िदाज़ुन) कहते हैं।) इससे मालूम हुआ कि जिस व्यक्ति ने एक रकअत में सूरह फ़ातिहा नहीं पढ़ी उसकी कम से कम वह रकअत तो नाक़िस होगी और यह मुमकिन ही नहीं कि किसी व्यक्ति की एक रकअत तो नाक़िस हो और बाक़ी नमाज़ मुकम्मल हो।

(3) हदीस (ला सला-त) में (ला) नफ़ी जिन्स का है जो इस बात पर दलालत करता है कि जिस रकअत में सूरह फ़ातिहा नहीं पढ़ी गई वह रकअत नमाज़ की जिन्स से नहीं है (अतः नमाज़ नाक़िस हुई।)

(4) इरशादे नबवी है : "ला तुजज़ि-उ सलातुल ला युक़-र-उ फ़ीहा बिफ़ाति-ह-तिल किताबि" (सही इब्ने हिबान, सुनन दारे क़ुतनी) इस हदीस में (ला तुजज़ि-उ) का मायना है (ला तुकफ़ी वला तसिहहु) अर्थात जो व्यक्ति नमाज़ में सूरह फ़ातिहा नहीं पढ़ता उसकी नमाज़ सहीह होगी न उसे किफ़ायत करेगी। अब जिस रकअत में फ़ातिहा नहीं पढ़ी गई कम से कम वह रकअत तो सहीह न रही। इसलिए इसे सहीह करने के लिए ज़रूरी है कि वह यह रकअत सूरह फ़ातिहा समेत दोबारा पढ़ी जाए।

(5) हदीस क़ुदसी है : अल्लाह तआला ने फ़रमाया : "मैंने अपने और अपने बन्दे के बीच नमाज़ (आधी, आधी) बांट दी है..." हदीस के मुताबिक़ यहां नमाज़ से मुराद सूरह फ़ातिहा है जिसका पहला आधा, अल्लाह तआला की प्रशंसा व स्तुति, बुज़ुर्गी बड़ाई और तौहीद इबादत पर आधारित है जबकि बाद का आधा बन्दे की दुआओं पर आधारित है। जब बन्दा नमाज़ में सूरह फ़ातिहा पढ़ रहा होता है तो अल्लाह तआला उन दुआओं की क़ुबूलियत का एलान फ़रमाते हैं। लेकिन जो नमाज़ी एक रकअत में सूरह फ़ातिहा नहीं पढ़ता और उसकी वह रकअत अल्लाह के इस महान अज्र अज़ीम से वंचित रही है।

(6) स्वस्थ और समर्थ आदमी के लिए नमाज़ में क़याम करना ज़रूरी है जिस तरह रुकूअ या सज्दे के बिना नमाज़ नहीं होती इसी तरह क़याम या फ़ातिहा के बिना भी उसकी नमाज़ नहीं होती अतः यह कहना न्याय नहीं है कि "जिसने इमाम को हालते रुकूअ में पाया उसके हक़ में सूरह फ़ातिहा की क़िरअत साक़ित हो जाएगी क्योंकि उसके लिए उसके क़याम करने का मौक़ा व महल बाक़ी रहा।" इसके विपरीत यूं कहना चाहिए "चूंकि उस व्यक्ति की नमाज़ से दो महत्वपूर्ण रुक्न (क़याम और फ़ातिहा) रह गए हैं अतः उसे यह रकअत दोबारा पढ़नी चाहिए।"

(7) हज़रत अबूबक्र रज़ि० की हदीस में (ला तअदू) के जो शब्द हैं उनमें तीन कारण मुमकिन हैं एक तो वही जो प्रायः मुहद्दिसीन ने बयान किया है (ला तअदू) अर्थात "आइंदा ऐसा न करना" दूसरी (ला तअदू) अर्थात "तू रकअत न दोहरा (तेरी नमाज़ सही है)" तीसरी (ला तअदू) अर्थात दौड़कर न आया कर।"

अब क़ायदा यह है कि "जिस दलील में कई अर्थ हों उसे किसी ख़ास मसले की दलील बनाना सही नहीं है" अतः ठोस दलीलों की अवहेलना करते हुए अनेक अर्थ रखने वाले शब्द (ला तअदू) से विवेचन करना सहीह नहीं है।

(8) प्रसिद्ध इरशादे नबी है : अर्थात "जो नमाज़ तू इमाम के साथ पा ले उसे उसके साथ पढ़ और जो तुझसे आगे ले गई उसका क़ज़ा दे" तो जो व्यक्ति एक रकअत का क़याम नहीं पा सका, ज़ाहिर बात है क़याम उससे आगे ले गया है अतः वह फ़रमाने नबवी : (वक़्ज़ि मा स-ब-क़-क) का शरअन मामूर है और इस हुक्म को मानने का उसके अलावा और कोई तरीक़ा ही नहीं है कि वह उस रकअत को दोबारा पढ़े जिससे उसका क़याम और फ़ातिहा रह गई है।

(9) नबी सल्ल० का एक फ़रमान यह भी है : "जो व्यक्ति मुझे क़याम, रुकूअ या सज्दे की हालत में पाए वह उसी हालत में मेरे साथ शामिल हो जाए" (फ़त्हुल बारी, अज़ान/2-269, लेखक इब्ने अबी शैबा : 1/253), इससे मालूम हुआ कि किसी मुक़तदी के लिए जाइज़ नहीं है कि वह इमाम का विरोध करे अर्थात इमाम तो रुकूअ कर रहा

क़ौमे का बयान :

रुकूअ से सर उठाते हुए रफ़अ यदैन करते हुए सीधे खड़े हो जाएं। (बुख़ारी व मुस्लिम, इसका बयान विस्तार से गुज़र चुका है।)

अगर आप इमाम (या अकेले) हैं तो रुकूअ से क़ौमे में जाते समय यह पढ़ें :

«سمع الله لمن حمده»

"अल्लाह ने उसकी सुन ली जिसने उसकी प्रशंसा की।"[1]

और अगर मुंक़तदी हैं तो यह कहें :

«رَبَّنَا وَلَكَ الْحَمْدُ حَمْدًا كَثِيْرًا طَيِّبًا مُّبَارَكًا فِيْهِ»

"ऐ हमारे रब! तेरे ही वास्ते प्रशंसा है, बहुत ज़्यादा पाकीज़ा और बरकत वाली प्रशंसा।"[2]

हज़रत रिफ़ाआ बिन राफ़ेअ रज़ि० रिवायत करते हैं कि हम रसूलुल्लाह सल्ल० के पीछे नमाज़ पढ़ रहे थे, जब आपने रुकूअ से सर उठाया तो फ़रमाया : "समिअल्लाहु लिमन हमिदा" तो एक मुक़तदी ने कहा "रब्बना व लकल हम्दु हमदन कसीरन तय्यिबन मुबारकन फ़ीहि" फिर जब आप सल्ल० नमाज़ से फ़ारिग हुए तो फ़रमाया : "बोलने वाला कौन था?" (अर्थात किसने ये कलिमे पढ़े हैं?) एक व्यक्ति ने कहा या रसूलल्लाह! मैं था। आप सल्ल० ने फ़रमाया : "मैंने तीस से अधिक फ़रिश्ते देखे जो इन कलिमों का सवाब

हो और मुक़तदी क़याम कर रहा हो।

(10) इरशाद बारी तआला है : अर्थात "रसूलुल्लाह सल्ल० जो कुछ तुम्हें दें, ले लो" (अल-हश्र 59 :7) जबकि आपका यह भी फ़रमान है : अर्थात "इसी तरह नमाज़ पढ़ो जैसे तुमने मुझे नमाज़ पढ़ते देखा है।" (बुख़ारी, 631) और यह बात दिन की तरह स्पष्ट है कि आप सल्ल० ने कभी ऐसी नमाज़ नहीं पढ़ी और न अपनी उम्मत को सिखाई है जिसकी किसी रकअत में क़याम और सूरह फ़ातिहा न हों इन उल्लिखित तर्कों से मालूम हुआ कि क़याम और सूरह फ़ातिहा के बिना नमाज़ नहीं होगी।

1. सहीह बुख़ारी, हदीस 796, व सहीह मुस्लिम, हदीस 476।
2. सहीह बुख़ारी, अध्याय 126, हदीस 799।

लिखने में जल्दी कर रहे थे।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अबी ऊफ़ी रज़ि० रिवायत करते हैं कि जब रसूलुल्लाह सल्ल० रुकूअ से उठते तो (क़ौमा में यह दुआ) पढ़ते :

«سَمِعَ اللهُ لِمَنْ حَمِدَهُ، اَللّٰهُمَّ رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ مِلْءَ السَّمٰوَاتِ وَمِلْءَ الأَرْضِ وَمِلْءَ مَا شِئْتَ مِنْ شَيْءٍ بَعْدُ»

"अल्लाह ने सुन ली उस (बन्दे) की जिसने उसकी प्रशंसा की, ऐ हमारे अल्लाह! तेरे ही लिए सारी प्रशंसा है आसमानों, ज़मीन और हर उस चीज़ के भराव के बराबर जो तू चाहे।"[1]

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० जब अपना सर रुकूअ से उठाते तो यह दुआ पढ़ते :

«رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ مِلْءَ السَّمٰوَاتِ وَالأَرْضِ وَمِلْءَ مَا شِئْتَ مِنْ شَيْءٍ بَعْدُ، أَهْلَ الثَّنَاءِ وَالْمَجْدِ، أَحَقُّ مَا قَالَ الْعَبْدُ، وَكُلُّنَا لَكَ عَبْدٌ، اَللّٰهُمَّ لاَ مَانِعَ لِمَا أَعْطَيْتَ وَلاَ مُعْطِيَ لِمَا مَنَعْتَ، وَلاَ يَنْفَعُ ذَا الْجَدِّ مِنْكَ الْجَدُّ»

"ऐ हमारे पालनहार! हर क़िस्म की प्रशंसा केवल तेरे लिए है आसमानों और ज़मीन और हर उस चीज़ के भराव के बराबर जो तू चाहे और बन्दे ने जो तेरी प्रशंसा और बुज़ुर्गी की वह तेरे योग्य है और हम सब तेरे ही बन्दे हैं। ऐ अल्लाह! कोई रोकने वाला नहीं उस चीज़ को जो तूने दी और कोई देने वाला नहीं उस चीज़ को जो तूने रोक दी और धनवान को धन तेरे अज़ाब से नहीं बचा सकता।"[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० क़ौमे में फ़रमाते :

«اَللّٰهُمَّ لَكَ الْحَمْدُ مِلْءَ السَّمَاءِ وَمِلْءَ الأَرْضِ وَمِلْءَ مَا شِئْتَ مِنْ شَيْءٍ بَعْدُ اَللّٰهُمَّ طَهِّرْنِيْ بِالثَّلْجِ وَالْبَرَدِ وَالْمَاءِ الْبَارِدِ، اَللّٰهُمَّ طَهِّرْنِيْ مِنَ الذُّنُوْبِ وَالْخَطَايَا كَمَا يُنَقَّى الثَّوْبُ الأَبْيَضُ مِنَ الْوَسَخِ»

---

1. मुस्लिम, हदीस 476।
2. मुस्लिम, हदीस 477।

"ऐ अल्लाह! तेरे ही लिए सारी प्रशंसा है आसमानों और ज़मीन और हर उस चीज़ के भराव के बराबर जो तू चाहे, ऐ अल्लाह! मुझे बर्फ़, ओले और ठंडे पानी से पाक कर दे, ऐ अल्लाह! मुझे गुनाहों और ख़ताओं से ऐसा पाक कर दे जिस तरह सफ़ेद कपड़ा मैल कुचैल से साफ़ किया जाता है।[1]

चेतावनी :

बहुत से लोगों को क़ौमे का पता नहीं कि वह क्या होता है। स्पष्ट हो कि रुकूअ के बाद इत्मीनान से सीधा खड़े होने को क़ौमा कहते हैं। रसूलुल्लाह सल्ल० रुकूअ से सर उठाकर सीधे खड़े होकर बड़े इत्मीनान से क़ौमे की दुआ पढ़ते थे।

हज़रत बराअ रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० का रुकूअ और सज्दा और दो सज्दों के बीच बैठना और रुकूअ से (उठकर क़ौमे में) खड़ा होना बराबर होता था सिवाए क़याम के और (तशह्हुद) बैठने के। (अर्थात यह चारों चीज़ें : रुकूअ, सज्दा, जल्सा और क़ौमा लम्बाई में क़रीबन बराबर होती थीं।)[2]

कभी कभी आप सल्ल० का क़ौमा बहुत लम्बा होता था। हज़रत अनस रज़ि० कहते हैं : "नबी अकरम सल्ल० इतना लम्बा क़ौमा करते कि कहने वाला कहता कि आप भूल गए हैं।"[3]

सज्दे के आदेश :

(1) हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«إِذَا سَجَدَ أَحَدُكُمْ فَلَا يَبْرُكْ كَمَا يَبْرُكُ الْبَعِيرُ وَلْيَضَعْ يَدَيْهِ قَبْلَ رُكْبَتَيْهِ»

---

1. सहीह मुस्लिम, हदीस 476। गुनाहों का नतीजा चूंकि आग है इसलिए बर्फ़, ओलों और ठंडे पानियों से गुनाह धुलवाने की दुआ की जा रही है।

2. बुख़ारी, हदीस 792 व मुस्लिम, हदीस 471।

3. सहीह मुस्लिम, हदीस 473। मगर अफ़सोस कि आज मुसलमान क़ौमा लम्बा करना तो अलग रहा, पीठ सीधी करना भी गवारा नहीं करते तुरन्त सज्दे में चले जाते हैं। अल्लाह हम सबको हिदायत दे। आमीन!

"जब तुममें से कोई सज्दा करे तो ऊंट की तरह न बैठे बल्कि अपने दोनों हाथ घुटनों से पहले रखे।"[1]

सज्दे में घुटने पहले रखने वाली वाइल बिन हजर रज़ि० की रिवायत को (अबू दाऊद, 838) इमाम दारे क़ुतनी, बैहेक़ी, और हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० ने ज़ईफ़ कहा है जबकि हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० की, हाथ पहले रखने वाली रिवायत सहीह है और हज़रत इब्ने उमर की (निम्न) हदीस इस पर गवाह है : नाफ़ेअ रह० रिवायत करते हैं कि इब्ने उमर रज़ि० अपने हाथ घुटनों से पहले रखते और फ़रमाते कि रसूलुल्लाह सल्ल० ऐसा ही करते थे।[2]

घुटनों से पहले हाथ रखने को इमाम औज़ाई, मालिक, अहमद बिन हंबल और शैख़ अहमद शाकिर रह० आदि ने इख़्तियार किया है। इब्ने अबी दाऊद ने (भी) कहा : मेरा रुझान हदीस इब्ने उमर रज़ि० की तरफ़ है क्योंकि इस बारे में सहाबा और ताबईन से बहुत सी रिवायात हैं।

(2) सज्दे में पेशानी और नाक ज़मीन पर टिकाएं।[3]

(3) सज्दे में दोनों हाथों को कंधों के बराबर रखें।[4]

(4) सज्दे में दोनों हाथों को कानों के बराबर रखना भी दुरुस्त है।[5]

(5) सज्दे में हाथों की उंगलियां एक दूसरे से मिलाकर रखें। और उन्हें क़िबला रुख़ रखें।[6]

(6) सज्दे में दोनों हथेलियां और दोनों घुटने ख़ूब ज़मीन पर टिकाएं।[7]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 840। इमाम नववी और ज़रक़ानी ने इसकी सनद को पक्का कहा है।

2. इब्ने ख़ुज़ैमा 1/319 हदीस 627, मुस्तदरक (1/226) इसे हाकिम, ज़ेहबी और इब्ने ख़ुज़ैमा ने सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, हदीस 812, मुस्लिम, हदीस 490।

4. अबू दाऊद, हदीस 734। इसे इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (640) और तिर्मिज़ी ने सहीह कहा है।

5. अबू दाऊद, हदीस 726। इसे इब्ने हिबान (हदीस 485) ने सहीह कहा है।

6. हाकिम 1/227, बैहेक़ी 2/112, हाकिम और ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

7. अबू दाऊद, हदीस 859। इसे इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा ने सहीह कहा है।

(7) नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि उस व्यक्ति की नमाज़ नहीं जिसकी नाक पेशानी की तरह ज़मीन पर नहीं लगती।[1]

(8) पांव की उंगलियों के सिरे क़िबले की तरफ़ मुड़े हुए रखें। और क़दम भी दोनों खड़े रखें।[2]

(9) एड़ियों को मिलाएं।[3]

(10) सज्दे में सीना, पेट और रानें ज़मीन से ऊंची रखें, पेट को रानों से, और रानों को पिंडलियों से अलग रखें और दोनों रानें भी एक दूसरे से अलग अलग रखें।[4]

(11) सज्दे में कोहनियों को न तो ज़मीन पर टिकाएं और न करवटों से मिलाएं, बल्कि ज़मीन से ऊंची, करवटों से अलग, खुली रखें।[5]

(12) सज्दे की हालत में नबी सल्ल० अपनी कलाइयों को ज़मीन पर नहीं लगाते थे बल्कि उन्हें उठाकर रखते और पहलुओं से दूर रखते यहां तक कि पिछली तरफ़ से दोनों बग़लों की सफ़ेदी नज़र आती थी।[6]

(13) रसूलुल्लाह सल्ल० फ़रमाते हैं : "मुझे हुक्म दिया गया है कि मैं सात हड्डियों पर सजदा करूं पेशानी, दोनों हाथों, दोनों घुटनों और दोनों क़दमों के पंजों पर और (यह कि हम नमाज़ में) अपने कपड़ों और बालों को इकट्ठा न करें।"[7]

हर बहन-भाई के लिए ज़रूरी है कि वह सज्दे में इन सात अंगों को ख़ूब अच्छी तरह (पूरी तरह से) ज़मीन पर टिकाकर रखें और इत्मीनान से सज्दा करें।

---

1. दारे क़ुतनी 1/348। इसे हाकिम और इब्ने जोज़ी ने सहीह कहा है।

2. बुख़ारी, हदीस 828।

3. बैहेक़ी 2/116। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 654) हाकिम (1/228) और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

4. अबू दाऊद, हदीस 730, 734, तिर्मिज़ी हदीस 304। इसे इमाम तिर्मिज़ी और इब्ने ख़ुज़ैमा ने सहीह कहा है।

5. बुख़ारी, हदीस 828।

6. बुख़ारी, हदीस 822, व मुस्लिम, हदीस 493।

7. बुख़ारी, हदीस 812 व मुस्लिम, हदीस 490।

औरतें बाज़ू न बिछाएं :

बहुत सी औरतें सज्दे में बाज़ू बिछा लेती हैं। और पेट को रानों से मिलाकर रखती हैं और दोनों क़दमों को भी ज़मीन पर खड़ा नहीं करतीं। स्पष्ट हो कि यह तरीक़ा रसूलुल्लाह सल्ल० के फ़रमान और सुन्नते पाक के ख़िलाफ़ है। सुनिए! रसूलुल्लाह सल्ल० फ़रमाते हैं : "तुममें से कोई (मर्द या औरत) अपने बाज़ू सज्दे में इस तरह न बिछाए जिस तरह कुत्ता बिछाता है।"[1]

नबी सल्ल० के इस फ़रमान से साफ़ स्पष्ट है कि नमाज़ी (मर्द या औरत) को अपने दोनों हाथ ज़मीन पर रखकर दोनों कोहनियां (अर्थात बाज़ू) ज़मीन से उठाकर रखने चाहिएं और पेट भी रानों से जुदा रहे और सीना भी ज़मीन से ऊंचा हो। मेरी आदर्णीय मुसलमान बहनो! अपने प्यारे रसूल सल्ल० के इरशाद के मुताबिक़ नमाज़ पढ़ो। आप मुसलमान मर्दों और औरतों को समान फ़रमाते हैं : "सज्दे में अपने दोनों हाथ ज़मीन पर रख और अपनी दोनों कोहनियां बुलन्द कर।"[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० जब सज्दा करते तो अगर बकरी का बच्चा हाथों (बाहों) के नीचे से गुज़रना चाहता तो गुज़र सकता था।[3]

अल्लाह की समीपता का दर्जा :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "असल में बन्दा सज्दे की हालत में अपने पालनहार से बहुत निकट होता है। तो (सज्दे में) बहुत दुआ करो।"[4]

---

1. बुख़ारी, हदीस 822 व मुस्लिम, हदीस 493।

2. मुस्लिम, हदीस 494। कुछ लोग यह बेकार का बहाना पेश करते हैं कि इस तरह सज्दे में पत्नी की छाती ज़मीन से बुलन्द हो जाती है जो बेपर्दगी है यद्यपि रसूलुल्लाह सल्ल० ने औरत के लिए ओढ़नी को लाज़िम क़रार दिया है यह ओढ़नी दौराने सज्दा भी पर्दे का तक़ाज़ा पूरा करती है फिर आज की कोई औरत सहाबियात रज़ि० की ग़ैरत और शर्म व हया को नहीं पहुंच सकती जब उन्होंने हमेशा सुन्नत के मुताबिक़ नमाज़ अदा की तो आज की औरत को भी उन्ही की राह चलनी चाहिए।

3. मुस्लिम, हदीस 496।

4. मुस्लिम, हदीस 482। इससे मालूम हुआ कि नमाज़ बन्दे को अल्लाह से मिला

शेष अगले पृष्ठ पर

अल्लाह तआला तो बन्दे से हर हाल में निकट होता है लेकिन सज्दे की हालत में बन्दा उसके बहुत निकट हो जाता है। यही वजह है कि नबी रहमत सल्ल० सज्दे में बड़ी विनम्रता और निष्ठा से दुआएं मांगते थे।

रसूलुल्लाह सल्ल० आम तौर पर ज़मीन पर सज्दा करते थे इसलिए कि मस्जिदे नबवी में फ़र्श न था। सहाबा रज़ि० सख़्त गर्मी में नमाज़ अदा करते और ज़मीन की गर्मी की वजह से अगर वह ज़मीन पर पेशानी न रख सकते तो सज्दे की जगह पर कपड़ा रख लेते और उस पर सज्दा करते।[1]

रमज़ानुल मुबारक की इक्कीसवीं रात थी। बारिश बरसी और मस्जिद की छत टपक पड़ी और आप सल्ल० ने कीचड़ में सज्दा किया। आपकी पेशानी और नाक पर कीचड़ का निशान था।[2]

एक बार आप सल्ल० ने बड़ी चटूटान पर नमाज़ अदा की जो ज़मीन पर ज़्यादा अर्से बड़ी रहने से सियाह हो गई थी।[3]

सज्दे में जन्नत :

रसूलुल्लाह सल्ल० फ़रमाते हैं : "जब आदम का (मोमिन) बेटा सज्दे की आयत पढ़ता है। फिर (पढ़ने और सुनने वाला) सज्दा करता है तो शैतान रोता हुआ एक तरफ़ होकर कहता है हाय मेरी हलाकत, तबाही और बर्बादी! आदम के बेटे को सज्दे का हुक्म दिया गया। उसने सज्दा किया। तो उसके लिए जन्नत है और मुझे सज्दे का हुक्म दिया गया मैंने अवज्ञा की तो मेरे लिए आग है।"[4]

आम तौर पर रसूलुल्लाह सल्ल० का सज्दा रुकूअ के बराबर लम्बा होता

देती है, जहां तक सज्दे में दुआ मांगने का संबंध है तो उसका बेहतर तरीक़ा यह है कि फ़र्ज़ नमाज़ में वही दुआएं मांगी जाएं जो सज्दे के बारे में मक़बूल हदीसों में आई हैं। और अगर सुन्नतें या नवाफ़िल अदा किए जा रहे हैं तो अन्य मसनून दुआएं भी मांगी जा सकती हैं और अगर कोई व्यक्ति नमाज़ के बिना केवल सज्दा कर रहा है तो जो चाहे दुआ मांगे चाहे अरबी ज़बान में या अपनी ज़बान में।

1. मुस्लिम, हदीस 620।
2. बुख़ारी, हदीस 2040 व मुस्लिम, हदीस 1168।
3. बुख़ारी, हदीस 380 व मस्लिम, हदीस 658।
4. सहीह मुस्लिम, हदीस 81।

था। कभी कभी किसी घटना के कारण ज़्यादा लम्बा करते। एक बार आप ज़ोहर या अस्र की नमाज़ में हसन या हुसैन रज़ि० को उठाए हुए तशरीफ़ लाए। आप नमाज़ की इमामत के लिए आगे बढ़े और उन्हें अपने क़दम मुबारक के क़रीब बिठा लिया। फिर आपने नमाज़ शुरू की और लम्ब सज्दा किया। जब आपने नमाज़ ख़त्म की तो लोगों ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! आपने इस नमाज़ में एक सज्दा बहुत लम्बा किया यहां तक कि हमें ख़्याल गुज़रा कि कोई घटना घट गई है या फिर वह्य नाज़िल हो रही है। आपने फ़रमाया : "ऐसी कोई बात नहीं थी बस मेरा बेटा मेरी कमर पर सवार हो गया तो मैंने यह बात पसन्द न की कि सज्दे से जल्दी सर उठाकर उसे परेशानी का शिकार करूं।"[1]

जन्नत में रसूलुल्लाह सल्ल० का साथ :

हज़रत रबीआ बिन काअब रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैं रसूलुल्लाह सल्ल० की ख़िदमत में रात गुज़ारता था। आपके लिए वुज़ू का पानी और आपकी (अन्य) ज़रूरत (मिस्वाक आदि) लाता था। (एक रात ख़ुश होकर) आपने मुझे फ़रमाया : "(कुछ दीन व दुनिया की भलाई) मांग (मुझसे दुआ करो)" मैंने कहा : जन्नत में आप सल्ल० का साथ चाहता हूं। आपने फ़रमाया : "इसके अलावा कोई और चीज़?" मैंने कहा बस यही। फिर आपने फ़रमाया : "तो अपनी ज़ात के लिए सज्दों की अधिकता से मेरी मदद कर।"[2]

जिस तरह हकीम रोगी को कहे कि शिफ़ा पाने के लिए मैं कोशिश करता हूं और तू मेरी हिदायत के मुताबिक़ दवाई और परहेज़ करने के साथ मेरी मदद कर। इसी तरह आपने रबीआ को फ़रमाया कि मैं तेरे हुसूल मुद्दआ के लिए दुआ से कोशिश करता हूं और तू सज्दों की कसरत के साथ मेरी

1. नसाई 2/229-230, (हदीस 114) इसे इमाम हाकिम, 3/626-627, इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1037) ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

2. सहीह मुस्लिम, हदीस 489। इस हदीस से मालूम हुआ कि ज़िंदा बुज़ुर्गों से मुलाक़ात के दौरान उनसे दुआ करवाना जाइज़ है। (नोट) इस हदीस में यह कहीं नहीं है कि मैं चूंकि सारे लोगों का हाजतरवा और मुश्किलकुशा हूं अतः मुझ से हर क़िस्म की ग़ैबी मदद मांगा करो, इसके विपरीत नबी अकरम सल्ल० जनाब रबीआ रज़ि० से मदद मांग रहे हैं।

कोशिश में मदद कर। इस तरह तुझे जन्नत में मेरा साथ हासिल होगा।

हज़रत सोबान रज़ि० ने रसूलुल्लाह सल्ल० से जन्नत में ले जाने वाला अमल पूछा तो आपने फ़रमाया : "अल्लाह के लिए (पूरी निष्ठा व हुज़ूर के साथ) सज्दों की अधिकता लाज़िम कर, तो तेरे हर सज्दे के बदले अल्लाह तआला तेरा दर्जा बुलन्द करेगा और उसके सबब से गुनाह (भी) मिटाएगा।"[1]

सज्दे की दुआ :

(1) रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«أَلَا وَإِنِّي نُهِيتُ أَنْ أَقْرَأَ الْقُرْآنَ رَاكِعًا أَوْ سَاجِدًا، فَأَمَّا الرُّكُوعُ فَعَظِّمُوا فِيهِ الرَّبَّ عَزَّوَجَلَّ، وَأَمَّا السُّجُودُ فَاجْتَهِدُوا فِي الدُّعَاءِ

"ख़बरदार मैं रुकूअ और सज्दे में क़ुरआन हकीम पढ़ने से मना किया गया हूं। अतः तुम रुकूअ में अपने रब की महानता बयान करो और सज्दे में ख़ूब दुआ मांगो। तुम्हारी दुआ क़ुबूलियत के लायक़ होगी।"[2]

(2) हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० सज्दे में (यह दुआ) पढ़ते :

«سُبْحَانَ رَبِّيَ الأَعْلَى»

"मेरा बुलन्द परवरदिगार (हर बुराई से) पाक है।"[3]

(3) हज़रत इब्ने मसऊद रज़ि० रिवायत करते हैं कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जिसने सज्दे में तीन बार "सुब्हा-न रब्बियल आला" पढ़ा उसने सज्दा पूरा किया मगर यह मामूली दर्जा (कम से कम तादाद) है।[4]

(٣) «سُبْحَانَ رَبِّيَ الأَعْلَى وَبِحَمْدِهِ»

---

1. मुस्लिम, हदीस 288।
2. मुस्लिम, हदीस 479।
3. मुस्लिम, हदीस 772।
4. बज़्ज़ार व तबरानी फ़ी कबीर/मज्मउज़्ज़वाइद 2/128 वफ़ी नुस्ख़ा 315। यह रिवायत हसन है।

(4) "मेरा बुलन्द परवरदिगार पाक है मैं उसकी प्रशंसा करता हूं।"[1]

(5) हज़रत आइशा रज़ि० रिवायत करती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० अपने रुकूअ और सज्दे में अधिकता से यह दुआ पढ़ते थे :

«سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ رَبَّنَا وَبِحَمْدِكَ اللّٰهُمَّ اغْفِرْلِىْ»

"ऐ हमारे परवरदिगार अल्लाह! तू (हर बुराई से) पाक है, हम तेरी प्रशंसा और पाकी बयान करते हैं। ऐ अल्लाह मुझे बख़्श दे।"[2]

(6) हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० अपने रुकूअ और सज्दे में (यह) कहते थे :

«سُبُّوْحٌ قُدُّوْسٌ رَبُّ الْمَلَائِكَةِ وَالرُّوْحِ»

"फ़रिश्तों और रूह (जिब्रील) का परवरदिगार बड़ा ही पाक है।"[3]

(7) हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० अपने सज्दे में (यह) कहते थे :

«اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلِىْ ذَنْبِىْ كُلَّهُ دِقَّهُ وَجِلَّهُ وَأَوَّلَهُ وَآخِرَهُ وَعَلَانِيَتَهُ وَسِرَّهُ»

"ऐ अल्लाह! मेरे छोटे और बड़े, पहले और पिछले, खुले और छुपे, तमाम गुनाह बख़्श दे।"[4]

(٨) «سُبْحَانَكَ وَبِحَمْدِكَ لَا إِلٰهَ إِلَّا أَنْتَ»

(8) ऐ अल्लाह! तेरी ही पाकीज़गी और प्रशंसा है। तेरे सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं है।"[5]

(9) रसूलुल्लाह सल्ल० सज्दे में फ़रमाते :

«اَللّٰهُمَّ اجْعَلْ فِىْ قَلْبِىْ نُوْرًا، وَفِىْ بَصَرِىْ نُوْرًا، وَفِىْ سَمْعِىْ نُوْرًا، وَعَنْ يَمِيْنِيْ نُوْرًا، وَعَنْ يَسَارِيْ نُوْرًا، وَفَوْقِيْ نُوْرًا،

1. अबू दाऊद, हदीस 870। इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है।
2. बुख़ारी, हदीस 794, 817 व मुस्लिम, हदीस 484।
3. मुस्लिम, हदीस 487।
4. मुस्लिम, हदीस 483।
5. मुस्लिम, हदीस 485।

وَتَحْتِي نُوْرًا. وَأَمَامِي نُوْرًا، وَخَلْفِي نُوْرًا، وَعَظِّمْ لِي نُوْرًا»

"ऐ अल्लाह! मेरे दिल, मेरी आंखों की रोशनी और कानों को (ईमान के नूर से) जगमगा दे। मेरे दाएं बाएं, ऊपर नीचे, सामने और पीछे (हर तरफ़) नूर फैला दे और मेरी (हिदायत की) रोशनी को बढ़ा दे।"[1]

(10) रसूलुल्लाह सल्ल० सज्दे में फ़रमाते :

«اَللّٰهُمَّ أَعُوْذُ بِرِضَاكَ مِنْ سَخَطِكَ وَبِمُعَافَاتِكَ مِنْ عُقُوْبَتِكَ وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْكَ، لَا أُحْصِيْ ثَنَاءً عَلَيْكَ أَنْتَ كَمَا أَثْنَيْتَ عَلٰى نَفْسِكَ»

"ऐ अल्लाह मैं तेरी रज़ामंदी के ज़रिए तेरे ग़ुस्से से, तेरी आफ़ियत के ज़रिए तेरी सज़ा से और तेरी रहमत के ज़रिए तेरे अज़ाब से पनाह चाहता हूं। मैं तेरी प्रशंसा को शुमार नहीं कर सकता। तू वैसा ही है जिस तरह तूने अपनी प्रशंसा स्वयं की है।"[2]

(11) हज़रत अली बिन अबी तालिब रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० जब सज्दे में जाते तो यह दुआ पढ़ते :

«اَللّٰهُمَّ لَكَ سَجَدْتُ وَبِكَ آمَنْتُ وَلَكَ أَسْلَمْتُ، سَجَدَ وَجْهِيَ لِلَّذِيْ خَلَقَهُ وَصَوَّرَهُ وَشَقَّ سَمْعَهُ وَبَصَرَهُ، تَبَارَكَ اللّٰهُ أَحْسَنُ الْخَالِقِيْنَ»

"ऐ अल्लाह तेरे लिए मैंने सज्दा किया। मैं तुझ पर ईमान लाया। मैं तेरा आज्ञापालक हुआ। मेरे चेहरे ने उस ज़ात को सज्दा किया जिसने उसे पैदा किया। उसकी अच्छी सूरत बनाई। उसके कान और आंख को खोला। बेहतरीन रचना करने वाला अल्लाह, बड़ा ही बाबरकत है।"[3]

(12) रसूलुल्लाह सल्ल० ने नमाज़े इशा में सज्दे की आयत तिलावत की तो सज्दा किया।[4]

(13) आप सल्ल० सज्दे की आयत तिलावत करते और सज्दाए तिलावत में पढ़ते :

---

1. मुस्लिम, हदीस 763।
2. मुस्लिम, हदीस 486।
3. मुस्लिम, हदीस 771।
4. बुख़ारी हदीस 1075।

«سَجَدَ وَجْهِيَ لِلَّذِيْ خَلَقَهُ وَشَقَّ سَمْعَهُ وَبَصَرَهُ بِحَوْلِهِ وَقُوَّتِهِ فَتَبَارَكَ اللّٰهُ أَحْسَنُ الْخَالِقِيْنَ»

"मेरे चेहरे ने उस हस्ती को सज्दा किया जिसने अपनी क़ुदरत व ताक़त से उसे बनाया। कान बनाए। आंख बनाई। अल्लाह जो सबसे बेहरत तख़्लीक़ करने वाला है बहुत बरकत वाला है।"[1]

(14) सज्दाए तिलावत ज़रूरी नहीं। हज़रत ज़ैद बिन साबित रज़ि० फ़रमाते हैं कि मैंने नबी सल्ल० के सामने सूरह नज्म तिलावत की तो आपने सज्दाए तिलावत नहीं किया।[2]

बीच का जल्सा (दो सज्दों के बीच बेठना) :

हज़रत अबू हमीद साअदी रज़ि० की रिवायत है :

"फिर रसूलुल्लाह सल्ल० सज्दे से अपना सर उठाते और अपना बायां पांव मोड़ते (अर्थात बिछाते) फिर उस पर बैठते, और सीधे होते यहां तक कि हर हड्डी अपने ठिकाने पर आ जाती (अर्थात पहले सज्दे से सर उठाकर निहायत आराम व इत्मीनान से बैठ जाते और दुआएं जो आगे आती हैं पढ़कर) फिर (दूसरा) सज्दा करते।[3]

आप सल्ल० का तरीक़ा था कि बैठते समय अपना दायां पांव खड़ा कर लेते।[4]

और दोनों पांव की उंगलियां क़िबले रुख़ करते।[5]

और कभी कभी आप सल्ल० अपने क़दमों और अपनी एड़ियों पर

---

1. अबू दाऊद, हदीस 1414। इसे इमाम तिर्मिज़ी, हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है। और "फ़ तबारकल्लाहु अहसनुल ख़ालिक़ीन" के शब्द मुस्तदरक हाकिम (1/220) में हैं।

2. बुख़ारी, सुजूदुल क़ुरआन, हदीस 1072-1073 व मुस्लिम, हदीस 577।

3. अबू दाऊद, हदीस 730, तिर्मिज़ी हदीस 304, इब्ने माजा, हदीस 1060। इसे इमाम नववी और तिर्मिज़ी ने सहीह कहा है।

4. बुख़ारी, हदीस 828।

5. नसाई, हदीस 1158। इसे इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा और इमाम इब्ने हिबान ने सहीह कहा है।

बैठते।[1]

नबी सल्ल० स्वयं बड़े इत्मीनान से जल्से में बैठते। इसके अलावा न बैठने वाले की नमाज़ का इन्कार किया। लेकिन अफ़सोस कि आम लोगों को जल्से का पता ही नहीं है कि वह क्या होता है। जल्सा नमाज़ में फ़र्ज़ है और इसमें इत्मीनान भी फ़र्ज़ है। नबी सल्ल० का जल्सा सज्दे के बराबर होता था।[2]

कभी कभी ज़्यादा (देर तक) बैठते यहां तक कि कुछ लोग कहते कि आप (दूसरा सज्दा करना) भूल गए।[3]

जल्से की मसनून दुआएं :

1. हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० दोनों सज्दों के बीच (यह) पढ़ते :

«اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلِیْ وَارْحَمْنِیْ وَعَافِنِیْ وَاهْدِنِیْ وَارْزُقْنِیْ»

"ऐ अल्लाह! मुझे बख़्श दे, मुझ पर दया कर, मुझे हिदायत दे, मुझे आफ़ियत से रख और मुझे रोज़ी प्रदान कर।"[4]

हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि० रिवायत करते हैं, रसूलुल्लाह सल्ल० दोंनों सज्दों के बीच पढ़ा करते थे :

«رَبِّ اغْفِرْلِیْ، رَبِّ اغْفِرْلِیْ»

"ऐ मेरे रब मुझे माफ़ फ़रमा, ऐ मेरे रब मुझे माफ़ फ़रमा।"[5]

दूसरा सज्दा :

जब आप पूरे इत्मीनान से जल्से के फ़राइज़ से फ़ारिग हों तो फिर दूसरा

1. सहीह मुस्लिम, हदीस 536।
2. बुख़ारी, हदीस 820 व मुस्लिम, हदीस 471।
3. बुख़ारी, हदीस 821, मुस्लिम हदीस 472-473।
4. अबू दाऊद, हदीस 850, तिर्मिज़ी हदीस 284। इसे हाकिम, ज़ेहबी और नववी ने सहीह कहा है।
5. अबू दाऊद, हदीस 874, दारमी हदीस 1325, इब्ने माजा, हदीस 897। इसे हाकिम (1/271) और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

सज्दा करें और पहले सज्दे की तरह उसमें भी पढ़े विनम्रता व भय और कामिल इत्मीनान से दुआ या दुआएं पढ़ें और फिर उठें।

जल्सए इस्तराहत :

दूसरा सज्दा कर चुकने के बाद एक रकअत पूरी हो चुकी है अब दूसरी रकअत के लिए आपको उठना है लेकिन उठने से पहले जल्सए इस्तराहत में ज़रा बैठकर उठें इसकी सूरत यह है।

रसूलुल्लाह सल्ल० "अल्लाहु अकबर" कहते हुए (दूसरे सज्दे से उठते) और अपना बायां पांव मोड़ते हुए (बिछाते और) उस पर बैठते फिर (दूसरी रकअत के लिए) खड़े होते।[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० अपनी नमाज़ की ताक़ (पहली और तीसरी) रकअत के बाद खड़े होने से पहले सीधे बैठते थे।[2]

जल्सए इस्तराहत से उठते समय दोनों हाथ ज़मीन पर टेक कर उठें।[3]

दूसरी रकअत :

रसूलुल्लाह सल्ल० जब दूसरी रकअत पढ़कर खड़े होते तो अलहम्दु शरीफ़ की क़िरअत शुरू कर देते और (दुआए इफ़्तताह के लिए) विराम नहीं करते थे।[4]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 730, दारमी हदीस 1358, तिर्मिज़ी हदीस 304, इब्ने माजा हदीस 1061। इसे इमाम नववी, तिर्मिज़ी और इब्ने क़य्यिम ने सहीह कहा है।

2. बुख़ारी, हदीस 823।

3. बुख़ारी, हदीस 824। एक विवादित रिवायत में जल्सए इस्तराहत से क़याम के लिए उठते समय हाथों को आटा गूंधने वाली कैफ़ियत के साथ ज़मीन पर टेकने का ज़िक्र है जिससे कुछ उलमा ने यह विवेचन किया है कि बन्द मुट्ठियों को ज़मीन पर टेक कर उठना मुस्तहब है यद्यपि (बशर्ते सेहत हदीस) दोनों अम्र मुस्तहब हैं क्योंकि आटा गूंधते समय भी कभी हाथ खोले जाते हैं और कभी मुट्ठियां बनाई जाती हैं अतः नमाज़ी जिसमें आसानी महसूस करे, कर ले। आम तौर पर देखा गया है कि नमाज़ में सज्दाए तिलावत से उठकर इमाम और मुक़तदी जल्सए इस्तराहत के लिए नहीं बैठते बल्कि सज्दे से सीधे क़याम के लिए खड़े हो जाते हैं यद्यपि सज्दाए तिलावत करने के बाद भी जल्सए इस्तराहत करना चाहिए क्योंकि जल्से की अहादीस के मायना का यही तक़ाज़ा है।

4. मुस्लिम, हदीस 599।

तशह्हुद :

इसको पहला क़ाअदा भी कहते हैं, दूसरी रकअत के बाद (दूसरे सज्दे से उठकर) बायां पांव बिछाकर उसपर बैठ जाएं और दायां पांव खड़ा रखें।[1]

दाएं हाथ को अपने दाएं और बाएं हाथ को बाएं घुटने पर रखें।[2]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की रिवायत में है :

«كَانَ رَسُوْلُ اللهِ ﷺ إِذَا قَعَدَ يَدْعُوْ وَضَعَ يَدَهُ الْيُمْنٰى عَلٰى فَخِذِهِ الْيُمْنٰى، وَيَدَهُ الْيُسْرٰى عَلٰى فَخِذِهِ الْيُسْرٰى»

"रसूलुल्लाह सल्ल० जब नमाज़ में (तशह्हुद) बैठते (और) दुआ फ़रमाते तो अपना दायां हाथ अपनी दायीं और बायीं हाथ अपनी बाईं रान पर रखते।"[3]

मालूम हुआ कि नमाज़ी को छूट है चाहे दोनों हाथ घुटनों पर रखे। चाहे रानों पर। अब आप पहले क़ाअदा में तशह्हुद पढ़ें। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "तो जब तुम नमाज़ में (क़ाअदा के लिए) बैठो तो यह पढ़ो :

«اَلتَّحِيَّاتُ لِلّٰهِ وَالصَّلَوَاتُ وَالطَّيِّبَاتُ اَلسَّلَامُ عَلَيْكَ أَيُّهَا النَّبِيُّ وَرَحْمَةُ اللهِ وَبَرَكَاتُهُ اَلسَّلَامُ عَلَيْنَا وَعَلٰى عِبَادِ اللهِ الصَّالِحِيْنَ، أَشْهَدُ أَنْ لَّا إِلٰهَ إِلَّا اللهُ، وَأَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهُ وَرَسُوْلُهُ»

"(मेरी सारी) ज़बानी, शारीरिक और आर्थिक इबादत केवल अल्लाह के लिए ख़ालिस है। ऐ नबी आप पर अल्लाह तआला की रहमत, सलामती और बरकतें हों और हम पर और अल्लाह के (दूसरे) नेक बन्दों पर (भी) सलामती हो, मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं है और मैं गवाही देता हूं कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं।" इन कलिमात को अदा करने से हर नेक बन्दे को चाहे वह ज़मीन पर हो या

---

1. सहीह बुख़ारी, हदीस 827-828।
2. मुस्लिम, हदीस 579।
3. मुस्लिम, हदीस 579 की ज़ेली हदीस।

आसमान में, नमाज़ का सलाम पहुंच जाता है।[1]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० बयान करते है कि जब तक रसूलुल्लाह सल्ल० हमारे बीच मौजूद रहे हम "अस्सलामु अलै-क अय्युहन्नबिय्यु" कहते रहे, जब आप रुख़्सत हो गए तो हमने ख़िताब का कलिमा छोड़कर ग़ायब का कलिमा पढ़ना शुरू कर दिया। अर्थात फिर हम "अस्सलामु अलन्नबिय्यु" पढ़ते थे।[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० बीच के तशह्हुद से फ़ारिग होकर खड़े हो जाते थे।[3]

अतः! बीच के तशह्हुद में केवल तशह्हुद काफ़ी है।[4]

और अगर कोई व्यक्ति तशह्हुद के बाद दुआ करना चाहे तो भी जाइज़ है।

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम दो रकअत पर बैठो तो अत्तहिय्यात

---

1. बुख़ारी, हदीस 831, 835 व मुस्लिम, हदीस 402।

2. बुख़ारी, हदीस 6265। पहले जुमले का अर्थ है : "ऐ नबी सल्ल० आप पर सलामती हो।" दूसरे जुमले कास अर्थ है : "नबी अकरम सल्ल० पर सलामती हो" फिर भी बाद में दोबारा "अस्सलामु अलै-क अय्युहन नबिय्यु" पढ़ा जाने लगा। इससे मालूम हुआ कि सहाबा किराम रज़ि० नबी अकरम सल्ल० को आलिमुल ग़ैब या हाज़िर नाज़िर नहीं समझते थे वरना वह एक दिन के लिए भी "अलै-क अय्युहन्नबिय्यु" की जगह "अलन्नबिय्यु" नहीं पढ़ते।

सहाबा किराम रज़ि० की पैरवी में आज तक के मुसलमान उन्ही शब्दों में तशह्हुद पढ़ते चले आए हैं, इसलिए नहीं कि नबी अकरम सल्ल० हर नमाज़ी के पास हाज़िर होते हैं बल्कि इसलिए कि यह सुन्नत के अनुसरण का तक़ाज़ा है। और अल्लाह तआला ने अपने बन्दों का दुरूद व सलाम अपने हबीब सल्ल० तक पहुंचाने का आयोजन किया हुआ है। (अबू दाऊद, हदीस 2041-2042) तो जिस तरह हम अपने पत्र-व्यवहार में ख़िताब के कलिमे के साथ एक दूसरे को सलाम भेजते हैं इसी तरह हमारा सलाम भी अल्लाह तआला उन तक पहुंचा देते हैं मतलब यह कि तशह्हुद के शब्द "अलै-क अय्युहन्नबिय्यु" से शिर्किया अक़ीदा (आपके आलिमुल ग़ैब या हाज़िर नाज़िर होने) की कदापि पुष्टि नहीं होती।

3. मुसनद इमाम अहमद (1/459) इसकी सनद सहीह है।

4. फिर भी पहले तशह्हुद में दुरूद शरीफ़ पढ़ना भी जाइज़ बल्कि मुस्तहब है। विस्तार के लिए देखें, तफ़्सील अहसनुल बयान, सूरह अहज़ाब, आयत 56 का हाशिया, लिल अलबानी, पृ० 45।

के बाद जो दुआ ज़्यादा पसन्द हो वह करो।''[1]

और दुआ से पहले दुरूद पढ़ना चाहिए। रसूलुल्लाह सल्ल० ने सुना एक आदमी नमाज़ में दुआ कर रहा था। आपने फ़रमाया : ''इसने जल्दी की, नमाज़ में पहले अल्लाह की प्रशंसा करो फिर नबी सल्ल० पर दुरूद भेजो फिर दुआ करो।''[2] अतः बीच के तशह्हुद में तशह्हुद के बाद दुरूद और दुआ भी की जा सकती है।

मसला रफ़अ सबाबा :

तशह्हुद में उंगली का उठाना रसूलुल्लाह सल्ल० की बड़ी बरकत वाली और महान सुन्नत है, इसका सुबूत सुन्नत रसूलुल्लाह सल्ल० से देखें।

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० जब नमाज़ (के क़ाअदे) में बैठते तो अपने दोनों हाथ अपने दोनों घुटनों पर रखते और अपनी दायीं उंगली जो अंगूठे के निकट है उठा लेते। तो उसके साथ दुआ मांगते।[3]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० जब (नमाज़ में) तशह्हुद पढ़ने बैठते तो अपना दायां हाथ दायीं और बायां हाथ बायीं रान पर रखते और शहादत की उंगली के साथ इशारा करते और अपना अंगूठा अपनी बीच की उंगली पर रखते।[4]

नबी सल्ल० दाएं हाथ की तमाम उंगलियों को बन्द कर लेते, अंगूठे के साथ वाली उंगली को क़िबला रुख़ करके उसके साथ इशारा करते।[5]

हज़रत वाइल बिन हजर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० (दूसरे सज्दे से उठकर क़ाअ़दा में) बैठे, दो उंगलियों को बन्द किया, (अंगूठे और बीच की बड़ी उंगली से हल्क़ा बनाया) और अंगुश्त शहादत (कलिमे की

1. नसाई, हदीस 1163।

2. अबू दाऊद, हदीस 1481। इसे हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. सहीह मुस्लिम, हदीस 850, ''तो उसके साथ दुआ मांगते'' इसका सहीह अर्थ यह है कि अंगुश्त शहादत के साथ इशारा फ़रमाते जिस तरह कि बाद में आने वाली रिवायात में इसका स्पष्टीकरण और व्याख्या मौजूद है।

4. मुस्लिम, हदीस 579।

5. सहीह मुस्लिम, हदीस 580।

उंगली) से इशारा किया।[1]

हज़रत वाइल बिन हजर रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने उंगली उठाई और उसे हिलाते थे।[2]

केवल "ला इला-ह इल्लल्लाहु" कहने पर उंगली उठाना और कहने के बाद रख देना किसी रिवायत से साबित नहीं है।

तशह्हुद में शहादत की उंगली में थोड़ा सा ख़म होना चाहिए।[3]

क़ाअ़दाए तशह्हुद से तीसरी रकअत के लिए खड़े हों तो अल्लाहु अकबर कहते हुए उठें और रफ़अ यदैन करें। हज़रत इब्ने उमर रज़ि० की रिवायत में है कि जब रसूलुल्लाह सल्ल० दो रकअत पढ़कर (तशह्हुद के बाद) खड़े होते तो अल्लाहु अकबर कहते। और दोनों हाथ उठाते।[4]

अब आप तीसरी और चौथी रकअत बदस्तूर पढ़कर बैठ जाएं।

आख़िरी क़ाअ़दा (तशह्हुद) :

इस आख़िरी क़ाअ़दे में रसूलुल्लाह सल्ल० यूं बैठते थे जैसे कि हज़रत अबू हमीद साअदी रज़ि० बयान करते हैं कि जब वह सज्दा करते जिसके बाद सलाम है (अर्थात जब आख़िरी रकअत का दूसरा सज्दा करके फ़ारिग़ होते और तशह्हुद आदि के लिए बैठते) तो अपना बायां पांव (दायीं पिंडली के नीचे से बाहर) निकालते और अपनी बायीं जानिब के कूल्हे पर बैठते। फिर (तशह्हुद, दुरूद और दुआ पढ़कर) सलाम फेरते।[5]

---

1. अबू दाऊद, हदीस 726। इसे इमाम इब्ने हिबान (485) और इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 713-714) ने सहीह कहा है। तशह्हुद में दाएं हाथ से हल्क़ा बनाने की यह दूसरी मसनून कैफ़ियत है।

2. नसाई हदीस 990। इसे इब्ने हिबान (485) और इब्ने ख़ुज़ैमा (714) ने सहीह कहा है। शैख़ अलबानी फ़रमाते हैं कि उंगली को हरकत न देने वाली रिवायत शाज़ या मुंकिर है अतः उसे हदीस वाइल के मुक़ाबले में लाना जाइज़ नहीं है।

3. अबू दाऊद, हदीस 991। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 716) और इब्ने हिबान (हदीस 199) ने सहीह कहा है।

4. बुख़ारी, हदीस 739।

5. अबू दाऊद, हदीस 730। इमाम इब्ने हिबान (5/182, 184) और इमाम नववी ने इसे सहीह कहा है। आख़िरी क़ाअ़दा में दाएं पांव को खड़ा करके नसब करना मुस्तहब

शेष अगले पृष्ठ पर

बायीं जानिब कूल्हे पर बैठना "तवर्रुक" कहलाता है। यह सुन्नत है। हर मुसलमान को आख़िरी क़ाअ़दे में तवर्रुक ज़रूर करना चाहिए। कितने अफ़सोस की बात है कि हमारी औरतें तो आख़िरी तशह्हुद में तवर्रुक करें और मर्द इस सुन्नते रसूल सल्ल० से महरूम रहें।

नबी सल्ल० ने उस व्यक्ति को मना किया जो तशह्हुद की हालत में बाएं हाथ पर टेक लगाए हुए था आपने फ़रमाया : "यह तो यहूदियों की तरह नमाज़ है।"[1]

जब आप इस क़ाअ़दे में बैठें तो पहले अत्तहिय्यात पढ़ें जिस तरह दूसरी रकअत पढ़कर आपने क़ाअ़दे में पढ़ी थी। और रफ़ाअ सबाबा भी बदस्तूर करें। अत्तहिय्यात ख़त्म करके निम्न दुरूद शरीफ़ पढ़ें :

«اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى آلِ مُحَمَّدٍ، كَمَا صَلَّيْتَ عَلٰى إِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى آلِ إِبْرَاهِيْمَ إِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ، اَللّٰهُمَّ بَارِكْ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى آلِ مُحَمَّدٍ كَمَا بَارَكْتَ عَلٰى إِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى آلِ إِبْرَاهِيْمَ إِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ»

"या इलाही रहमत फ़रमा मुहम्मद सल्ल० और आले मुहम्मद पर जिस तरह तूने रहमत फ़रमाई इब्राहीम अलैहि० और आले इब्राहीम पर, निःसन्देह तू प्रशंसा वाला और बुज़ुर्गी वाला है। या इलाही बरकत फ़रमा मुहम्मद सल्ल० और आले मुहम्मद पर जिस तरह तूने बरकत फ़रमाई तूने इब्राहीम अलैहिस्सलाम और इब्राहीम की संतान पर। बेशक तू प्रशंसा वाला और बुज़ुर्गी वाला है।"[2]

यह दुरूद भी पढ़ सकते हैं :

«اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى أَزْوَاجِهِ وَذُرِّيَّتِهِ، كَمَا صَلَّيْتَ عَلٰى آلِ إِبْرَاهِيْمَ، وَبَارِكْ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى أَزْوَاجِهِ وَذُرِّيَّتِهِ، كَمَا بَارَكْتَ عَلٰى آلِ إِبْرَاهِيْمَ، إِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ»

है। बुख़ारी, हदीस 828, और कभी कभी (ख़ुसूसन शरअी कारण के समय) उसे बिछाना भी जाइज़ है। मुस्लिम, हदीस 579।

1. अहमद 2/116 व असनाद हसन।
2. सहीह बुख़ारी, अध्याय 10, हदीस 3370।

"ऐ अल्लाह! मुहम्मद सल्ल०, उनकी पत्नियों और उनकी औलाद पर रहमत प्रदान कर जैसा कि तूने आले इब्राहीम पर रहमत प्रदान की और मुहम्मद सल्ल०, उनकी पत्नियों और उनकी औलाद पर बरकत प्रदान कर जैसा कि तूने इब्राहीम की संतान पर बरकत प्रदान की। निःसन्देह तू प्रशंसा वाला और बुज़ुगी वाला है।"[1]

(नोट) : किसी भी सहीह रिवायत में दुरूद शरीफ़ में "सय्यदना" या "मौलाना" का शब्द मौजूद नहीं है। रसूलुल्लाह सल्ल० ने सहाबा रज़ि० को जो दुरूद सिखाया था, जब उसमें ये शब्द नहीं हैं तो हमें भी वृद्धि नहीं करना चाहिए। हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० फ़रमाते हैं कि जो शब्द, रसूलुल्लाह सल्ल० से मंक़ूल हैं उनकी पैरवी आवश्यक है। इमाम नववी रह० फ़रमाते हैं कि दुरूद का (मसनून) तरीक़ा यह है कि "अल्लाहुम-म सल्लि अ़ला मुहम्मिदिवं व अ़ला आलि मुहम्मदिन..." के शब्द के साथ दुरूद भेजा जाए जो "सय्यदना" के शब्द से ख़ाली हो।

हज़रत अबू तलहा रज़ि० रिवायत करते हैं कि एक रोज़ रसूलुल्लाह सल्ल० सहाबा किराम रज़ि० के पास तशरीफ़ लाए, आपके चेहरे पर ख़ुशी के चिन्ह प्रमुख थे। आपने फ़रमाया कि मेरे पास जिब्रील आया और उसने कहा तेरा परवरदिगार फ़रमाता है कि "ऐ मुहम्मद! क्या तुझे यह बात ख़ुश नहीं करती कि तेरी उम्मत में से जो व्यक्ति तुझ पर एक बार दुरूद भेजता है तो मैं उस पर दस बार रहमत भेजता हूं और तेरी उम्मत में से जो व्यक्ति एक बार सलाम भेजता है तो मैं उस पर दस बार सलाम भेजता हूं।"[2]

दुरूद के बाद की दुआएं :

(1) हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ में (आख़िरी क़ाअदा में) यूं दुआ फ़रमाते थे :

«اَللّٰهُمَّ إِنِّیْ أَعُوْذُ بِكَ مِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ، وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَسِيْحِ الدَّجَّالِ، وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَحْيَا وَالْمَمَاتِ، اَللّٰهُمَّ إِنِّیْ أَعُوْذُ بِكَ مِنَ الْمَأْثَمِ وَالْمَغْرَمِ»

---

1. बुख़ारी, हदीस 407।

2. नसाई 3/5., हदीस 1295। इमाम हाकिम और इमाम ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

"या इलाही! मैं तेरी पनाह में आता हूं अज़ाबे क़ब्र से और तेरी पनाह में आता हूं दज्जाल के फ़ितने से और पनाह में आता हूं मौत व जीवन के फ़ितने से, या इलाही, मैं गुनाह से और क़र्ज़ से तेरी पनाह मांगता हूं।"[1]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया है कि तशह्हुद में चार चीज़ों से अल्लाह तआला की पनाह ज़रूर तलब करो :

«اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَعُوْذُ بِكَ مِنْ عَذَابِ جَهَنَّمَ، وَمِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ، وَمِنْ فِتْنَةِ الْمَحْيَا وَالْمَمَاتِ، وَمِنْ شَرِّ فِتْنَةِ الْمَسِيْحِ الدَّجَّالِ»

"ऐ अल्लाह! मैं, जहन्नम और क़ब्र के अज़ाब से, मौत व जीवन के फ़ितने और फ़ितना मसीह दज्जाल के शर से तेरी पनाह मांगता हूं।"[2]

नबी सल्ल० यह दुआ सहाबा रज़ि० को सिखाते जैसा कि उन्हें क़ुरआन की सूरतें सिखाते थे[3] अतः उसे पढ़ना ज़रूरी है।

(2) हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैंने कहा, या रसूलल्लाह! नमाज़ में मांगने के लिए मुझे (कोई) दुआ सिखाइए (कि उसे अत्तहिय्यात और दुरूद के बाद पढ़ा करूं) तो आपने फ़रमाया! पढ़ :

«اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ ظَلَمْتُ نَفْسِيْ ظُلْمًا كَثِيْرًا وَّلَا يَغْفِرُ الذُّنُوْبَ إِلَّا أَنْتَ فَاغْفِرْلِيْ مَغْفِرَةً مِّنْ عِنْدِكَ وَارْحَمْنِيْ، إِنَّكَ أَنْتَ الْغَفُوْرُ الرَّحِيْمُ»

"या इलाही! निःसन्देह मैंने अपनी जान पर बहुत ज़्यादा ज़ुल्म किया है। और तेरे सिवा गुनाहों को कोई नहीं बख़्श सकता। तो अपनी ओर से मुझको बख़्श दे और मुझ पर दया कर, निःसन्देह तू ही बख़्शने वाला मेहरबान है।"[4]

(3) हज़रत अली बिन अबी तालिब रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० तशह्हुद के बाद सलाम फेरने से पहले यह दुआ पढ़ते थे :

«اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلِيْ مَا قَدَّمْتُ وَمَا أَخَّرْتُ وَمَا أَسْرَرْتُ وَمَا أَعْلَنْتُ وَمَا

---

1. बुख़ारी, हदीस 832 व मुस्लिम, हदीस 589। सहीह मुस्लिम की रिवायत में "अलममात" से पहले "फ़ितना" का शब्द नहीं है। (मुहम्मद अब्दुल जब्बार)

2. सहीह मुस्लिम, हदीस 590।

3. मुस्लिम, हदीस 590।

4. बुख़ारी, हदीस 834 व मुस्लिम, हदीस 2705।

أَسْرَفْتُ وَمَا أَنْتَ أَعْلَمُ بِهِ مِنِّي أَنْتَ الْمُقَدِّمُ وَأَنْتَ الْمُؤَخِّرُ لاَ إِلَهَ إِلاَّ أَنْتَ ‏•

"ऐ अल्लाह! तू मेरे अगले पिछले, छुपे और खुले, (तमाम) गुनाह माफ़ फ़रमा और जो मैंने, ज़्यादती की और वह जो गुनाह, तू मुझसे ज़्यादा जानता है (वह भी माफ़ फ़रमा) तू ही (अपनी बारगाह इज़्ज़त में) आगे करने वाला और (अपनी बारगाह जलाल से) पीछे करने वाला है। केवल तू ही (सच्चा) उपास्य है।"[1]

नमाज़ का समापन :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० अपने दायीं तरफ़ सलाम फेरते (तो कहते) : "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि" और बायीं तरफ़ सलाम फेरते तो कहते : "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि"।[2]

हज़रत वाइल बिन हजर रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ नमाज़ पढ़ी। आप दायीं तरफ़ सलाम फेरते तो कहते "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि व ब-र-कातहु" और बायीं तरफ़ सलाम फेरते तो कहते "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि" (अर्थात केवल दायीं तरफ़ वाले सलाम में व ब-र-कातुहु) की वृद्धि करते।[3]

कुछ और आदेश :

(1) नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "नमाज़ में सांप और बिच्छू मार डालो।"[4]

(2) नमाज़ में बच्चे को उठाने से नमाज़ बातिल नहीं होती :

---

1. मुस्लिम, हदीस 771।

2. अबू दाऊद, हदीस 996, तिर्मिज़ी हदीस 295। इसे तिर्मिज़ी और इब्ने हिबान ने सहीह कहा है। मानो नमाज़ी पहले, अल्लाह तआला से बात कर रहा था अब उस कैफ़ियत से वापस आया है तो हाज़िरीन (नमाज़ियों या फ़रिश्तों) से सलाम कह रहा है।

3. अबू दाऊद, हदीस 997। इमाम नववी और इमाम इब्ने हजर ने इसे सहीह कहा है।

4. अबू दाऊद, हदीस 921।

हज़रत अबु क़तादा रज़ि० फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को इस हालत में नमाज़ पढ़ते हुए देखा कि अबुल आस की बेटी उमामा (आप सल्ल० की नवासी) आपके कंधों पर थी। आप रुकूअ फ़रमाते तो उमामा को उतार देते और जब सज्दे से फ़ारिग होते तो फिर उसे उठा लेते।[1]

(3) नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "नमाज़ में इधर उधर देखना, बन्दे की नमाज़ में शैतान का हिस्सा है।"[2]

(4) नबी सल्ल० ने नमाज़ में पहलू पर हाथ रखने से मना फ़रमाया।[3]

(5) नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जब किसी को नमाज़ में जमाई आए तो उसे कोशिश भर रोके क्योंकि उस समय शैतान मुंह में दाख़िल होता है।"[4]

(6) एक रिवायत में है : "(जमाई के समय) हा-हा न कहो क्योंकि इससे शैतान ख़ुश होता है।"[5]

(7) नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "लोगों को हालते नमाज़ में निगाहें आसमान की तरफ़ उठाने से बचे रहना चाहिए वरना उनकी निगाहें उचक ली जाएंगी।"[6]

(8) हज़रत साइब रज़ि० ने मुआविया रज़ि० के साथ मक़सूरा में जुमा पढ़ा। जब इमाम ने सलाम फेरा तो हज़रत साइब ने खड़े होकर नमाज़ शुरू कर दी। हज़रत मुआविया रज़ि० कहने लगे : आइंदा ऐसा न करना, क्योंकि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया है : "एक नमाज़ को दूसरी नमाज़ के साथ न मिला। उनके बीच कलाम करो या जगह तब्दील करो।"[7]

(9) नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "नमाज़ में इंसान अपने रब से मुनाजात करता है इसलिए उसे चाहिए कि दायीं जानिब न थूके बल्कि अपने बाएं क़दम के नीचे थूके।"[8]

---

1. बुख़ारी, हदीस 516, 5996, मुस्लिम, हदीस 543।
2. बुख़ारी, हदीस 751, 2391।
3. बुख़ारी, हदीस 1220 व मुस्लिम, हदीस 545।
4. मुस्लिम, हदीस 2995।
5. बुख़ारी, हदीस 3289, 6223, 6226।
6. मुस्लिम, हदीस 428-429।
7. मुस्लिम, हदीस 883।
8. बुख़ारी, हदीस 531। उस समय मस्जिदें कच्ची होती थीं आजकल थूकना हो तो चादर के पल्लू में थूक कर मल दे, यह भी सुन्नत है। (बुख़ारी, हदीस 405)

(10) रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति नमाज़ में ऊंघे उसे चाहिए कि लेट जाए यहां तक कि उसकी नींद पूरी हो जाए। जो कोई नींद में नमाज़ पढ़ेगा तो उसको मालूम नहीं हो सकता कि वह इस्तग़फ़ार कर रहा है या अपने आपको बददुआ दे रहा है।"[1]

(11) ज़ैद बिन अरक़म रज़ि० से रिवायत है कि हम नमाज़ में बातें किया करते थे, फिर "क़ूमू लिल्लाहि क़ानितीन" आयत नाज़िल हुई तो हमें चुप चाप रहने का हुक्म हुआ और बात करना मना हो गया।[2]

(12) अगर कोई व्यक्ति सलाम कहे तो नमाज़ी ज़बान से कुछ कहे बिना दाएं हाथ के इशारे से सलाम का जवाब देगा।"[3]

सज्दा सहू (भूल के सज्दे) का बयान :

तीन या चार रकअतों के सन्देह पर सज्दा :

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० ने कहा रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«إِذَا شَكَّ أَحَدُكُمْ فِيْ صَلَاتِهِ فَلَمْ يَدْرِكَمْ صَلَّى، ثَلَاثًا أَمْ أَرْبَعًا؟ فَلْيَطْرَحِ الشَّكَّ وَلْيَبْنِ عَلَى مَااسْتَيْقَنَ ثُمَّ يَسْجُدُ سَجْدَتَيْنِ قَبْلَ أَنْ يُسَلِّمَ، فَإِنْ كَانَ صَلَّى خَمْسًا شَفَعْنَ لَهُ صَلٰوتَهُ، وَإِنْ كَانَ صَلَّى إِتْمَامًا لأَرْبَعٍ كَانَتَا تَرْغِيْمًا لِّلشَّيْطَانِ»

"अगर तुममें से किसी को रकअतों की तादाद की बाबत शक पड़ जाए कि तीन पढ़ी हैं या चार? तो शक को छोड़ दे और यक़ीन पर एतेमाद करे। फिर सलाम फेरने से पहले दो सज्दे करे। अगर उसने पांच रकआत नमाज़ पढ़ी थी तो यह सज्दे उसकी नमाज़ (की रकअतों) को जुफ़्त कर देंगे और अगर उसने पूरी चार रकअतें नमाज़ पढ़ी थी तो यह सज्दे शैतान के लिए ज़िल्लत का सबब होंगे।"[4]

1. बुख़ारी, हदीस 212 व मुस्लिम, हदीस 784।
2. बुख़ारी, हदीस 1200, मुस्लिम, हदीस 539।
3. अबू दाऊद, हदीस 925, 927।
4. सहीह मुस्लिम, हदीस 571।

जिस व्यक्ति को नमाज़ में शक पड़ जाए कि आया उसने एक रकअत पढ़ी है या दो, तो वह उसको एक रकअत यक़ीन करे। और जिसको यह शक हो कि उसने दो पढ़ी हैं या तीन तो वह उसको दो रकअत यक़ीन करे, और फिर (आख़िरी क़ाअ़दे में) सलाम फेरने से पहले (सहू के) दो सज्दे करे।[1]

सज्दा सहू का तरीक़ा यह है कि आख़िरी क़ाअ़दे में तशह्हुद (दुरूद) और दुआ पढ़ने के बाद अल्लाहु अकबर कहकर सज्दे में जाएं। फिर उठकर जल्से में बैठकर दूसरा सज्दा करें और फिर उठकर सलाम फेरकर नमाज़ से फ़ारिग हों। इस ह़दीस में सलाम फेरने से पहले सज्दा सहू का हुक्म है। इसलिए सहू के दो सज्दे सलाम फेरने से पहले करने चाहिएं।

पहले क़ाअदा के छोड़ने पर सज्दा :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन बहीना रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने सहाबा किराम रज़ि० को ज़ोहर की नमाज़ पढ़ाई। तो पहली दो रकअतें पढ़कर खड़े हो गए। (अर्थात क़ाअदे में भूल से न बैठे) तो लोग भी नबी सल्ल० के साथ खड़े हो गए यहां तक कि जब नमाज़ पढ़ चुके (और आख़िरी क़ाअ़दे में सलाम फेरने का समय आया) और लोग सलाम फेरने के मुंतज़िर हुए (तो) रसूलुल्लाह सल्ल० ने तकबीर कही जबकि आप बैठे हुए थे। सलाम फेरने से पहले दो सज्दे किए फिर सलाम फेरा।[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० के इस मुबारक कार्य से साबित हुआ कि सज्दाए सहू सलाम फेरने से पहले करना चाहिए।

नमाज़ से फ़ारिग होकर बातें कर चुकने के बाद सज्दा :

हज़रत इमरान बिन हसीन रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने अस्र की नमाज़ पढ़ाई और तीन रकआत पढ़कर सलाम फेर दिया और घर तशरीफ़ ले गए। एक सहाबी ख़रबाक़ रज़ि० उठ के आपके पास गए और आपके सहू का ज़िक्र किया तो आप रज़ि० तेज़ी से लोगों के पास पहुंचे। और ख़रबाक़ रज़ि० के कथन की तस्दीक़ चाही लोगों ने कहा ख़रबाक़ सच कहता

1. तिर्मिज़ी, हदीस 398 व इब्ने माजा, हदीस 1209। इमाम तिर्मिज़ी, इमाम हाकिम और इमाम ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

2. बुख़ारी, हदीस 829-830, 1224-1225, 1230 व मुस्लिम, हदीस 570।

है। फिर आप सल्ल० ने एक रकअत पढ़ी। फिर सलाम फेरा और फिर दो सज्दे किए। फिर सलाम फेरा।[1]

इस हदीस से मालूम हुआ कि जो व्यक्ति चार रकअत की जगह तीन पढ़कर सलाम फेर दे फिर जब उसको मालूम हो जाए कि मैंने तीन रकआत पढ़ी हैं तो चाहे वह घर भी चला जाए और बातें भी कर ले तो फिर भी वह एक रकअत जो रह गई थी पढ़कर सज्दाए सहू करके सलाम फेरे उसको सारी नमाज़ पढ़ने की ज़रूरत नहीं।

और एक यह बात भी मालूम हुई कि नमाज़ में अगर सज्दाए सहू पड़ जाए और किसी वजह से नमाज़ी सज्दाए सहू न कर सके और सलाम फेर कर बातें आदि कर ले फिर याद आने पर जब सज्दाए सहू करना चाहे तो सलाम के बाद करे और फिर सलाम फेरकर नमाज़ से फ़ारिग़ हो।

चार की जगह पांच रकअतें पढ़ने पर सज्दा :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने ज़ोहर की नमाज़ (भूल से) पांच रकआत पढ़ाई आपसे पूछा गया : क्या नमाज़ में ज़्यादती हो गई है? आपने फ़रमाया क्यों? सहाबा रज़ि० ने अर्ज़ किया : "आपने ज़ोहर की पांच रकआत पढ़ाई हैं।" फिर आप सल्ल० ने सलाम के बाद दो सज्दे किए और फ़रमाया : "मैं भी तुम्हारी तरह आदमी हूं, मैं भी भूलता हूं जैसे तुम भूलते हो, तो जब भूल जाऊं तो मुझे याद दिलाया करो।"[2]

---

1. मुस्लिम, हदीस 574।

2. बुख़ारी, हदीस 401, मुस्लिम, हदीस 572। अगर इस अध्याय में हज़रत ज़ुलदीन रज़ि० की हदीस (बुख़ारी, हदीस 1229) भी शामिल कर ली जाए तो इन तमाम रिवायतों का सारांश यह निकलता है कि :

(1) जब इमाम सज्दाए सहू किए बिना सलाम फेर दे और मुक़तदी उसे बाक़ी रह गई नमाज़ याद दिलाएं तो वह उन्हें बाक़ी नमाज़ पढ़ाएगा और सलाम फेरने के बाद सज्दा सहू करेगा।

(2) और अगर मुक़तदी उसे यह याद दिलाएं कि हमने एक रकअत अधिक पढ़ ली है तो भी ज़ाहिर है कि सलाम तो फिर चुका है अब उसने केवल सज्दा सहू ही करना है।

शेष अगले पृष्ठ पर

सज्दाए सहू सलाम से पहले या बाद करने का ज़िक्र तो अहादीस में आप देख चुके हैं। लेकिन केवल एक ही तरफ़ सलाम फेरकर सज्दा करना और फिर अत्तहिय्यात पढ़कर सलाम फेरना सुन्नत से साबित नहीं है।

---

(3) अगर रकआत की तादाद में शक पैदा हो जाए (या क़ाअदा ऊला छूट जाए) तो फिर सलाम से पहले सज्दा सहू करेगा।

अलबत्ता यह शक पैदा हो कि मैंने एक रकअत पढ़ी है या दो? दो पढ़ी है या तीन? तो वह कम तादाद शुमार करके नमाज़ मुकम्मल करेगा।

और अगर यह शक पैदा हो कि तीन पढ़ी हैं या चार? वह शक को नज़रअंदाज़ करते हुए अपने यक़ीन पर अमल करे (सज्दा सहू वह सलाम से पहले ही करेगा)।

(4) अगर नमाज़ी को किसी वजह से ये आदेश याद न रहें या वह ऐसी भूल (सहू) का शिकार हो गया है जो उन अहादीस में मौजूद नहीं है तो फिर उसे जान लेना चाहिए कि नबी अकरम सल्ल० ने सलाम से पहले भी सहू के दो सज्दे किए हैं और सलाम फेरने के बाद भी वह जिस सूरत पर भी अमल करेगा अल्लाह तआला उसे क़ुबूल कर लेगा इंशाअल्लाहुल अज़ीज़।

नमाज़ के बाद मसनून अज़्कार

(1) हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैं रसूलुल्लाह सल्ल० की नमाज़ का पूरा होना तकबीर (अल्लाहु अकबर की आवाज़) से पहचान लेता था।[1]

अर्थात नबी सल्ल० फ़र्ज़ नमाज़ का सलाम फेर कर ऊंची आवाज़ से अल्लाहु अकबर कहते थे। इससे साबित हुआ कि इमाम और मुक़तदियों को नमाज़ से फ़ारिग होते ही एक बार बुलन्द आवाज़ से "अल्लाहु अकबर" कहना चाहिए।

(2) हज़रत सोबान रज़ि० रिवायत करते हैं कि नबी करीम सल्ल० जब अपनी नमाज़ ख़त्म करते तो (तीन बार) फ़रमाते :

«أَسْتَغْفِرُ اللّٰهَ، أَسْتَغْفِرُ اللّٰهَ، أَسْتَغْفِرُ اللّٰهَ»

फिर यह पढ़ते :

«اَللّٰهُمَّ أَنْتَ السَّلَامُ وَمِنْكَ السَّلَامُ تَبَارَكْتَ يَاذَا الْجَلَالِ وَالْإِكْرَامِ»

"या इलाही तू "सलाम" है और तेरी ही तरफ़ से सलामती है ऐ ज़ुल जलालि वल इकराम तू बड़ा ही बरकत वाला है।"[2]

चेतावनी : दुआए रसूल सल्ल० में वृद्धि :

जिस तरह दुआए अज़ान में लोगों ने वृद्धि कर रखी है इसी तरह इस दुआ में भी लोगों ने ज़्यादती की हुई है। वह ज़्यादती देखें : "अल्लाहुम-म अन्तस्सलाम व मिन्कस्सलाम" रसूलुल्लाह सल्ल० के शब्द हैं। आगे "व इलै-क यरजिउस्सलाम हय्यिना रब्बना बिस्सलाम व अदख़िलना दारुस्सलाम" की वृद्धि कर रखी है। कितने अफ़सोस की बात है कि शुरू और आख़िर में रसूलुल्लाह सल्ल० के शब्द और बीच में ख़ुद अपनी तरफ़ से दुआइया जुमले बढ़ाकर हदीसे रसूल सल्ल० में ज़्यादती की हुई है। मआज़ल्लाह! क्या आप

1. बुख़ारी, हदीस 841-842 व मुस्लिम, हदीस 583।
2. मुस्लिम, हदीस 591।

यह वाक्ये भूल गए थे या दुआ नाक़िस छोड़ गए थे जिसकी पूर्ति उम्मतियों ने की है? अगर कोई कहे कि इन बढ़ाए हुए जुमलों में क्या ख़राबी है उनका अनुवाद बहुत अच्छा है, आख़िर दुआ ही है और अल्लाह ही के आगे है? गुज़ारिश है कि इंसान अपनी मादरी या अरबी ज़बान आदि में जो दुआ चाहे अपने मालिक से करे, जैसे वाक्य चाहे दुआ में इस्तेमाल करे, कोई हरज नहीं। मगर हदीसे रसूल सल्ल० में अपनी तरफ़ से शब्द या वाक्य ज़्यादा करने नाजाइज़ हैं। ऐसा करने से दीन की असल सूरत क़ायम नहीं रहती।

(3) हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने मेरा हाथ पकड़ कर फ़रमाया : "ऐ मुआज़! अल्लाह की क़सम! मैं तुझसे मुहब्बत करता हूं।" मैंने कहा, मैं भी आप से मुहब्बत रखता हूं। फिर आपने फ़रमाया : " (जब तू मुझसे मुहब्बत रखता है तो मैं तुझे वसीयत करता हूं कि) हर (फ़र्ज़) नमाज़ के बाद यह (दुआ) पढ़ना न छोड़ना :

«رَبِّ أَعِنِّيْ عَلَى ذِكْرِكَ وَشُكْرِكَ وَحُسْنِ عِبَادَتِكَ»

"ऐ मेरे रब! ज़िक्र करने, शुक्र करने और अच्छी इबादत करने में मेरी मदद कर।"[1]

(4) हज़रत मुग़ीरा बिन शैबा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद कहते थे :

«لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللهُ وَحْدَهُ لاَ شَرِيْكَ لَهُ، لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ، وَهُوَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ، اَللّٰهُمَّ لاَ مَانِعَ لِمَا أَعْطَيْتَ، وَلاَ مُعْطِيَ لِمَا مَنَعْتَ، وَلاَ يَنْفَعُ ذَا الْجَدِّ مِنْكَ الْجَدُّ»

"अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं है, वह अकेला है उसका कोई शरीक नहीं है, उसी के लिए बादशाहत है और उसी के लिए सारी प्रशंसा है और वह हर चीज़ पर क़ादिर है। या अल्लाह! तेरे देने को कोई रोकने वाला

1. नसाई, हदीस 1226 व अबू दाऊद, हदीस 1522। इसे इमाम हाकिम (1/273 और 3/273-274) इमाम ज़ेहबी, इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा, इमाम इब्ने हिबान और इमाम नववी ने सहीह कहा है। अबू दाऊद की रिवायत में "रब्बि" की बजाए "अल्लाहुम-म" के शब्द हैं।

नहीं और तेरी रोकी हुई चीज़ कोई देने वाला नहीं और दौलतमंद को (उसकी) दौलत तेरे अज़ाब से नहीं बचा सकती।"[1]

(5) अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ से सलाम फेरने के बाद पढ़ते थे :

«لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللهُ وَحْدَهُ لاَ شَرِيْكَ لَهُ، لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ، وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ، لاَ حَوْلَ وَلاَ قُوَّةَ إِلاَّ بِاللهِ، لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللهُ، وَلاَ نَعْبُدُ إِلاَّ إِيَّاهُ، لَهُ النِّعْمَةُ وَلَهُ الْفَضْلُ وَلَهُ الثَّنَاءُ الْحَسَنُ، لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللهُ مُخْلِصِيْنَ لَهُ الدِّيْنَ، وَلَوْ كَرِهَ الْكَافِرُوْنَ»

"अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं, वह अकेला है, उसका कोई शरीक नहीं, उसी के लिए बादशाहत है और उसी के लिए सारी प्रशंसा है और वह हर चीज़ पर क़ादिर है। गुनाहों से रुकना और इबादत पर क़ुदरत पाना केवल अल्लाह के सौभाग्य से है। अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं और हम (केवल) उसी की इबादत करते हैं हर नेमत का मालिक वही है और सारा इनाम उसी की सम्पत्ति है (अर्थात फ़ज़्ल और नेमतें केवल उसी की तरफ़ से हैं), उसी के लिए अच्छी प्रशंसा है। अल्लाह के सिवा कोई उपास्य (वास्तविक) नहीं, हम (केवल) उसी की इबादत करते हैं यद्यपि काफ़िर बुरा मनाएं।"[2]

(6) रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ के बाद इन कलिमात के साथ अल्लाह की पनाह पकड़ते थे (अर्थात इन्हें पढ़ते थे) :

«اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَعُوْذُ بِكَ مِنَ الْجُبْنِ، وَأَعُوْذُ بِكَ مِنَ الْبُخْلِ، وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْ أَنْ أُرَدَّ إِلٰى أَرْذَلِ الْعُمُرِ، وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْ فِتْنَةِ الدُّنْيَا وَعَذَابِ الْقَبْرِ»

"ऐ अल्लाह! मैं बुज़दिली और कंजूसी से तेरी पनाह चाहता हूं। और इस बात से भी तेरी पनाह चाहता हूं कि मुझे रज़ील उम्र (ज़्यादा बुढ़ापे) की तरफ़ फेर दिया जाए और इसी तरह मैं सांसारिक फ़ितनों और अज़ाबे क़ब्र

1. बुख़ारी, हदीस 844 व मुस्लिम हदीस 593।
2. मुस्लिम, हदीस 594।

से भी तेरी पनाह चाहता हूं।"[1]

(7) हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "उस व्यक्ति के तमाम गुनाह माफ़ कर दिए जाएंगे चाहे समुद्र के झाग के बराबर हों, जो हर (फ़र्ज़) नमाज़ के बाद यह पढ़े :

«سُبْحَانَ اللّٰهِ» ٣٣ بار «اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ» ٣٣ بار، «اَللّٰهُ اَكْبَرُ» ٣٣ بار اور ایک بار «لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ، لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ»

"अल्लाह (हर बुराई से) पाक है"। "सारी प्रशंसा अल्लाह की है।" "अलाह सबसे बड़ा हैं" "अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं, वह अकेला है उसका कोई शरीक नहीं। उसी के लिए सारी बादशाहत और उसी के लिए सारी प्रशंसा है और वह हर चीज़ पर ख़ूब क़ुदरत रखने वाला है।" पढ़े, उसके गुनाह बख़्शे जाएंगे यद्यपि दरिया के झाग की तरह हों।"[2]

हज़रत काअब बिन उजरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति फ़र्ज़ नमाज़ के बाद "सुब्हानल्लाह" 33 बार "अलहम्दुलिल्लाह" 33 बार और "अल्लाहु अकबर" 34 बार कहेगा वह नामुराद नहीं होगा।[3]

(8) हज़रत उक़बा बिन आमिर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने मुझे हुक्म किया कि मैं हर (फ़र्ज़) नमाज़ के बाद मुअव्विज़ात पढ़ा करूं।[4]

मुअव्विज़ात (अल्लाह की पनाह में देने वाली सूरतें) यह उन सूरतों को कहते हैं जिनके शुरू में "क़ुल अऊज़ु" का शब्द है, इन्हें मुअव्विज़तैन भी कहा जाता है अर्थात क़ुरआन पाक की आख़िरी दो सूरतें जो निम्न हैं :

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ﴿قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ الْفَلَقِ ۝١ مِنْ شَرِّ مَا خَلَقَ ۝٢ وَمِنْ شَرِّ غَاسِقٍ اِذَا وَقَبَ ۝٣ وَمِنْ شَرِّ النَّفّٰثٰتِ فِي الْعُقَدِ ۝٤ وَمِنْ شَرِّ حَاسِدٍ اِذَا حَسَدَ ۝٥﴾ (الفلق ١١٣/١-٥)

---

1. बुख़ारी, हदीस 6374।
2. मुस्लिम, हदीस 597।
3. मुस्लिम, हदीस 596।
4. अबू दाऊद, हदीस 1523। इसे इमाम हाकिम (1/253) ज़ेहबी, इब्ने ख़ुज़ैमा और इब्ने हिबान (हदीस 2347) ने सहीह कहा है।

"अल्लाह के नाम से (शुरू करता हूं) जो बहुत रहम करने वाला बड़ा मेहरबान है।"

"कहो मैं पनाह (हिफ़ाज़त) मांगता हूं सुबह के पालनहार की। हर उस चीज़ के शर से जो उसने पैदा की है। और अंधेरी रात के शर से जबकि वह छा जाए। और गिरहों में फूंकने वालियों के शर से (अर्थात जादू, टोना करने, कराने वालों के शर से)। और हासिद (जलने वालों) के शर से जबकि वह हसद करे।"

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَٰنِ الرَّحِيمِ ﴿ قُلْ أَعُوذُ بِرَبِّ النَّاسِ ① مَلِكِ النَّاسِ ② إِلَٰهِ النَّاسِ ③ مِن شَرِّ الْوَسْوَاسِ الْخَنَّاسِ ④ الَّذِي يُوَسْوِسُ فِي صُدُورِ النَّاسِ ⑤ مِنَ الْجِنَّةِ وَالنَّاسِ ⑥ ﴾ (الناس ١١٤/١-٦)

"अल्लाह के नाम से (शुरू करता हूं) जो बहुत रहम करने वाला बड़ा मेहरबान है।"

"कहो मैं पनाह मांगता हूं लोगों के रब की। लोगों के मालिक की। लोगों के (असल) उपास्य की। उस वसवसा डालने वाले के शर से जो बार बार पलट कर आता है। जो लोगों के सीनों (दिलों) में वसवसे (और बुरे विचार) डालता है। चाहे वह जिन्नों में से हो या इंसानों में से।

(9) हज़रत अबू उमामा रज़ि० रिवायत करते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को फ़रमाते हुए सुना :

"जो व्यक्ति हर नमाज़ के बाद आयतल कुर्सी पढ़े तो उसको जन्नत में दाख़िल होने से सिवाए मौत के कोई चीज़ नहीं रोकती।"[1]

मतलब यह है कि आयतल कुर्सी पढ़ने वाला मौत के बाद सीधा जन्नत में जाएगा।

आयतल कुर्सी :

﴿ اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ ۚ لَا تَأْخُذُهُ سِنَةٌ وَلَا نَوْمٌ ۚ لَّهُ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ ۗ مَن ذَا الَّذِي يَشْفَعُ عِندَهُ إِلَّا بِإِذْنِهِ ۚ يَعْلَمُ مَا بَيْنَ أَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ ۖ وَلَا

---

1. नसाई, फ़ी अमल यौम वल्लैला 100। इसे इब्ने हिबान और मुंज़िरी ने सहीह कहा है।

يُحِيطُونَ بِشَيْءٍ مِّنْ عِلْمِهِ إِلَّا بِمَا شَاءَ وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ وَلَا يَئُودُهُ حِفْظُهُمَا وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ ﴾ (البقرة/٢٥٥)

"अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं। वह ज़िंदा है। हमेशा क़ायम रहने वाला है। वह ऊंघता है न सोता है। उसी का है जो कुछ आसमानों और ज़मीन में है। उसकी इजाज़त के बिना कौन उसके पास (किसी की) सिफ़ारिश कर सकता है? वह जानता है जो कुछ उनसे पहले गुज़रा और जो कुछ उनके बाद होगा और लोग उसके इल्म में से किसी चीज़ का एहाता नहीं कर सकते (मालूम नहीं कर सकते) मगर जितना वह चाहता है। (उतना ज्ञान जिसे चाहे दे देता है) उसकी कुर्सी ने आसमानों और ज़मीन को घेर रखा है और उन दोनों की हिफ़ाज़त उसको थकाती नहीं, वह बुलन्द व उच्च, बड़ी महानता वाला है।'[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति रात को सोते समय आयतल कुर्सी पढ़ लेता है तो अल्लाह की तरफ़ से उसके लिए मुहाफ़िज़ मुक़र्रर कर दिया जाता है और सुबह तक शैतान उसके क़रीब नहीं आता।[2]

(१०) «اَللّٰهُمَّ أَصْلِحْ لِيْ دِيْنِيَ الَّذِيْ جَعَلْتَهُ لِيْ عِصْمَةً، وَأَصْلِحْ لِيْ دُنْيَايَ الَّتِيْ جَعَلْتَ فِيْهَا مَعَاشِيْ، اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَعُوْذُ بِرِضَاكَ مِنْ سَخَطِكَ، وَأَعُوْذُ بِعَفْوِكَ مِنْ نِقْمَتِكَ، وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْكَ، لَا مَانِعَ لِمَا أَعْطَيْتَ وَلَا مُعْطِيَ لِمَا مَنَعْتَ، وَلَا رَادَّ لِمَا قَضَيْتَ، وَلَا يَنْفَعُ ذَا الْجَدِّ مِنْكَ الْجَدُّ»

---

1. अल्लाह जो सारी कायनात की हिफ़ाज़त कर सकता है क्या वह एक इंसान या उसके घर की हिफ़ाज़त नहीं कर सकता? निश्चय ही कर सकता है फिर वह अपनी हिफ़ाज़त के लिए जाइज़ साधनों के बजाए शिर्किया साधन क्यों इख़्तियार करता है? इस मक़सद के लिए विभिन्न कड़े और अंगूठियां क्यों पहनता है? धागे क्यों बांधता है? अपनी गाड़ी पर जूते या चीथड़े क्यों लटकाता है? ओ, अल्लाह के बन्दो! आयतल कुर्सी पढ़ो, हिफ़ाज़त में रहो, निश्चय ही अल्लाह की हिफ़ाज़त ही बेहतरीन हिफ़ाज़त है जिसका कोई तोड़ नहीं।

2. नसाई, फ़ी अमलिल यौम वल्लैल (959) इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 2444) ने इसे सहीह कहा है।

(10) "ऐ अल्लाह! मेरे लिए मेरा वह दीन संवार दे जिसको तूने मेरी हिफ़ाज़त का सबब बनाया है और मेरी दुनिया (भी) संवार दे जिसमें तूने मेरी रोज़ी पैदा की है। ऐ अल्लाह! मैं तेरी ख़ुशनूदी के साथ तेरे ग़ुस्से से और तेरी माफ़ी के साथ तेरे अज़ाब से और तेरे (दया) के साथ तेरी सज़ा से पनाह मांगता हूं जो चीज़ तू प्रदान करे उसे कोई रोकने वाला नहीं है और जो चीज़ तू रोके उसे कोई प्रदान करने वाला नहीं, तेरे फ़ैसले को कोई टालने वाला नहीं और किसी दौलतमंद को उसकी दौलत तेरे अज़ाब से नहीं बचा सकती।"[1]

(11) «رَبِّ أَعِنِّي وَلاَ تُعِنْ عَلَيَّ، وَانْصُرْنِي وَلاَ تَنْصُرْ عَلَيَّ، وَامْكُرْلِي وَلاَ تَمْكُرْ عَلَيَّ، وَاهْدِنِي وَيَسِّرِ الْهُدٰى لِيْ، وَانْصُرْنِي عَلٰى مَنْ بَغٰى عَلَيَّ، رَبِّ اجْعَلْنِي شَاكِرًا لَكَ ذَاكِرًا لَكَ رَاهِبًا لَكَ مِطْوَاعًا لَكَ مُخْبِتًا إِلَيْكَ أَوَّاهًا مُنِيبًا، رَبِّ تَقَبَّلْ تَوْبَتِي، وَاغْسِلْ حَوْبَتِي، وَأَجِبْ دَعْوَتِي، وَثَبِّتْ حُجَّتِي، وَسَدِّدْ لِسَانِي، وَاهْدِ قَلْبِي وَاسْلُلْ سَخِيْمَةَ صَدْرِي»

(11) "ऐ मेरे रब तू मेरी मदद कर और मेरे ख़िलाफ़ मदद न कर। मुझे विजयी कर और (किसी को) मुझ पर विजयी न कर। मुझे तदबीर बता और (मेरे दुश्मनों को) मेरे ख़िलाफ़ तदबीर न बता। मुझे हिदायत दे और हिदायत मेरे लिए आसान कर और मेरे ऊपर ज़ुल्म करने वालों के ख़िलाफ़ मेरी मदद कर। ऐ मेरे रब! मुझे अपना शुक्र करने वाला, अपना ज़िक्र करने वाला, अपने से डरने वाला, अपना हुक्म मानने वाला, अपने सामने गिड़गिड़ाने वाला और अपनी तरफ़ विनय से पलटने वाला बना दे। ऐ मेरे रब! मेरी तौबा क़ुबूल फ़रमा, और मेरे गुनाह धो डाल, मेरी दुआ क़ुबूल कर और मेरी दलील साबित रख, मेरी ज़बान सीधी कर, मेरे दिल को पथ प्रदर्शन से नवाज़ और मेरे सीने से बैर कपट निकाल दे।"[1]

---

1. नसाई, 3/73 (हदीस 1345) इसे इब्ने हिबान (541) और इब्ने ख़ुज़ैमा (745) ने सहीह कहा है।

2. सुनन तिर्मिज़ी (हदीस 3551 व 3560) व इब्ने माजा (हदीस 3830) व अबू दाऊद (हदीस 1510), इसे इमाम हाकिम (1/520) इमाम इब्ने हिबान (हदीस 2414) और इमाम ज़ेहबी ने सहीह कहा है। तिर्मिज़ी और इब्ने माजा की रिवायात में के शब्द हैं। और इब्ने माजा में "ल-क मुतीअन" और अबू दाऊद में "इलै-क मुख़बितन अव

फ़र्ज़ नमाज़ के बाद सामूहिक दुआ :

फ़र्ज़ नमाज़ के बाद सामूहिक दुआ के सुबूत में कोई मक़बूल हदीस नहीं है। अत्यन्त हैरत की बात है कि रसूलुल्लाह सल्ल० मदीना मुनव्वरा में दस साल रहे, पांचों समय नमाज़ें पढ़ाईं, सहाबा किराम रज़ि० की बड़ी तादाद ने आपकी इक़्तदा में नमाज़ें पढीं मगर उनमें से कोई एक भी सामूहिक दुआ का ज़िक्र न करे। तो यह उसके झूठ की स्पष्ट दलील है।

मौलाना अब्दुर्रहमान मुबारकपुरी कहते हैं कि अगर कोई व्यक्तिगत रूप से नमाज़ के बाद हाथ उठाकर दुआ मांग लेता है तो उसमें कोई हरज नहीं। इमाम इब्ने तैमिया, इब्ने क़य्यिम, इब्ने हजर रह० और बहुत से मुहक़्क़िक़ीन उलमा ने फ़र्ज़ नमाज़ के बाद प्रचलित सामूहिक दुआ का इंकार किया है और इसे बिदअत कहा है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "निकट ही मेरी उम्मत में ऐसे लोग पैदा होंगे जो पानी के इस्तेमाल में और दुआ करने में हद से बढ़ा करेंगे।"[1]

सामूहिक दुआ की दलील मे बयान की जाने वाली तमाम रिवायतें ज़ईफ़ हैं, विवरण यह है :

(1) हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है कि जो बन्दा हर नमाज़ के बाद अपने दोनों हाथ फैला कर दुआ करे अल्लाह तआला उसके हाथों को नामुराद नहीं लौटाता। (इब्नुल सनी/138)

इसकी सनद में (अ) इसहाक़ बिन ख़ालिद है जो मुंकिर अहादीस रिवायत करता है। (ब) इमाम अहमद बिन हंबल रह० फ़रमाते हैं कि (इसके एक और रावी) अब्दुल अज़ीज़ अब्दुर्रहमान की ख़सीफ़ से बयान की गई रिवायात झूठी और मनगढ़त होती हैं। (स) ख़सीफ़ का अनस रज़ि० से समाअ मालूम नहीं। (द) इसके अलावा इस रिवायत में सामूहिक दुआ का कोई ज़िक्र नहीं है।

(2) यज़ीद बिन असवद आमिरी रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल०

मुबीना" के शब्द आए हैं फिर भी यह मुकम्मल दुआ बीना मिश्कात (जामेअ दुआ, फ़स्ल सानी) में मौजूद है।

1. अबू दाऊद, हदीस 1480। इमाम हाकिम और इमाम ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

ने नमाज़े फ़ज्र का सलाम फेरा और दोनों हाथ उठाकर दुआ मांगी।

(फ़तावा नज़ीरिया)

इस हदीस की सनद हसन है मगर मौलाना उबैदुल्लाह रहमानी मरहूम लिखते हैं : "हदीस की किताबों के अंदर असल हदीस में "व-र-फ़-अ़ यदैहि फ़-द-आ़" (दोनों हाथ उठाकर दुआ मांगनी) के शब्द मौजूद नहीं हैं।" इसके अलावा इसमें भी सामूहिक दुआ का ज़िक्र नहीं है।

(3) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर और अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० दुआ करते थे और (आख़िर में) अपनी दोनों हथेलियां अपने मुंह पर फेरते थे।[1]

फिर भी उसमें भी जमाअत के बाद सामूहिक दुआ का ज़िक्र नहीं।[2]

---

1. अल अदबुल मुफ़रद बुख़ारी, इसकी सनद बुख़ारी की शर्त पर है। इस सिलसिले में पेश की जानी वाली तक़रीबन तमाम रिवायतें न केवल सख़्त ज़ईफ़ हैं बल्कि उनमें सामूहिक दुआ का ज़िक्र तक नहीं है और कुछ हदीसों का अवसर तो कुछ और है मगर उन्हें ज़बरदस्ती सामूहिक दुआ के साथ नत्थी कर दिया गया है। विवरण के लिए "सलातुल रसूल सल्ल०" (सम्पादक हकीम सादिक़ सियालकोटी रह०) का वह नुस्ख़ा देखें जो शैख़ अब्दुर्रऊफ़ बिन अब्दुल हन्नान द्वारा सम्पादित है।

2. क्या फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद हाथ उठाकर सामूहिक दुआ करना बिदअत है? इस सिलसिले में निम्न बातें विचार्णीय हैं :

(1) हाथ उठाकर सामूहिक दुआ करना एक स्थाई इबादत है जिसका कोई समय नहीं है अर्थात किसी भी समय की जा सकती है अलबत्ता जिन मौक़ों पर उसका आयोजन करना सुन्नत से साबित है उनको वरीयता दी जाएगी।

(2) जो इबादत हर समय जाइज़ हो अगर आप अपनी आसानी के लिए उसे किसी ख़ास समय में रोज़ाना करना चाहते हैं तो उसूली तौर पर यह भी जाइज़ है इरशादे नबवी है : "अल्लाह तआला को वह अमल ज़्यादा महबूब है जिस पर हमेशगी की जाए अगरचे थोड़ा हो।" (मुस्लिम, हदीस 782) लेकिन किसी के लिए यह जाइज़ नहीं है कि तमाम जाइज़ समयों को छोड़कर केवल एक समय को फ़र्ज़ का दर्जा देकर दूसरे मुसलमानों को उसका पाबन्द बनाए क्योंकि जब शरीअत ने उस समय को मुसलमानों पर मुक़र्रर नहीं किया तो यह क्यों करे? जैसे अगर विभिन्न लोग रोज़ाना भिन्न भिन्न समयों में क़ुरआन पाक की विभिन्न सूरतें पढ़ते हैं तो यह जाइज़ अमल होगा। लेकिन अगर कोई मौलवी साहब यह दावत देनी शुरू कर दें कि "तमाम अहले इस्लाम रोज़ाना नमाज़ फ़ज्र के बाद बीस बार सूरह "अल-क़मर" पढ़ा करें, इसका यह यह सवाब है" फिर इसके हल्क़ाए असर में आने वाले तमाम मुसलमान वास्तव में सख़्ती के साथ इसकी पाबन्दी शुरू कर

दें तो उनका यह अमल दलील का मोहताज बन जाएगा, अगर शरई दलील में उसकी स्पष्टता आ जाए तो सुन्नत होगा वरना बिदअत।

(3) जो इबादत हर समय प्रचलित हो अगर आप उसे किसी ख़ास मौक़े पर करना चाहते हैं तो सावधानी हेतु यह मालूम कर लें कि कहीं उस मौक़े के लिए शरीअत ने कोई फ़र्ज़ तो मुक़र्रर नहीं किया? क्योंकि अगर उस मौक़े के लिए शरीअत ने कोई फ़र्ज़ आयद किया है तो फिर फ़र्ज़ तर्क करके जाइज़ काम में लगे रहना कदापि जाइज़ नहीं है जैसे नमाज़ खड़ी हो और जिसने यही नमाज़ जमाअत के साथ पहले नहीं पढ़ी उसके लिए जाइज़ नहीं है कि वह जमाअत में शामिल होने की बजाए सुन्नतें या नवाफ़िल पढ़ता रहे, कोई विर्द व वज़ीफ़ा, दुआ या तिलावत करता रहे क्योंकि उन जाइज़ नेकियों को टालने की गुंजाइश मौजूद है लेकिन मौक़ा के फ़र्ज़ को बिला वजह टालने की कदापि कोई गुंजाइश नहीं है।

(4) अगर इस ख़ास मौक़े के लिए शरीअत ने कोई सुन्नत मुक़र्रर कर रखी है तो भी जाइज़ काम को छोड़कर सुन्नत को वरीयता दी जाएगी। अगरचे सुन्नत फ़र्ज़ नहीं, उसे किया जाए तो बहुत ज़्यादा सवाब है और अगर किसी वजह से कभी छूट जाए तो कोई गुनाह नहीं मगर एक मौक़े की सुन्नत को जब हमेशा तर्क किया जाएगा तो गुनाह लाज़िम आएगा क्योंकि सुन्नत छोड़ने के लिए नहीं बल्कि अपनाने के लिए होती है, इसे अपनाना ही जब रसूल सल्ल० का तक़ाज़ा है जबकि इसे छोड़े रखना इससे लापरवाही की दलील है और इरशाद पाक है : "जिसने मेरी सुन्नत से लापरवाही की वह मुझसे नहीं।" (बुख़ारी, अन्निकाह, अध्याय 1, हदीस 5063) इसकी मिसाल फ़र्ज़ नमाज़ के बाद (ला इला-ह इल्लल्लाहु) का सामूहिक विर्द है। इसमें कोई शक नहीं कि (ला इला-ह इल्लल्लाहु) अफ़ज़ लुज़्ज़िक्र (सबसे अफ़ज़ल ज़िक्र) है लेकिन इसे किसी भी समय करना जाइज़ है और चूंकि फ़र्ज़ नमाज़ के बाद वाला समय भी समयों में से एक समय है अतः अगर कोई व्यक्ति किसी फ़र्ज़ नमाज़ के बाद अपने तौर पर (ला इला-ह इल्लल्लाहु) कह देता है तो बिल्कुल जाइज़ है लेकिन जब हम यह देखते हैं कि फ़र्ज़ नमाज़ के फ़ौरन बाद नबी अकरम सल्ल० का तरीक़ा और सुन्नत कुछ और है तो फिर हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद हमेशा (ला इला-ह इल्लल्लाहु) का विर्द करने का मतलब यह है कि उस मौक़े की सुन्नत को ख़त्म कर दिया जाए क्योंकि (ला इला-ह इल्लल्लाहु) का विर्द टाला जा सकता है लेकिन नमाज़ के बाद वाले मसनून अज़्कार और दुआओं को हमेशा टालना किसी तरह भी जाइज़ नहीं है, वैसे भी कोरस की शक्ल में बुलन्द आवाज़ से (ला इला-ह इल्लल्लाहु) के सामूहिक विर्द की पूरे नबवी काल में कोई मिसाल न हीं मिलती।

(5) अगर किसी मौक़े की सुन्नत के साथ एक और सुन्नत आ मिले तो दोनों सुन्नतों को बजा लाना सही होगा जैसे किसी फ़र्ज़ नमाज़ की जमाअत हुई, इमाम साहब

ने सलाम फेरा, इमाम साहब और मुक़तदी हज़रात मसनून अज़्कार और दुआओं में व्यस्त हो गए, अचानक किसी ने कहा : "बीमारों के लिए दुआ कर दें" या "फ़लां व्यक्ति बीमार है उसके लिए दुआ कर दें" (आदि) तो किसी के मुतालबे पर दुआ करना भी सुन्नत है अतः दुआ करना जाइज़ होगा।

(6) याद रखिए! हाथ उठाकर सामूहिक दुआ करना न तो फ़र्ज़ नमाज़ का हिस्सा है और न ही बाद वाले मसनून अज़्कार का हिस्सा है इसलिए इसका हमेशा आयोजन करना सही नहीं है क्योंकि :

(7) फ़र्ज़ नमाज़ एक अलग इबादत है और हाथ उठाकर सामूहिक दुआ करना एक अलग इबादत है और जब किसी शरई दलील के बिना : (अ) दो अलग अलग इबादतों को एक विशेष क्रम के साथ हमेशा एक साथ अदा किया जाए कि (ब) दोनों एक दूसरे का हिस्सा मालूम हों यहां तक कि एक के बिना दूसरी को अधूरा समझा जाने लगे और (स) एक शरई मसले की तरह लोगों को इसकी दावत, प्रेरणा और तालीम दी जाए (द) और जो व्यक्ति उन इबादात को आपके तरीक़े के मुताबिक़ अदा न करे उसे मुंकिर और गुस्ताख़ की उपाधियों से नवाज़ा जाए तो आप राहे सुन्नत से भटक जाएंगे क्योंकि जब विभिन्न इबादात को अपनी मर्ज़ी से जमा करके एक नया तरीक़ा प्रचलित किया जाएगा तो वह सुन्नत नहीं रहता, बिदअत बन जाता है।

(8) बात उसूल की है जो काम नबी अकरम सल्ल० की ज़िंदगी में ज़रूरी भी हो और उसे करने के लिए कोई रुकावट भी मौजूद न हो फिर भी पूरे नबवी काल में उसे कोई न करे मगर हम न केवल स्वयं उसे हमेशा करें बल्कि दूसरों को भी उसकी दावत दें तो वह निःसन्देह बिदअत है।

सवाल पैदा होता है कि क्या नबवी काल में फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद हाथ उठाकर सामूहिक दुआ का आयोजन करने में कोई रुकावट थी? निश्चय ही नहीं थी, फिर भी अगर किसी फ़र्ज़ नमाज़ के बाद उसका कभी आयोजन नहीं किया गया तो इससे मालूम हुआ कि इसका आयोजन न करना सुन्नत है क्योंकि असंभव है कि एक चीज़ दीन भी हो और नबवी काल में कर सकने के बावजूद उसे कोई न करे या उसे किया गया हो मगर मक़बूल हदीसों के विशाल भंडार में वह किसी को कहीं नज़र न आए।

(9) इंसान प्राकृतिक रूप से आसानी पसन्द है, उसे मसनून दुआएं याद करना "भारी" गुज़रता है और चूंकि उसकी "व्यस्तता" भी बहुत ज़्यादा हैं अतः वह फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद शान्ति के साथ पांच, छः मिनट नहीं निकाल सकता अतः उस सुन्नत से पहलू बचाने के लिए उसका बदल ईजाद कर लिया गया अर्थात "मौलवी साहब सलाम फेरते ही हाथ उठाएं कुछ मसनून दुआएं आदि मसनून शब्दों पर आधारित छोटे छोटे वाक्य बोलें और मुंह पर हाथ फेरकर तमाम नमाज़ियों को "फ़ारिग" कर दें जिसके बाद वे सब

(मसनून अज़्कार पढ़े बिना) उठ खड़े हों।"

असल में यह दुआ नहीं, रस्म है जो अत्यन्त नेक नीयती से हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद अदा की जाती है और इस तरह बे समझे बूझे एक सुन्नत को मिटाने का गुनाह किया जा रहा है। अफ़सोस कि लोगों को बिदअतों पर अमल करने के लिए तो बड़ा समय मिल जाता है मगर सुन्नत को अपनाने के लिए समय नहीं मिलता, जो व्यक्ति बिदअत का खंडन करे उसे सिरे से दुआ ही का मुंकिर बना दिया जाता है जबकि सुन्नत का छोड़ने वाला, अहले सुन्नत वल जाहिलिया है।

(10) फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद मसनून अज़्कार और दुआओं को छोड़कर उनके बदल के तौर पर (ला इला-ह इल्लल्लाहु) के सामूहिक विर्द और हाथ उठाकर सामूहिक दुआ मांगने को इसलिए भी रिवाज दिया गया है कि यह हमारे मस्लक की निशान और पहचान बन जाएं। क्या किसी मस्लक की सुरक्षा के लिए शरई मसाइल व आदेश के साथ इस तरह खेलना जाइज़ है। इस्लाम का हुक्म क्या है! सम्प्रदायवाद को मिटाया जाए या उसे बढ़ावा दिया जाए?

सार यह है कि फ़र्ज़ नमाज़ के बाद हाथ उठाकर सामूहिक दुआ करना अपने आप में जाइज़ है लेकिन इस जाइज़ का टकराव एक सुन्नत से हो रहा है अतः इसे अपनी नीयती नहीं बनाना चाहिए क्योंकि सुन्नते रसूल मक़बूल सल्ल० ही इस बात का ज़्यादा हक़ रखती है कि वह हर कलिमा गो मुसलमान की नीयती, मत और पहचान बने।

अतः हमें सामान्यता उन्ही अज़्कार और दुआओं पर बस करना चाहिए जिन पर हमारे प्यारे नबी सल्ल० और उनके सहाबा किराम रज़ि० हमेशा अमल करते रहे हैं। अल्लाह तआला हम सबको सौभाग्य प्रदान करे, आमीन।

(नोट) याद रहे कि इमाम के सलाम फेरने से जमाअत ख़त्म हो जाती है मगर नमाज़ियों का समूह ख़त्म नहीं होता बल्कि हर नमाज़ी अपनी जगह पर बैठकर सामान्यता एक ही क़िस्म के मसनून अल्फ़ाज़ पढ़ रहा होता है यही नमाज़ बाजमाअत के बाद सामूहिक दुआ की मसनून धारणा है और इसी पर बुज़ुर्गों का अमल रहा है लेकिन यह बात कि इमाम और मुक़तदी हज़रात अवश्य ही हाथ उठाएं और ख़ास प्रचलित अंदाज़ में संक्षिप्त सी रस्म दुआ अदा करके नमाज़ियों को फ़ारिग कर दें तो यह किसी तरह सही नहीं है।

नमाज़ की सुन्नतों का बयान

मुअक्किदा सुन्नतें : जन्नत में घर!

"हज़रत उम्मे हबीबा रज़ि० कहती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«مَنْ صَلَّى فِيْ يَوْمٍ وَّلَيْلَةٍ ثِنْتَيْ عَشْرَةَ رَكْعَةً بُنِيَ لَهُ بَيْتٌ فِي الْجَنَّةِ: أَرْبَعًا قَبْلَ الظُّهْرِ وَرَكْعَتَيْنِ بَعْدَهَا وَرَكْعَتَيْنِ بَعْدَ الْمَغْرِبِ وَرَكْعَتَيْنِ بَعْدَ الْعِشَاءِ، وَرَكْعَتَيْنِ قَبْلَ صَلَاةِ الْفَجْرِ»

"जो व्यक्ति दिन और रात में (फ़र्ज़ों के अलावा) बारह रकअतें पढ़े उसके लिए जन्नत में घर बनाया जाता है। (उन बारह रकअतों का विवरण यह है) : चार रकअत ज़ोहर से पहले, दो रकअत उसके बाद, दो रकअत मग़रिब के बाद, दो रकअत इशा के बाद और दो रकअत नमाज़े फ़ज्र से पहले।"[1]

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ ज़ोहर से पहले दो रकअतें (सुन्नत) पढ़ीं।[2]

मालूम हुआ कि ज़ोहर से पहले चार की बजाए दो रकअतें भी जाइज़ हैं।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "रात और दिन की (नफ़्ल) नमाज़ दो दो रकअतें करके पढ़ो।"[3]

मालूम हुआ चार रकआत सुन्नत भी दो, दो करके अदा कर सकते हैं।

---

1. तिर्मिज़ी, हदीस 415। इसे इमाम तिर्मिज़ी ने हसन सहीह कहा है और इसकी असल सहीह मुस्लिम में है।

2. बुख़ारी, हदीस 1172-1180 व मुस्लिम, हदीस 729। समय कम हो तो ज़ोहर से पहले दो रकअत पढ़ ली जाएं वरना चार रकआत पढ़ी जाएं।

3. अबू दाऊद, हदीस 1195। इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1210) और इमाम इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है।

रसूलुल्लाह सल्ल० सुन्नतें घर में पढ़ते थे :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन शक़ीक़ रह० रिवायत करते हैं कि मैंने हज़रत आइशा रज़ि० से रसूलुल्लाह सल्ल० के नफ़्लों का हाल मालूम किया तो हज़रत आइशा रज़ि० ने कहा : "रसूलुल्लाह सल्ल० मेरे घर में ज़ोहर से पहले चार रकअतें पढ़ते थे। फिर आप निकलते और लोगों के साथ (ज़ोहर के फ़र्ज़) पढ़ते, फिर (घर में) दाख़िल होते और दो रकअतें नमाज़ पढ़ते। आप लोगों के साथ मग़रिब की नमाज़ पढ़ते, फिर (घर में) दाख़िल होते और दो रकअत (सुन्नत) पढ़ते, फिर आप सल्ल० लोगों के साथ इशा की नमाज़ पढ़ते, फिर (घर में) दाख़िल होते और दो रकअतें नमाज़ पढ़ते और रात को आप सल्ल० नौ रकआत (तहज्जुद की) नमाज़ पढ़ते, उनमें वित्र भी होता था और जब सुबह होती तो (नमाज़े फ़ज्र से पहले) दो रकअतें (सुन्नतें) पढ़ते।[1]

ग़ैर मुअक्किदा सुन्नतें :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति अस्र से पहले चार रकआत (सुन्नत) पढ़े, अल्लाह उस पर रहमत करे।"[2]

मग़रिब से पहले दो रकअतें :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने दो बार फ़रमाया : "मग़रिब से पहले दो रकअतें अदा करो।" तीसरी बार फ़रमाया : "जिसका दिल चाहे" यह इसलिए फ़रमाया कि कहीं लोग उसे सुन्नत मुअक्किदा न बना लें।[3]

हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है कि मदीना में मुअज़्ज़िन मग़रिब की अज़ान कहता, हम सब सुन्नतों की तरफ़ दौड़ पड़ते और दो रकअतें पढ़ते। लोग इस अधिकता से दो रकअतें पढ़ते कि अजनबी यह गुमान करता कि मग़रिब की जमाअत हो चुकी है।[4]

---

1. मुस्लिम, हदीस 730।
2. तिर्मिज़ी, हदीस 430. व अबू दाऊद, हदीस 1271। इसे इब्ने ख़ुज़ैमा (1193) इब्ने हिबान (616) और नववी ने सहीह कहा है।
3. बुख़ारी, हदीस 1183 व मुस्लिम, हदीस 838।
4. मुस्लिम, हदीस 837।

मुरसद बिन अब्दुल्लाह रह०, हज़रत उक़बा रज़ि० के पास आए और कहा "क्या यह अजीब बात नहीं कि अबू तमीम रज़ि० मग़रिब की नमाज़ से पहले दो रकअत पढ़ते हैं? उक़बा रज़ि० ने कहा कि हम भी रसूलुल्लाह सल्ल० के ज़माने में पढ़ते थे। उसने पूछा : अब क्यों नहीं पढ़ते? कहने लगे कि व्यस्तता है।[1]

जुमा के बाद की सुन्नतें :

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम जुमा के बाद नमाज़ पढ़ना चाहो तो चार रकआत अदा करो।"[2]

मालूम हुआ कि जुमा के बाद चार रकआत सुन्नतें पढ़नी चाहिएं और अगर कोई दो रकअतें भी पढ़ ले तो जाइज़ होगा।

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० जुमा के बाद कुछ नमाज़ नहीं पढ़ते थे यहां तक कि अपने घर आते और दो रकअतें पढ़ते।[3]

कुछ उलमा ने यह कहा है कि मस्जिद में चार सुन्नतें (दो दो करके) पढ़े और अगर घर में आकर पढ़े तो फिर दो सुन्नतें पढ़े।[4]

फ़ज्र की सुन्नतों की श्रेष्ठता :

हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "फ़ज्र की दो सुन्नतें दुनिया और जो कुछ दुनिया में है, उससे बेहतर हैं।"[5]

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० नवाफ़िल (सुनन) में से किसी चीज़ पर इतनी मुहाफ़िज़त और पाबन्दी नहीं करते थे जिस क़द्र फ़ज्र की दो सुन्नतों पर करते थे।[6]

1. बुख़ारी, हदीस 1184।
2. मुस्लिम, हदीस 881।
3. बुख़ारी, हदीस 937, 1165, 1172, 1180 व मुस्लिम, हदीस 882।
4. देखें : मिरआतुल मफ़ातीह।
5. मुस्लिम, हदीस 725।
6. बुख़ारी, हदीस 1169 व मुस्लिम, हदीस 724।

रसूलुल्लाह सल्ल० जब फ़ज्र की दो सुन्नतें पढ़ते तो दाएं पहलू पर लेटते थे।[1]

फ़ज्र की सुन्नतें फ़र्ज़ों के बाद पढ़ सकते हैं :

अगर आप ऐसे समय मस्जिद में पहुंचें कि जमाअत खड़ी हो गई हो और आपने सुन्नतें न पढ़ी हों तो उस समय सुन्नतें मत पढ़ें क्योंकि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब नमाज़ की इक़ामत (तकबीर) हो जाए तो फ़र्ज़ नमाज़ के अलावा कोई नमाज़ नहीं होती।"[2]

ऐसी सूरत में आप जमाअत में शामिल हो जाएं और फ़र्ज़ पढ़कर सुन्नतें पढ़ लें। अतएव रसूलुल्लाह सल्ल० ने एक व्यक्ति को सुबह की फ़र्ज़ नमाज़ के बाद दो रकअतें पढ़ते हुए देखकर फ़रमाया : "सुबह की (फ़र्ज़) नमाज़ दो रकअतें हैं तुमने मज़ीद दो रकअतें कैसी पढ़ी हैं?" उस व्यक्ति ने जवाब दिया। मैंने दो रकअतें सुन्नत (जो फ़र्ज़ों से पहले हैं) नहीं पढ़ी थीं। उनको अब पढ़ा है। (यह सुनकर) रसूलुल्लाह सल्ल० ख़ामोश हो गए।[3]

और आप सल्ल० की ख़ामोशी रज़ामंदी की दलील है (मुहद्दिसीन की परिभाषा में यह तक़रीरी हदीस कहलाती है।)

एक व्यक्ति मस्जिद में आया, रसूलुल्लाह सल्ल० सुबह के फ़र्ज़ पढ़ रहे थे। उसने मस्जिद के एक कोने में दो रकअतें सुन्नत पढ़ी। फिर जमाअत में शामिल हो गया। जब आपने सलाम फेरा तो फ़रमाया : "तूने फ़र्ज़ नमाज़ किस को शुमार किया जो अकेले पढ़ी थी उसको या जो हमारे साथ जमाअत से पढ़ी है?"[4]

मालूम हुआ कि फ़र्ज़ होते समय सुन्नतों का पढ़ना सही नहीं है।

---

1. बुख़ारी, हदीस 626, 994, 1123, 1160, 1170, 6310 व मुस्लिम, हदीस 736।

2. मुस्लिम, हदीस 710।

3. दारे क़ुतनी 1/383-384, बैहेक़ी 2/283, इब्ने ख़ुज़ैमा 1116, इसे इब्ने हिबान (624) हाकिम (1/274-275) ने सहीह कहा है।

4. मुस्लिम, हदीस 712।

नमाज़ों की रकअतें :

(1) नमाज़े फ़ज्र : दो सुन्नतें, दो फ़र्ज़। (नमाज़े फ़ज्र चार रकअतें हुईं)

(2) नमाज़े ज़ोहर : चार सुन्नतें चार फ़र्ज़ दो सुन्नतें। (नमाज़े ज़ोहर दस रकअतें हुई)

(3) नमाज़े अस्र : चार फ़र्ज़।

(4) नमाज़े मग़रिब : तीन फ़र्ज़ दो सुन्नतें। (नमाज़े मग़रिब पांच रकअतें हुई)

(5) नमाज़े इशा : चार फ़र्ज़ और दो सुन्नतें। (नमाज़े इशा छः रकअतें हुई)

नमाज़े वित्र दरअस्ल रात की नमाज़ है जो तहज्जुद के साथ मिलाकर पढ़ी जाती है। जो लोग रात को उठने के आदी न हों वह वित्र भी नमाज़े इशा के साथ ही पढ़ सकते हैं। रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«مَنْ خَافَ أَنْ لَا يَقُومَ مِنْ آخِرِ اللَّيْلِ فَلْيُوتِرْ أَوَّلَهُ»

"जिसे ख़तरा हो कि रात के आख़िरी हिस्से में नहीं उठ सकेगा वह अव्वल शब ही वित्र पढ़ ले।"[1]

कोई साहब यह ख़्याल न करें कि हमने नमाज़ों की रकअतों को कम कर दिया है अर्थात फ़राइज़ और सुन्नतें गिन ली हैं और नफ़्ल छोड़ दिए हैं। मुसलमान भाइयों को मालूम होना चाहिए कि नवाफ़िल अपनी ख़ुशी और मर्ज़ी की इबादत है। रसूलुल्लाह सल्ल० ने किसी को पढ़ने के लिए मजबूर नहीं किया, इसलिए हमें कोई हक़ नहीं है कि हम अपने नफ़्लों को फ़र्ज़ों का ज़रूरी और लाज़मी हिस्सा बना डालें। फ़र्ज़ों के साथ आपकी नफ़्ल इबादत अर्थात सुन्नतें आ गई हैं जिनसे नमाज़ पूरी और मुकम्मल हो गई है।

1. मुस्लिम, हदीस 755।

तहज्जुद (क़यामुल्लैल) क़यामे रमज़ान और वित्र

श्रेष्ठता :

हज़रत अबू उमामा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«عَلَيْكُمْ بِقِيَامِ اللَّيْلِ فَإِنَّهُ دَأْبُ الصَّالِحِيْنَ قَبْلَكُمْ، وَهُوَ قُرْبَةٌ لَكُمْ إِلَى رَبِّكُمْ وَمَكْفَرَةٌ لِلسَّيِّئَاتِ وَمَنْهَاةٌ عَنِ الْإِثْمِ»

"तहज्जुद ज़रूर पढ़ा करो, क्योंकि वह तुमसे पहले भले लोगों की रविश है और तुम्हारे लिए अपने रब की समीपता का वसीला, गुनाहों के मिटाने का साधन (और अधिक) गुनाहों से बचने का सबब है।"[1]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "उस व्यक्ति पर अल्लाह की रहमत हो जो रात को उठा। फिर नमाज़ (तहज्जुद) पढ़ी और अपनी औरत को जगाया। फिर उसने (भी) नमाज़ पढ़ी। फिर अगर औरत (नींद की अधिकता के कारण) न जागी, तो उसके मुंह पर पानी के छींटे मारे। उस औरत पर अल्लाह की रहमत हो जो रात को उठी फिर नमाज़ (तहज्जुद) पढ़ी और अपने पति को जगाया। फिर उसने (भी) नमाज़ पढ़ी। फिर अगर पति (गहरी नींद के कारण न जागा) तो उसके मुंह पर पानी के छींटे मारे।"[2]

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते हैं मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० से सुना आप फ़रमाते हैं : "फ़र्ज़ नमाज़ के बाद सब नमाज़ों से श्रेष्ठ, तहज्जुद की नमाज़

---

1. इब्ने ख़ुज़ैमा, हदीस 1135। इसे हाफ़िज़ इराक़ी ने हसन जबकि इमाम हाकिम और इमाम ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

2. अबू दाऊद, हदीस 1308, 1450। इसे इमाम हाकिम (1/409) इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1148), इमाम इब्ने हिबान (मवारदुज़्ज़मान 6/307, 646) इमाम ज़ेहबी और इमाम नववी ने सहीह कहा है।

है।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब इंसान सोता है तो शैतान उसके सर की गुद्दी पर तीन गिरहें लगाता है और कहता है कि रात बड़ी लम्बी है अगर वह बेदार होकर अल्लाह का ज़िक्र करे तो एक गिरह खुल जाती है। और अगर वुज़ू करे तो दूसरी गिरह खुल जाती है और अगर नमाज़ पढ़े तो तीसरी गिरह खुल जाती है। और वह शादमां और पाक नफ़्स होकर सुबह करता है, वरना उसकी सुबह ख़बीस और सुस्त नफ़्स के साथ होती है।"[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अल्लाह तआला हर रात आसमाने दुनिया पर नुज़ूल फ़रमाता है। जब एक तिहाई रात बाक़ी रह जाती है तो फ़रमाता है : "कोई है जो मुझे पुकारे, मैं उसकी दुआ क़ुबूल करूं। कोई है जो मुझसे मांगे, मैं उसको दूं। कोई है जो मुझसे बख़्शिश तलब करे, मैं उसको बख़्श दूं।"[3]

नबी रहमत सल्ल० का तहज्जुद का शौक़ :

हज़रत मुगीरा रज़ि० फ़रमाते हैं : रसूलुल्लाह सल्ल० ने रात को तहज्जुद में इतना लम्बा क़याम किया कि आपके पांव सूज गए। आपसे सवाल हुआ : आप इतनी मेहनत क्यों करते हैं जबकि आप माफ़ किए गए हैं? आपने फ़रमाया : "क्या फिर (जब अल्लाह तआला ने मुझे नुबुव्वत के इनाम, मग़फ़िरत की दौलत और बेशुमार नेमतों से नवाज़ा है) मैं अल्लाह का शुक्रगुज़ार बन्दा न बनूं?"[4]

नींद से जागते समय पढ़ें :

हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० जब रात को (बिस्तर से तहज्जुद के लिए) उठते तो (यह) पढ़ते :

"अल्लाहु अकबर" दस बार, "अलहम्दुलिल्लाह" दस बार, "सुब्हानल्लाहि वबिहमदिही" दस बार, "सुब्हानल मलिकिल क़ुद्दूस" दस बार, "अस्तग़फ़िरुल्लाह"

---

1. मुस्लिम, हदीस 1163।
2. बुख़ारी, हदीस 1142, 3269, मुस्लिम, हदीस 776।
3. बुख़ारी, हदीस 1145, मुस्लिम, हदीस 758।
4. बुख़ारी, हदीस 1130, 4836, 6471 व मुस्लिम, हदीस 2819।

दस बार, "ला इला-ह इल्लल्लाहु" दस बार, और फिर "अल्लाहुम-म अऊज़ुबि-क मिन ज़ीक़िद दुन्या व ज़ीक़ि यौमल क़ियामति" दस बार।[1] फिर कहते "अल्लाहुम मग़फ़िरली वहदिनी वरज़ुक़नी व आफ़िनी" फिर (वुज़ू आदि करके) तहज्जुद शुरू करते।[2]

(अनुवाद) : "अल्लाह सबसे बड़ा है, सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है, अल्लाह अपनी प्रशंसा समेत (हर बुराई से) पाक है, मैं, बड़े ही पाकीज़ा बादशाह की पाकी बयान करता हूं, मैं अल्लाह से बख़्शिश तलब करता हूं, अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं है। ऐ अल्लाह! मैं दुनिया व आख़िरत की तंगियों से तेरी पनाह मांगता हूं। ऐ अल्लाह! मुझे माफ़ फ़रमा, मुझे हिदायत प्रदान कर, मुझे आजीविका दे और आफ़ियत से नवाज़।"

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति रात को नींद से जागे और कहे :

«لاَ إِلٰـهَ إِلاَّ اللهُ وَحْـدَهُ لاَ شَرِيـكَ لَهُ، لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْـحَمْدُ، وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ، اَلْـحَمْدُ لِلّٰهِ وَسُبْحَانَ اللهِ، وَاللهُ أَكْبَرُ، وَلاَ حَوْلَ وَلاَ قُوَّةَ إِلاَّ بِاللهِ»

"अल्लाह के सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं है, वह एक है उसका कोई शरीक नहीं, उसी के लिए सारी बादशाही और उसी के लिए सारी प्रशंसा है और वह हर चीज़ पर ख़ूब क़ुदरत रखने वाला है। सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है, अल्लाह (हर बुराई से) पाक है, अल्लाह सबसे बड़ा है, बुराई से बचने और नेकी करने की कोई ताक़त नहीं है मगर अल्लाह के सौभाग्य से" फिर कहे : "अल्लाहुम मग़फ़िरली" (ऐ अल्लाह! मुझे बख़्श दे") या कोई और दुआ करे तो क़ुबूल होगी। और अगर वुज़ू करके नमाज़ पढ़े तो (वह भी) क़ुबूल की जाएगी।"[3]

रसूलुल्लाह सल्ल० तहज्जुद के लिए उठते, तो आपने बैठने के बाद

---

1. अबू दाऊद, हदीस 5085।
2. अबू दाऊद, हदीस 766, इसे इमाम इब्ने हिबान (हदीस 649) ने सहीह कहा है।
3. बुख़ारी, हदीस 1154।

आसमान की तरफ़ नज़र करके सूरह आले इमरान की आख़िरी ग्यारह आयात (190-200) पढ़ीं।[1]

﴿ إِنَّ فِي خَلْقِ السَّمَٰوَٰتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَٰفِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ لَأَيَٰتٍ لِّأُولِي
الْأَلْبَٰبِ ﴿١٩٠﴾ الَّذِينَ يَذْكُرُونَ اللَّهَ قِيَٰمًا وَقُعُودًا وَعَلَىٰ جُنُوبِهِمْ وَيَتَفَكَّرُونَ فِي
خَلْقِ السَّمَٰوَٰتِ وَالْأَرْضِ رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هَٰذَا بَٰطِلًا سُبْحَٰنَكَ فَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ﴿١٩١﴾ رَبَّنَا
إِنَّكَ مَن تُدْخِلِ النَّارَ فَقَدْ أَخْزَيْتَهُ وَمَا لِلظَّٰلِمِينَ مِنْ أَنصَارٍ ﴿١٩٢﴾ رَّبَّنَا إِنَّنَا سَمِعْنَا
مُنَادِيًا يُنَادِي لِلْإِيمَٰنِ أَنْ ءَامِنُوا بِرَبِّكُمْ فَـَٔامَنَّا رَبَّنَا فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوبَنَا وَكَفِّرْ عَنَّا
سَيِّـَٔاتِنَا وَتَوَفَّنَا مَعَ الْأَبْرَارِ ﴿١٩٣﴾ رَبَّنَا وَءَاتِنَا مَا وَعَدتَّنَا عَلَىٰ رُسُلِكَ وَلَا تُخْزِنَا يَوْمَ
الْقِيَٰمَةِ إِنَّكَ لَا تُخْلِفُ الْمِيعَادَ ﴿١٩٤﴾ فَاسْتَجَابَ لَهُمْ رَبُّهُمْ أَنِّي لَا أُضِيعُ عَمَلَ عَٰمِلٍ
مِّنكُم مِّن ذَكَرٍ أَوْ أُنثَىٰ بَعْضُكُم مِّن بَعْضٍ فَالَّذِينَ هَاجَرُوا وَأُخْرِجُوا مِن دِيَٰرِهِمْ وَأُوذُوا
فِي سَبِيلِي وَقَٰتَلُوا وَقُتِلُوا لَأُكَفِّرَنَّ عَنْهُمْ سَيِّـَٔاتِهِمْ وَلَأُدْخِلَنَّهُمْ جَنَّٰتٍ تَجْرِي مِن
تَحْتِهَا الْأَنْهَٰرُ ثَوَابًا مِّنْ عِندِ اللَّهِ وَاللَّهُ عِندَهُ حُسْنُ الثَّوَابِ ﴿١٩٥﴾ لَا يَغُرَّنَّكَ تَقَلُّبُ
الَّذِينَ كَفَرُوا فِي الْبِلَٰدِ ﴿١٩٦﴾ مَتَٰعٌ قَلِيلٌ ثُمَّ مَأْوَىٰهُمْ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿١٩٧﴾ لَٰكِنِ
الَّذِينَ اتَّقَوْا رَبَّهُمْ لَهُمْ جَنَّٰتٌ تَجْرِي مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَٰرُ خَٰلِدِينَ فِيهَا نُزُلًا مِّنْ عِندِ
اللَّهِ وَمَا عِندَ اللَّهِ خَيْرٌ لِّلْأَبْرَارِ ﴿١٩٨﴾ وَإِنَّ مِنْ أَهْلِ الْكِتَٰبِ لَمَن يُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَمَا
أُنزِلَ إِلَيْكُمْ وَمَا أُنزِلَ إِلَيْهِمْ خَٰشِعِينَ لِلَّهِ لَا يَشْتَرُونَ بِـَٔايَٰتِ اللَّهِ ثَمَنًا قَلِيلًا
أُولَٰٓئِكَ لَهُمْ أَجْرُهُمْ عِندَ رَبِّهِمْ إِنَّ اللَّهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿١٩٩﴾ يَٰٓأَيُّهَا
الَّذِينَ ءَامَنُوا اصْبِرُوا وَصَابِرُوا وَرَابِطُوا وَاتَّقُوا اللَّهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴾

(آل عمران ٣/ ١٩٠-٢٠٠)

"ज़मीन और आसमानों की पैदाइश में, रात और दिन के बारी बारी आने में, निश्चय ही अक़्लमंद लोगों के लिए बहुत निशानियां हैं (190) जो उठते, बैठते और लेटते हर हाल में अल्लाह को याद करते हैं और ज़मीन और आसमानों की बनावट में सोच विचार करते हैं (फिर आपसे आप पुकार उठते

---

1. सहीह बुख़ारी, तफ़्सीर, अध्याय 17 व 18, हदीस 4569-4570 व मुस्लिम, हदीस 763 की उप हदीस नम्बर 191। मुस्लिम की रिवायत में मिस्वाक और वुज़ू के बाद इन आयात के पढ़ने का ज़िक्र है, इससे मालूम हुआ कि दोनों तरह जाइज़ है मिस्वाक और वुज़ू करने से पहले भी और बाद में भी।

हैं :) "ऐ हमारे परवरदिगार! यह सब कुछ तूने, व्यर्थ और बेमक़्सद नहीं बनाया है तू (इस बुराई से) पाक है तो ऐ हमारे रब हमें आग के अज़ाब से बचा (191) तूने जिसे आग में डाला उसे वास्तव में बड़ी ज़िल्लत व रुसवाई में डाल दिया और ऐसे ज़ालिमों का कोई मददगार नहीं होगा (192) ऐ हमारे मालिक! हमने एक पुकारने वाले को सुना जो ईमान की तरफ़ बुलाता था (और कहता था) "अपने रब पर ईमान लाओ" तो हम ईमान ले आए, तो ऐ हमारे ख़ालिक़! हमारे गुनाह माफ़ कर और हमारी बुराइयां हमसे दूर कर दे और हमारा ख़ात्मा नेक लोगों के साथ कर (193) ऐ हमारे राज़िक़! जो वायदा तूने अपने रसूलों के ज़रिए हमसे किए हैं उन्हें हमारे साथ पूरा फ़रमा और क़ियामत के दिन हमें रुसवाई में न डाल निःसन्देह तू वादा ख़िलाफ़ी करने वाला नहीं है" (194) फिर उनके रब ने उनकी दुआ क़ुबूल कर ली (और फ़रमाया) मैं तुममें से किसी का अमल नष्ट नहीं करूंगा चाहे मर्द हो या औरत, तुम सब एक दूसरे के हम जिन्स हो अतः जिन लोगों ने (मेरी ख़ातिर) हिजरत की, अपने घरों से निकाले गए, मेरी राह में सताए गए और (मेरे लिए) लड़े और मारे गए मैं उनके सब क़ुसूर माफ़ कर दूंगा और उन्हें ऐसे बाग़ों में दाख़िल करूंगा जिनके नीचे नहरें बहती हैं यह अल्लाह के यहां उनका बदला है और बेहतरीन बदला अल्लाह ही के पास है। (195) ऐ नबी सल्ल० (दुनिया के) मुल्कों में काफ़िर लोगों का (ऐश व इशरत से) चलना फिरना तुम्हें किसी धोखे में न डाले (196) यह थोड़ा सा फ़ायदा है फिर उनका ठिकाना जहन्नम है और वह बुरी जगह है (197) लेकिन जो लोग अपने रब से डरते रहे उनके लिए बाग़ात हैं जिनके नीचे नहरें बहती हैं उनमें वे हमेशा रहेंगे यह अल्लाह की तरफ़ से मेहमानी है और जो कुछ अल्लाह के पास है नेक लोगों के लिए वही सबसे बेहतर है (198) और अहले किताब में से कुछ लोग ऐसे भी हैं जो अल्लाह पर ईमान रखते हैं और उस किताब को भी मानते हैं जो तुम्हारी तरफ़ उतारी गई है और उस किताब को भी जो (इससे पहले ख़ुद) उनकी तरफ़ उतारी गई थी, वे अल्लाह से डरने वाले हैं और अल्लाह की आयात को थोड़ी सी क़ीमत पर बेच नहीं देते, यही हैं वे लोग जिनका अज्र उनके रब के पास (महफ़ूज़) है। निश्चय ही अल्लाह तआला जल्द हिसाब लेने वाला है (199) ऐ ईमान वालो! सब्र से काम लो, आपस में सब्र की नसीहत करो और जिहाद के लिए तैयार रहो और अल्लाह से डरो ताकि तुम कामयाब हो जाओ।" (200)

तहज्जुद की दुआएं :

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० रिवायत करते हैं कि जब रसूलुल्लाह सल्ल० रात को तहज्जुद के लिए खड़े होते तो (तकबीरे तहरीमा के बाद यह) पढ़ते :[1]

«اَللّٰهُمَّ لَكَ الْحَمْدُ أَنْتَ قَيِّمُ السَّمٰوَاتِ وَالْأَرْضِ وَمَنْ فِيْهِنَّ، وَلَكَ الْحَمْدُ لَكَ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْأَرْضِ وَمَنْ فِيْهِنَّ وَلَكَ الْحَمْدُ أَنْتَ نُوْرُ السَّمٰوَاتِ وَالْأَرْضِ وَلَكَ الْحَمْدُ أَنْتَ مَلِكُ السَّمٰوَاتِ وَالْأَرْضِ وَلَكَ الْحَمْدُ أَنْتَ الْحَقُّ، وَوَعْدُكَ الْحَقُّ، وَلِقَاؤُكَ حَقٌّ، وَقَوْلُكَ حَقٌّ، وَالْجَنَّةُ حَقٌّ، وَالنَّارُ حَقٌّ، وَالنَّبِيُّوْنَ حَقٌّ، وَمُحَمَّدٌ حَقٌّ، وَالسَّاعَةُ حَقٌّ، اَللّٰهُمَّ لَكَ أَسْلَمْتُ وَبِكَ آمَنْتُ وَعَلَيْكَ تَوَكَّلْتُ وَإِلَيْكَ أَنَبْتُ وَبِكَ خَاصَمْتُ وَإِلَيْكَ حَاكَمْتُ فَاغْفِرْلِيْ مَا قَدَّمْتُ وَمَا أَخَّرْتُ وَمَا أَسْرَرْتُ وَمَا أَعْلَنْتُ أَنْتَ الْمُقَدِّمُ وَأَنْتَ الْمُؤَخِّرُ، لَا إِلٰهَ إِلَّا أَنْتَ»

"इलाही! तेरे ही लिए सारी प्रशंसा है। ज़मीन व आसमान और जो कुछ उनमें है, (सबको) तू ही क़ायम रखने वाला है। तेरे ही लिए सारी प्रशंसा है। ज़मीन व आसमान और जो कुछ उनमें है, (उस सब) की बादशाही तेरे लिए है। तेरे ही लिए सारी प्रशंसा है। तू ही रोशन करने वाला है ज़मीन व आसमान को। तेरे ही लिए सारी प्रशंसा है। तू ही बादशाह है ज़मीन व आसमान का। तेरे ही लिए सारी प्रशंसा है। तू हक़ है, और (दुनिया व आख़िरत के बारे में) तेरा वायदा हक़ है। (आख़िरत में) तेरी मुलाक़ात हक़ है। तेरा कलाम हक़ है। इलाही! मैं तेरे सामने झुक गया, मैं केवल तेरे साथ ईमान लाया, मैंने केवल तुझी पर भरोसा किया, मैंने केवल तेरी तरफ़ रुजूअ किया। केवल तेरी ही मदद से (दुश्मनों से) झगड़ता हूं। मैंने केवल तुझे ही अपना शासक माना, तो तू, मेरे अगले पिछले और खुले व छुपे और जिन्हें तू मुझसे ज़्यादा जानता है (सारे के सारे) गुनाह माफ़ कर दे। तू ही आगे करने वाला और पीछे डालने वाला है। तेरे सिवा कोई (सच्चा) उपास्य नहीं है।

---

1. बुख़ारी, हदीस 1120 व मुस्लिम, हदीस 769।

रसूलुल्लाह सल्ल० की तहज्जुद की हालत :

रसूलुल्लाह सल्ल० की नमाज़े तहज्जुद का हुस्न और विस्तार बयान नहीं हो सकता।[1] हज़रत अबूज़र रज़ि० कहते हैं, रसूलुल्लाह सल्ल० ने तहज्जुद में (इतना) क़याम किया कि इस एक आयत को (विनय व विनम्रता से बार बार) पढ़ते सुबह कर दी :

﴿ إِن تُعَذِّبْهُمْ فَإِنَّهُمْ عِبَادُكَ وَإِن تَغْفِرْ لَهُمْ فَإِنَّكَ أَنتَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴾ (المائدة/١١٨)

"अगर तू इन्हें अज़ाब दे तो वे तेरे बन्दे हैं और अगर उन्हें माफ़ कर दे तो निश्चय ही तू ग़ालिब (और) हिक्मत वाला है।"[2] (अल-माइदा 5 : 118)

हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि० ने नबी सल्ल० को तहज्जुद पढ़ते देखा। वह कहते हैं सूरह फ़ातिहा के बाद आपने सूरह बक़रा पढ़ी। फिर रुकूअ किया। आपका रुकूअ आपके क़याम की तरह था। (अर्थात क़याम की तरह रुकूअ भी काफ़ी लम्बा किया)। फिर आपने रुकूअ से सर उठाया। आपका क़ौमा आपके रुकूअ की तरह था। (अर्थात रुकूअ की तरह क़ौमा भी काफ़ी लम्बा किया) आपका सज्दा आपके क़ौमे की तरह था। (अर्थात क़ौमे की तरह सज्दा भी काफ़ी लम्बा किया)। आप दोनों सज्दों के बीच (जल्से में) अपने सज्दे की तरह बैठे थे। (अर्थात सज्दे की तरह जल्से में भी देर लगाई और ख़ूब इत्मीनान किया) तो आपने चार रकअतों में सूरह बक़रा, सूरह आले इमरान, सूरह निसा और सूरह माइदा पढ़ीं।[3]

सुब्हानल्लाह! यह थी नबी रहमत सल्ल० की नमाज़े तहज्जुद। केवल चार रकआत में सवा सात पारे पढ़े। फिर रुकूअ, क़ौमे, सज्दे और जल्से की दराज़ी और उनमें तस्बीहों और दुआओं को अधिकता से पढ़ना आप पर ख़त्म था।

हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि० बयान करते हैं कि मैं एक रात नबी सल्ल० के

---

1. बुख़ारी, हदीस 1147।

2. नसाई, 2/177 (हदीस 1009) इसे हाकिम 1/241 और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. अबू दाऊद, हदीस 874। इसकी एक सनद को इमाम हाकिम ने सहीह कहा है।

साथ नफ़्ली नमाज़ में शरीक हुआ। आपने सूरह बक़रा शुरू की। मैंने सोचा कि आप सौ आयात पढ़कर रुकूअ में जाएंगे, मगर आप पढ़ते चले गए। मैंने ख़्याल किया कि सूरह बक़रा को दो रकअतों में तक़्सीम करेंगे लेकिन आप पढ़ते रहे। आपने सूरह बक़रा ख़त्म करके सूरह निसा शुरू कर ली, फिर उसे ख़त्म करके सूरह आले इमरान को पढ़ना शुरू कर दिया उसको भी ख़त्म कर डाला। आप बड़ी आहिस्तगी से पढ़ते जाते थे। जब ऐसी आयत की तिलावत करते जिसमें सुब्हानल्लाह कहने का हुक्म होता, तो सुब्हानल्लाह कहते। अगर कुछ मांगने का ज़िक्र होता तो सवाल करते, अगर पनाह मांगने का ज़िक्र होता तो (अऊज़ु बिल्लाहि) पढ़ते। आले इमरान ख़त्म करके आप सल्ल० ने रुकूअ किया।[1]

इस हदीस से मालूम हुआ कि तिलावत क़ुरआन में तर्तीब का ख़्याल रखना ज़रूरी नहीं क्योंकि आप सल्ल० ने आले इमरान की तिलावत "निसा" के बाद की यद्यपि "आले इमरान" क्रम में "निसा" से पहले है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से कहा : "मुझे बतलाया गया है कि तुम सारी रात नफ़्लें पढ़ते हो और दिन को रोज़ा रखते हो। अगर तुम ऐसा करोगे तो तुम्हारी आंख कमज़ोर और तबीअत सुस्त हो जाएगी। तुम्हारी जान और तुम्हारे बाल बच्चों को भी तुम पर हक़ है इसलिए रोज़ा रखो और इफ़्तार भी करो। रात को क़याम करो और नींद भी लो।[2]

नबी सल्ल० तीन दिन से कम में क़ुरआन मजीद ख़त्म करना पसन्द नहीं फ़रमाते थे। आपने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अमर रज़ि० से फ़रमाया : "एक माह में क़ुरआन पाक ख़त्म कर लिया करो।" उन्होंने अर्ज़ किया मैं उससे ज़्यादा तिलावत करने की ताक़त रखता हूं। आपने फ़रमाया : "तो बीस दिन में ख़त्म कर लिया करो।" उन्होंने कहा, मैं इससे ज़्यादा ताक़त रखता हूं। आप सल्ल० ने फ़रमाया : "सात दिन में ख़त्म कर लिया करो। इससे ज़्यादा की इजाज़त नहीं।"[3]

---

1. मुस्लिम, हदीस 772।

2. बुख़ारी, तहज्जुद, अध्याय 20, हदीस 1153, 1974-1975। इससे मालूम हुआ कि किसी उम्मती का सारी रात इबादत में गुज़ारना सही नहीं है।

3. बुख़ारी, सोम, अध्याय सोम यौम व इफ़्तार यौम, हदीस 1978 व फ़ज़ाइले क़ुरआन, (हदीस : 5054) व मुस्लिम, हदीस 1159।

फिर आप सल्ल० ने उन्हें क़ुरआन पाक तीन दिन में ख़त्म करने की इजाज़त दे दी और फ़रमाया : "क़ुरआन पाक से उस व्यक्ति को कुछ समझ हासिल नहीं हो सकती जो तीन दिन से कम मुद्दत में क़ुरआन पाक ख़त्म करता है।"[1]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति रात के नवाफ़िल में दो सौ आयात तिलावत करते हैं वह आज्ञा पालक निष्ठावान लोगों में शुमार होता है।"[2]

नबी सल्ल० सारी रात नवाफ़िल नहीं पढ़ते थे।[3]

हज़रत ख़ब्बाब बिन अरत रज़ि० जो बद्री सहाबी हैं एक रात नबी सल्ल० के साथ थे। फ़रमाते हैं कि आप तमाम रात बेदार रहे[4] और नवाफ़िल

---

1. तिर्मिज़ी, क़िरअत, अध्याय 11, हदीस 2954, व सुन्नत अबी दाऊद, अबवाबुल क़ुरआन, हदीस 1390, सुनन दारमी, सलात, हदीस 1496। इमाम तिर्मिज़ी ने इसे सहीह कहा है।

2. सुनन दारमी, हदीस 3451। इसे इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, अध्याय जामेअ सलातुल्लैल, हदीस 746।

4. यह नसाई के शब्द हैं। फिर भी तमाम रात से मुराद, रात का बड़ा हिस्सा है, क्योंकि दूसरी रिवायात में आप सल्ल० के सारी रात जागने का इन्कार आया है। अतएव यही रिवायत तिर्मिज़ी में है, उसमें शब्द हैं (फ़ अता-ल-हा) "आपने लम्बी नमाज़ पढ़ी।" क़ुरआन मजीद ने भी आपको सारी रात नहीं बल्कि रात को कुछ हिस्सा क़याम करने का हुक्म दिया है देखिए (बनी इस्राईल : 17/79, मुज़्ज़म्मिल : 73/1-4, 20) अगर मान भी लिया जाए कि आपने किसी समय सारी रात क़याम किया था तो यह बात आपके गुणों में शुमार होगी वरना हक़ीक़त वही है जो हज़रत आइशा रज़ि० ने बता दी है, वह फ़रमाती हैं : "मैं नहीं जानती कि अल्लाह के नबी सल्ल० ने कभी एक रात में सारा क़ुरआन पढ़ा हो या सुबह तक सारी रात नमाज़ पढ़ी हो" रावी कहता है कि मैं अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० के पास गया और उन्हें हज़रत आइशा रज़ि० की हदीस सुनाई तो उन्होंने इसकी तस्दीक़ की (सहीह मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, अध्याय जामेअ सलातुल्लैल, हदीस 746) इसके अलावा जब आप सल्ल० ने एक ऐसी औरत देखी जो सारी रात सोने की बजाए नमाज़ पढ़ती थी तो आपने उसे डांटते हुए फ़रमाया : "बाज़ आ जाओ! इतना ही अमल करो जिस पर (हमेशगी करने की) तुम्हें ताक़त हो, अल्लाह

शेष अगले पृष्ठ पर

अदा करते रहे यहां तक कि सुबह सादिक़ हो गई। जब आपने नमाज़ से सलाम फेरा तो हज़रत ख़ब्बाब रज़ि० ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मेरे मां बाप आप पर क़ुरबान, आज रात जिस तरह आपने नवाफ़िल पढ़े उससे पहले मैंने कभी आपको इस तरह नमाज़ अदा करते नहीं देखा, आपने फ़रमाया : "तुमने ठीक कहा। नमाज़ ऐसी इबादत है जिसमें अल्लाह के साथ संबंध बढ़ाया जाता है और उसके अज़ाब से पनाह मांगी जाती है, अतएव मैंने अल्लाह तआला से तीन सवाल किए जिनमें से दो क़ुबूल हुए। एक सवाल यह कि अल्लाह मेरी उम्मत को पिछली उम्मतों की तरह तबाह व बर्बाद न करे इसको अल्लाह ने क़ुबूल फ़रमाया। दूसरा सवाल यह कि मेरी (सारी) उम्मत पर (एक साथ) दुश्मनों को ग़लबा हासिल न हो, यह भी क़ुबूल कर लिया गया। फिर मैंने सवाल किया कि उम्मते मुहम्मदिया में मतभेद पैदा न हो, लेकिन इसे क़ुबूल नहीं किया गया।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० रात के नवाफ़िल में कभी सिर्री (आहिस्ता) और कभी जहरी (बुलन्द आवाज़ से) क़िरअत फ़रमाते।[2]

जब आप घर में नवाफ़िल अदा करते तो हुजरे में आपकी क़िरअत सुनाई देती थी।[3]

(अज्र देते हुए) नहीं उक्ताता, तुम ही उक्ता जाओगे।" (बुख़ारी, तहज्जुद, अध्याय मा यकरा मिन तशदीद फ़िल इबादत, हदीस 1151)

इन स्पष्टता से मालूम हुआ कि कुछ मस्जिदों में (शबीना) के नाम से सारी रात जो सामूहिक क़याम किया जाता है और उसमें सारा क़ुरआन पढ़ा जाता है यह अल्लाह के यहां बिल्कुल पसन्दीदा कार्य नहीं है। अगर विभिन्न क़ारी भी बारी बारी इमामत कराएं फिर भी एक रात में क़ुरआन ख़त्म करने की वजह से क़िरअत में जो तेज़ी पैदा होती है वह शरअन आदाबे तिलावत के ख़िलाफ़ है। फिर यह ऐसा काम है जिसका अल्लाह और उसके रसूल सल्ल० ने हुक्म दिया है न प्रेरणा बल्कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने इससे मना फ़रमाया है। अल्लाह तआला हम सबको हिदायत प्रदान करे। (आमीन)

2. नसाई, क़यामुल्लैल, अध्याय अहयाउल्लैल, 3/216-217, हदीस 1637 व तिर्मिज़ी, फ़ितन, हदीस 2180, इब्ने हिबान (हदीस 1830) इमाम तिर्मिज़ी ने इसे हसन ग़रीब सहीह कहा है।

3. तिर्मिज़ी, सलात, हदीस 449, इब्ने माजा, इक़ामस्सलात, हदीस 1354।

4. अबू दाऊद, अबवाब क़यामुल्लैल, हदीस 1327। इसकी सनद हसन है।

आप सल्ल० एक रात बाहर निकले तो आपने देखा कि हज़रत अबूबक्र रज़ि० धीमी क़िरअत से नवाफ़िल पढ़ रहे थे और हज़रत उमर रज़ि० नवाफ़िल में ऊंची आवाज़ से क़िरअत कर रहे हैं। जब वे दोनों रसूलुल्लाह सल्ल० की ख़िदमत में हाज़िर हुए तो आपने अबूबक्र रज़ि० से फ़रमाया : "ऐ अबूबक्र रात मैं तेरे पास से गुज़रा, तू धीमी आवाज़ से नवाफ़िल पढ़ रहा था?" उन्होंने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! जिस (अल्लाह) से मैं सरगोशी कर रहा था उस तक मेरी आवाज़ पहुंच रही थी। फिर आपने उमर रज़ि० से कहा कि : "रात मेरा तेरे पास से गुज़र हुआ, तू ऊंची आवाज़ के साथ नफ़्ल पढ़ रहा था।" तो उन्होंने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मैं सोए हुओं को बेदार करना चाहता था (कि वे भी तहज्जुद पढ़ें) और शैतान को भगाने का इरादा रखता था। इस पर आपने अबूबक्र को ज़रा ऊंची आवाज़ से और उमर को ज़रा नीची आवाज़ से पढ़ने का हुक्म दिया।[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० की रात की नमाज़ :

हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० नबी अकरम सल्ल० की नमाज़े शब का हाल बयान फ़रमाती हैं : "रमज़ान होता या ग़ैर रमज़ान, रसूलुल्लाह सल्ल० (रात की नमाज़ आम तौर पर) ग्यारह रकअत से ज़्यादा नहीं पढ़ते थे। (पहले) आप चार रकअत पढ़ते तो उनकी ख़ूबी और दराज़ी न पूछो फिर आप चार रकअत, पढ़ते तो उनकी ख़ूबी और दराज़ी (भी) कुछ न पूछो। फिर (आख़िर में) आप तीन रकअत (वित्र) पढ़ते।[2]

रात की नमाज़ का तरीक़ा :

रसूलुल्लाह सल्ल० का सामान्य वित्र पढ़ने का तरीक़ा, हज़रत आइशा रज़ि० यूं बयान फ़रमाती हैं कि : "नबी सल्ल० नमाज़े इशा से फ़ज्र तक ग्यारह रकअतें पढ़ते। हर दो रकअतों पर सलाम फेरते और एक रकअत वित्र पढ़ते।"[3]

---

1. अबू दाऊद, अबवाब क़यामुल्लैल, हदीस 1329। इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा, इमाम इब्ने हिबान, इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

2. सहीह बुख़ारी, तहज्जुद, हदीस 1147, 2013, 3569 व मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 738।

3. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 736।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने हमें भी यही तालीम दी अतएव हज़रत इब्ने उमर रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "रात की नमाज़ दो, दो रकअतें हैं, जब सुबह (सादिक़) होने का ख़तरा हो तो एक रकअत पढ़ लो, यह (एक रकअत, पहली सारी) नमाज़ को ताक़ बना देगी।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि : "वित्र, आख़िर रात में एक रकअत है।"[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम रात को नवाफ़िल पढ़ना शुरू करो तो पहले दो हल्की रकअतें अदा करो।"[3]

आपने रात का क़याम किया पहले दो हल्की रकअतें पढ़ीं, फिर दो लम्बी पढ़ीं फिर उनसे हल्की, दो लम्बी रकअतें पढ़ीं, फिर उनसे हल्की दो लम्बी रकअतें फिर उनसे हल्की दो लम्बी रकअतें फिर उनसे हल्की दो लम्बी रकअतें फिर एक रकअत वित्र पढ़ा। यह तेरह रकअतें हुईं। (आपकी हर दो रकअतें पहले वाली दो रकअतों से धीमी होती थीं।)[4]

हज़रत आइशा रज़ि० रिवायत करती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० एक रकअत वित्र पढ़ते। (आख़िरी) दो रकअतों और एक रकअत के बीच (सलाम फेरकर) बातचीत भी करते।[5]

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० वित्र की दो और एक रकअत में सलाम से फ़स्ल करते।[6]

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० से कहा गया कि अमीरुल मोमिनीन हज़रत

---

1. बुख़ारी, वित्र, हदीस 990, 993 व मुस्लिम, सलातुल्लैल, हदीस 749। इस हदीस का स्पष्टीकरण आगे आ रहा है।

2. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, अध्याय सलातुल्लैल, हदीस 752।

3. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, अध्याय दुआ फ़ी सलातुल्लैल व क़ियामह, हदीस 768।

4. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हवाला साबिक़ा, हदीस 765।

5. इब्ने अबी शैबा, 2/291, व इब्ने माजा, हदीस 1177, इमाम बूसीरी ने इसे सहीह कहा है।

6. इब्ने हिबान, हदीस 678। हाफ़िज़ इब्ने हजर ने इसे क़वी कहा है। अर्थात तीन वित्र भी इस तरह पढ़ते कि दो रकआत पढ़कर सलाम फेरते और फिर उठकर तीसरी रकअत अलग पढ़ते।

मुआविया रज़ि० ने एक ही वित्र पढ़ा है। हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० ने फ़रमाया कि (उन्होंने सही काम किया) वह फ़क़ीह और सहाबी हैं।[1]

इमाम मरोज़ी रह० फ़रमाते हैं कि फ़स्ल (वित्र की दो रकअतों के बाद सलाम फेरकर एक रकअत अलग पढ़ने) वाली अहादीस ज़्यादा साबित हैं।

हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० रात को कभी सात, कभी नौ और कभी ग्यारह रकअतें पढ़ते थे।[2]

इस तफ़्सील से मालूम हुआ कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने क़यामुल्लैल सात रकआत से तेरह रकआत तक फ़रमाया है।

पांच, तीन और एक वित्र :

हज़रत अबू अय्यूब रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "वित्र हर मुसलमान पर हक़ है। तो जो व्यक्ति पांच रकआत वित्र पढ़ना चाहे तो (पांच) रकआत पढ़े और जो तीन रकआत वित्र पढ़ना चाहे तो (तीन रकआत) पढ़े और जो कोई एक रकअत वित्र पढ़ना चाहे तो (एक) रकअत (वित्र) पढ़े।"[3]

रसूलुल्लाह सल्ल० रात को (कुल) तेरह रकआत पढ़ते और उनमें पांच रकआत वित्र पढ़ते थे (और उन पांच वित्रों में) किसी रकअत में (तशह्हुद के लिए) न बैठते मगर आख़िर में।[4]

मालूम हुआ कि वित्रों की पांचों रकअतों के बीच तशह्हुद के लिए कहीं नहीं बैठना चाहिए। बल्कि पांचों रकअतें पढ़कर क़ाअदा में अत्तहिय्यात दुरूद और दुआ पढ़कर सलाम फेर देना चाहिए।

---

1. बुख़ारी, फ़ज़ाइल अस्हाबुन्नबी सल्ल०, अध्याय ज़िक्र मुआविया रज़ि०, हदीस 3764-3765।

2. बुख़ारी, तहज्जुद, अध्याय कैफ़ सलातुन्नबी सल्ल०, हदीस 1139।

3. अबू दाऊद, अबवाबुल वित्र, हदीस 1422, नसाई 3/238-239, इब्ने माजा, इक़ामुस्सलात, हदीस 1190, इमाम हाकिम (1/302-303) ज़ेहबी और इब्ने हिबान (हदीस 670) ने इसे सहीह कहा है।

4. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 737। अर्थात इन्ही तेरह रकआत में पांच रकआत वित्र भी शामिल होते।

तीन वित्रों की क़िरअत :

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० पहली रकअत वित्र में (सब्बिहिस-म रब्बिकल आला) दूसरी में (क़ुल या अय्युहल काफ़िरून) और तीसरी में (क़ुल हुवल्लाहु अहद) पढ़ते थे।[1]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "एक रात में दो बार वित्र पढ़ना जाइज़ नहीं।"[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "तीन वित्र न पढ़ो पांच या सात वित्र पढ़ो और मग़रिब की समानता न करो।"[3] मालूम हुआ कि वित्र में नमाज़ मग़रिब की समानता नहीं होनी चाहिए।[4]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "रात को अपनी आख़िरी नमाज़ वित्र को बनाओ।"[5]

और फ़रमाया : "वित्र आख़िर रात में एक रकअत है।"[6]

---

1. बैहेक़ी (3/37), हाकिम (1/35, 2/520), ज़ेहबी और इब्ने हिबान (हदीस 675) ने इसे सहीह कहा है।

2. अबू दाऊद, अबवाबुल वित्र, हदीस 1439, इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1101) और इमाम इब्ने हिबान (हदीस 671) ने सहीह और हाफ़िज़ इब्ने हजर ने हसन कहा है।

3. दारे क़ुतनी, 2/25, 27, हाकिम, ज़ेहबी और इब्ने हिबान (हदीस 680) ने इसे सहीह कहा है।

4. मानो तीन वित्र पढ़ने हों तो एक तशह्हुद और एक सलाम के साथ या फिर दो तशह्हुद और दो सलाम के साथ पढ़े जाएं। इन दोनों तरीक़ों में मग़रिब की नमाज़ से मुशाबिहत नहीं होती।

5. मुस्लिम, अध्याय सलातुल्लैल, हदीस 751। यह हुक्म इस्तहबाब के तौर पर है अर्थात तहज्जुद गुज़ार के लिए बेहतर है कि वह वित्र, तहज्जुद की नमाज़ के बाद आख़िर में पढ़े। फिर भी इशा के समय भी पढ़ लेगा तो जाइज़ है और उसके बाद तहज्जुद के समय तहज्जुद की नमाज़ पढ़नी भी सहीह है। लेकिन इसे बतौर आदत इख़्तियार करना सहीह नहीं है। कभी कभार ऐसा हो जाए तो जाइज़ है।

6. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, अध्याय सलातुल्लैल, हदीस 752। अरबी में "वित्र" के दो मायना हैं "एक" और "ताक़"। इस्लाम ने बहुत से अन्य मामलों की तरह रकआत नमाज़ की तादाद में भी इसे पसन्द किया है। अतएव मग़रिब के सिवा

शेष अगले पृष्ठ पर

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति आख़िर रात में न उठ सके तो वह शुरू रात वित्र पढ़ ले और जो आख़िर रात उठ सके वह आख़िर रात वित्र पढ़े क्योंकि आख़िर रात की नमाज़ श्रेष्ठ है।"[1]

हज़रत आइशा रज़ि०से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने शुरू रात, रात के वस्त और पिछली रात अर्थात रात के हर हिस्से में वित्र पढ़े।[2]

साअद बिन हिशाम ने हज़रत आइशा रज़ि० की ख़िदमत में हाज़िर होकर कहा, मोमिनों की अम्मा जान! मुझे रसूलुल्लाह सल्ल० के वित्र के बारे में बतलाएं, तो आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० ने फ़रमाया : "मैं आप सल्ल० के लिए मिस्वाक और वुज़ू का पानी तैयार रखती। फिर जब अल्लाह चाहता आपको रात को उठाता। फिर आप मिस्वाक करते और वुज़ू करते और नौ रकआत नमाज़ (वित्र) पढ़ते, (सात रकअतों में "अत्तहिय्यात" में न बैठते बल्कि) आठवीं रकअत के बाद (अत्तहिय्यात में) बैठते तो अल्लाह को याद करते, उसकी प्रशंसा करते और दुआ मांगते (अर्थात "अत्तहिय्यात" पढ़ते क्योंकि "अत्तहिय्यात" ज़िक्र हम्द और दुआ पर आधारित है)। फिर सलाम फेरे बिना (अत्तहिय्यात पढ़कर) खड़े हो जाते, फिर नवीं रकअत पढ़ते और (उसके बाद आख़िरी क़ाअदे में) बैठ जाते। तो अल्लाह को याद करते और उसकी प्रशंसा करते और उससे दुआ मांगते (अर्थात आख़िरी क़ाअदे की मारूफ़ दुआ पढ़ते)

दिन, रात की तमाम फ़र्ज़ नमाज़ें दो या चार रकआत पर आधारित हैं। अर्थात उन तमाम नमाज़ों की रकआत जुफ़्त हैं लेकिन मग़रिब की तीन रकआत मुक़र्रर करके इस्लाम ने तमाम फ़र्ज़ नमाज़ों की रकआत को ताक़ बना दिया है। इसी तरह वित्र के सिवा दिन रात की तमाम सुन्नतें और नवाफ़िल दो या चार रकआत पर आधारित हैं अर्थात जुफ़्त हैं मगर इस्लाम ने वित्र के ज़रिए उस सारी नफ़्ली इबादत को भी ताक़ बना दिया है। अब अगर कोई व्यक्ति वित्र पढ़कर सो जाता है फिर सुबह उठकर तहज्जुद भी पढ़ता है तो चूंकि वह वित्र पढ़ चुका है इसलिए वह हस्बे तौफ़ीक़ जितने नवाफ़िल भी दो दो करके अदा करेगा वह वित्र (ताक़) ही होंगे जुफ़्त नहीं बनेंगे। यही वजह है कि ख़ुद नबी अकरम सल्ल० ने भी वित्र के बाद दो रकआत ज़्यादा अदा फ़रमाएं। (मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 738 की ज़ेली हदीस) लेकिन श्रेष्ठ यही है कि जिसे बेदारी का यक़ीन हो वह आख़िर शब ही वित्र अदा करे।

1. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 755।
2. बुख़ारी, वित्र, हदीस 996 व मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 745।

फिर सलाम फेरते।" हज़रत उम्मुल मोमिनीन रज़ि० फ़रमाती हैं : "जब रसूलुल्लाह सल्ल० बड़ी उम्र को पहुंचे (तो) आप सात रकआत वित्र पढ़ते थे। आप इस बात को पसन्द करते थे कि अपनी नमाज़ पर हमेशगी करें। जब नींद या बीमारी का ग़लबा होता और रात को क़याम न कर सकते तो दिन में बारह रकआत नफ़्ल पढ़ते और मैं नहीं जानती कि आपने एक रात में पूरा क़ुरआन पढ़ा हो या सारी रात नमाज़ पढ़ी हो या रमज़ान के अलावा किसी और महीने में पूरा महीना रोज़े रखे हों।"[1]

इस हदीस शरीफ़ से दो बातें मालूम हुई एक यह कि नबी सल्ल० ने (एक सलाम के साथ) नौ वित्र पढ़े और सात भी। दूसरी बात यह साबित हुई कि आप हर दो रकअतों के बाद अत्तहिय्यात में नहीं बैठते थे बल्कि केवल आठवीं रकअत में तशह्हुद पढ़ते और सलाम फेरे बिना खड़े हो जाते। और फिर आख़िरी ताक़ रकअत के आख़िर में हस्बे मामूल तशह्हुद पढ़कर सलाम फेर देते थे।

वित्रों के सलाम के बाद :

हज़रत अबी बिन काअब रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० वित्रों से सलाम फेरकर तीन बार यह पढ़ते :

«سُبْحَانَ الْمَلِكِ الْقُدُّوسِ»

"पाक है बादशाह, बहुत पाक।"[2]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया है : "अगर कोई व्यक्ति वित्र पढ़े बग़ैर सो जाए या वित्र पढ़ना भूल जाए तो उसे जब याद आए वह वित्र पढ़ ले।"[3]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति रात का वज़ीफ़ा या कोई दूसरा अमल छोड़कर सो गया और फिर उसे नमाज़ फ़ज्र से ज़ोहर के बीच अदा कर

1. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, अध्याय जामेअ सलातुल्लैल, हदीस 746।

2. अबू दाऊद, अबवाबुल वित्र, हदीस 1430, नसाई 3/244। इसे इमाम इब्ने हिबान (हदीस 677) ने सहीह कहा है।

3. अबू दाऊद, अबवाबुल वित्र, हदीस 1431। इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

लिया तो उसे रात ही के समय अदा करने का सवाब मिल गया।"[1]

हमें अपना वज़ीफ़ा पूरा करना चाहिए क्योंकि नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "अल्लाह तआला के यहां महबूब तरीन अमल वह है जो हमेशा किया जाए चाहे थोड़ा ही हो।"[2]

नबी सल्ल० ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन अलआस रज़ि० को फ़रमाया : "ऐ अब्दुल्लाह! तू फ़लां व्यक्ति की तरह न हो जाना जो रात को क़याम करता था फिर उसने रात का क़याम छोड़ दिया।"[3]

दुआए क़ुनूत :

हज़रत अबी बिन काअब रज़ि० फ़रमाते हैं :

«أَنَّ رَسُوْلَ اللهِ ﷺ كَانَ يُوْتِرُ بِثَلَاثِ رَكَعَاتٍ وَيَقْنُتُ قَبْلَ الرُّكُوْعِ»

"रसूलुल्लाह सल्ल० तीन वित्र पढ़ते और दुआए क़ुनूत रुकूअ से पहले पढ़ते थे।"[4]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद और सहाबा किराम रज़ि० क़ुनूत वित्र रुकूअ से पहले पढ़ते थे।[5]

वित्र में रुकूअ के बाद क़ुनूत की तमाम रिवायात ज़ईफ़ हैं और जो रिवायात सहीह हैं उनमें स्पष्टता नहीं कि आप सल्ल० का रुकूअ के बाद वाला क़ुनूत, क़ुनूत वित्र था या क़ुनूत नाज़िला। अतः सहीह तरीक़ा यह है कि वित्र में क़ुनूत, रुकूअ से पहले पढ़ा जाए।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने मस्जिद के अंदर दो सुतूनों के बीच लटकी हुई रस्सी देखी तो पूछा यह क्या है? लोगों ने कहा : यह हज़रत ज़ैनब रज़ि० की

---

1. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 747।

2. बुख़ारी, अररिक़ाक़, हदीस 6464-6465, मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 782।

3. बुख़ारी, तहज्जुद, हदीस 1152।

4. नसाई, 3/235, इब्ने माजा, इक़ामुस्सलात, हदीस 1182। इसे इब्ने तुर्कमानी और इब्नुस्सिकन ने सहीह कहा है।

5. लेखक इब्ने अबी शैबा, इसे इब्ने तुर्कमानी ने सहीह और हाफ़िज़ इब्ने हजर ने हसन कहा है।

रस्सी है वह (रात को नफ़्ल) नमाज़ पढ़ती रहती हैं फिर जब सुस्त हो जाती हैं या थक जाती हैं तो इस रस्सी को पकड़ लेती हैं।" आप सल्ल० ने फ़रमाया : "इसको खोल डालो, हर व्यक्ति अपनी ख़ुशी के नफ़िल नमाज़ पढ़े फिर जब सुस्त हो जाए या थक जाए तो आराम करे।"[1]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "इतना अमल इख़्तियार करो जितनी तुम्हें ताक़त हो, अल्लाह की क़सम! अल्लाह सवाब देने से नहीं थकता लेकिन तुम अमल करने से थक जाओगे।"[2]

हज़रत हसन बिन अली रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने मुझे कुछ कलिमात सिखाए ताकि मैं उनको क़ुनूत वित्र में कहूं :

«اَللّٰهُمَّ اهْدِنِيْ فِيْمَنْ هَدَيْتَ، وَعَافِنِيْ فِيْمَنْ عَافَيْتَ، وَتَوَلَّنِيْ فِيْمَنْ تَوَلَّيْتَ، وَبَارِكْ لِيْ فِيْمَا أَعْطَيْتَ، وَقِنِيْ شَرَّمَا قَضَيْتَ، إِنَّكَ تَقْضِيْ وَلَا يُقْضٰى عَلَيْكَ، وَإِنَّهُ لَا يَذِلُّ مَنْ وَّالَيْتَ، [وَلَا يَعِزُّ مَنْ عَادَيْتَ]، تَبَارَكْتَ رَبَّنَا وَتَعَالَيْتَ»

"ऐ अल्लाह! मुझे हिदायत देकर उन लोगों के संग शामिल फ़रमा जिन्हें तूने रुश्द व हिदायत से नवाज़ा है और मुझे आफ़ियत देकर उन लोगों में शामिल फ़रमा जिन्हें तूने आफ़ियत प्रदान की है, और जिन लोगों को तूने अपना दोस्त बनाया है उनमें मुझे भी शामिल करके अपना दोस्त बना ले। जो कुछ तूने मुझे प्रदान किया है उसमें मेरे लिए बरकत डाल दे और जिस शर व बुराई का तूने फ़ैसला फ़रमाया है उससे मुझे बचा कर रख और बचा ले। निश्चय ही तू फ़ैसला करता है तेरे ख़िलाफ़ फ़ैसला नहीं किया जा सकता और जिसका तू संरक्षक बना वह कभी ज़लील व ख़्वार और रुसवा नहीं हो सकता और वह व्यक्ति इज़्ज़त नहीं पा सकता जिसे तू दुश्मन कहे, हमारे पालनहार आक़ा! तू (बड़ा) ही बरकत वाला और सर्वश्रेष्ठ और उच्च है।"[3]

---

1. मुस्लिम, तहज्जुद, हदीस 1150, व सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 784। इससे मालूम हुआ कि जाइज़ लज़्ज़तों से कनाराकशी और शारीरिक तकलीफ़ पर आधारित सूफ़ियाना साधनाओं और मुजाहिदों की इस्लाम में कोई धारणा नहीं है।

2. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 785।

3. अबू दाऊद, अबवाबुल वित्र, हदीस 1425-1426, तिर्मिज़ी वित्र, हदीस 464। अहमद (1/199-200) इमाम तिर्मिज़ी ने इसे हसन और इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (2/151-152,

चेतावनी :

दुआए क़ुनूत वित्र में हाथ उठाने के बारे में कोई मरफ़ूअ रिवायत नहीं है अलबत्ता लेखक इब्ने अबी शैबा में कुछ चिन्ह मिलते हैं। (इसलिए हाथ उठाकर या हाथ उठाए बिना, दोनों तरीक़ों से क़ुनूत वित्र की दुआ पढ़ना सहीह है।)[1]

(रब्बना व-त-आलै त) के बाद (नस्तग़फ़ि-रु-क व नतूबु इलै-क) के शब्द रसूलुल्लाह सल्ल० की अहादीस में मौजूद नहीं हैं। बल्कि कुछ उलमा की तरफ़ से वृद्धि हैं।

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० के सामने एक आदमी को छींक आई तो उसने (अलहम्दुल्लिाहि वस्सलामु अला रसूलिल्लाहि'' कहा, यह सुनकर इब्ने उमर रज़ि० फ़रमाने लगे, मैं भी (अलहम्दुलिल्लाहि वस्सलामु अला रसूलिल्लाहि) कह सकता हूं मगर रसूलुल्लाह सल्ल० ने इस मौक़े पर हमें यह तालीम नहीं दी बल्कि यह फ़रमाया है कि : ''छींक आने पर (अलहम्दुलिल्लाह अला कुल्लि हालिन) पढ़ा जाए।''

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«مَنْ اَحْدَثَ فِیْ اَمْرِنَا هٰذَا مَا لَيْسَ مِنْهُ فَهُوَ رَدٌّ»

''जिसने हमारे इस दीन में कोई ऐसी बात शामिल की जो उसमें से नहीं है तो वह मर्दूद है।''[2]

मालूम हुआ कि हदीसों में मौजूद अज़्कार और दुआओं में अपनी तरफ़ से किसी क़िस्म की ज़्यादती नहीं करनी चाहिए।

(सल्लल्लाहु अलन्नबिय्यि) : सहीह इब्ने ख़ुज़ैमा (1100) में अबी बिन काअब रज़ि० से साबित है कि वह हज़रत उमर रज़ि० के दौर में रमज़ान में

हदीस 1095) ने सहीह कहा है। स्पष्ट हो कि (वला यइज़्ज़ु मन आदै त) के शब्द बैहेक़ी (2/209) की रिवायत में हैं।

1. तिर्मिज़ी, अलअदब, हदीस 2728, इमाम हाकिम (4/265-266) और इमाम ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

2. बुख़ारी, सिहाह, हदीस 2697 व मुस्लिम, हदीस 1718।

क़यामुल्लैल करते और क़ुनूत में नबी सल्ल० पर दुरूद भेजते थे।[1] इस तरह हज़रत मुआज़ अंसारी रज़ि० से भी साबित है। अतः (सल्लल्लाहु अलन्नबिय्यि) पढ़ना जाइज़ है।

क़ुनूते नाज़िला :

जंग, मुसीबत और दुश्मन के हमले के समय दुआए क़ुनूत पढ़नी चाहिए। इसे क़ुनूते नाज़िला कहते हैं। अमीरुल मोमिनीन हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ि० फ़ज्र की नमाज़ में (रुकूअ के बाद) क़ुनूत करते और यह दुआ पढ़ते थे :

«اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلَنَا وَلِلْمُؤْمِنِيْنَ وَالْمُؤْمِنَاتِ وَالْمُسْلِمِيْنَ وَالْمُسْلِمَاتِ، وَاَلِّفْ بَيْنَ قُلُوْبِهِمْ، وَاَصْلِحْ ذَاتَ بَيْنِهِمْ، وَانْصُرْهُمْ عَلٰى عَدُوِّكَ وَعَدُوِّهِمْ، اَللّٰهُمَّ الْعَنْ كَفَرَةَ اَهْلِ الْكِتَابِ الَّذِيْنَ يَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِكَ وَيُكَذِّبُوْنَ رُسُلَكَ وَيُقَاتِلُوْنَ اَوْلِيَاءَكَ اَللّٰهُمَّ خَالِفْ بَيْنَ كَلِمَتِهِمْ وَزَلْزِلْ اَقْدَامَهُمْ وَاَنْزِلْ بِهِمْ بَأْسَكَ الَّذِيْ لَا تَرُدُّهُ عَنِ الْقَوْمِ الْمُجْرِمِيْنَ»

"ऐ अल्लाह! हमें और तमाम मोमिन मर्दों, मोमिन औरतों, मुसलमान मर्दों और मुसलमान औरतों को बख़्श दे और उनके दिलों में उल्फ़त डाल दे। उनकी (आपसी) इस्लाह फ़रमा दे। अपने और उनके दुश्मनों पर उनकी मदद फ़रमा। इलाही! काफ़िरों को अपनी रहमत से दूर कर जो तेरी राह से रोकते, तेरे रसूलों को झुठलाते और तेरे दोस्तों से लड़ते हैं। इलाही! उनके बीच फूट डाल दे उनके क़दम डगमगा दे और उन पर अपना वह अज़ाब उतार जिसे तू अपराधी क़ौम से नहीं टाला करता।"[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० जब किसी पर बद्दुआ या किसी के लिए नेक दुआ का इरादा फ़रमाते तो आख़िरी रकअत के रुकूअ के बाद (समिअल्लाहु लिमन हमिदा रब्बना लकल हम्दु) कहने के बाद ऊंची आवाज़ के साथ यह दुआ

1. सहीह इब्ने ख़ुज़ैमा की उल्लिखित मौक़ूफ़ हदीस (1100) से और यह बात भी साबित होती है कि क़ुनूत वित्र एक ज़रूरी दुआ है और इसमें केवल (अल्लाहुम्महदिना) वाली मारूफ़ दुआ ही नहीं बल्कि क़ुनूत समेत दूसरी दुआएं भी मांगी जा सकती हैं।

2. बैहक़ी (2/210-211) और उन्होंने इसे सहीह कहा है।

फ़रमाते ।[1]

(इस अवसर पर) आप सल्ल० अपने दोनों हाथ उठाते ।[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने एक माह तक पांचों नमाज़ों में रुकूअ के बाद क़ुनूते नाज़िला पढ़ी और सहाबा रज़ि० आपके पीछे आमीन कहते थे ।[3]

रमज़ान में क़याम (नमाज़ में खड़े रहना) :

रसूलुल्लाह सल्ल० हुक्म दिए बिना सहाबा किराम रज़ि० को क़यामे रमज़ान का शौक़ दिलाते और फ़रमाते थे :

«مَنْ قَامَ رَمَضَانَ إِيمَانًا وَّاحْتِسَابًا، غُفِرَ لَهُ مَا تَقَدَّمَ مِنْ ذَنْبِهِ»

"जिसने ईमान के साथ और सवाब की नीयत से रमज़ान का क़याम किया अल्लाह तआला उसके पीछे तमाम गुनाह माफ़ फ़रमा देते हैं।"[4]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने तीन रात क़यामे रमज़ान किया :

हज़रत अबूज़र रज़ि० कहते हैं कि हमने रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ (रमज़ानुल मुबारक के) रोज़े रखे, (शुरू में) आपने हमारे साथ महीने में से कुछ भी क़याम न किया यहां तक कि 23वीं रात को आपने क़याम रमज़ान किया। फिर आपने 24वीं रात छोड़कर 25वीं रात को फिर 26वीं रात को छोड़कर 27वीं शब को अपने घर वालों और अपनी औरतों को और सब लोगों को जमा करके क़याम किया। और फ़रमाया : "जो व्यक्ति इमाम के साथ क़याम (रमज़ान) करता है उसके लिए पूरी रात का क़याम लिखा जाता है।"[5]

---

1. बुख़ारी, तफ़्सीर, हदीस 4559-4560, 4598, 6200, 1393, 6940, 804, 1006, 2932, मुस्लिम, मस्जिदों, हदीस 675।

2. अहमद,, 2/255, मुसनद सिराज, यह हदीस बुख़ारी अैर मुस्लिम की शर्त पर सहीह है।

3. अबू दाऊद, अबवाबुल वित्र, हदीस 1443। इसे हाकिम, हाफ़िज़ ज़ेहबी और इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा ने सहीह कहा है।

4. बुख़ारी, सलातुत तरावीह, हदीस 2008 व मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 759।

1. अबू दाऊद, अबवाब शहरु रमज़ान, हदीस 1375, तिर्मिज़ी सोम, हदीस 805।

आप सल्ल० ने (तीन रात के बाद) फ़रमाया : "मैंने देखा कि तुम्हारा प्रोग्राम बराबर क़ायम है। तो मुझे ख़तरा पैदा हुआ कि कहीं तुम पर (यह नमाज़) फ़र्ज़ न कर दी जाए (इसलिए मैं घर से नहीं निकला) अतः तम अपने अपने घरों में (रमज़ान की रातों का) क़याम करो। आदमी की नफ़्ल नमाज़ घर में श्रेष्ठ होती है।"[1]

हज़रत उमर रज़ि० ने जमाअत के साथ क़याम रमज़ान (दोबारा) शुरू कराया मगर यह भी फ़रमाया कि रात का आख़िरी हिस्सा (जिसमें लोग सो जाते हैं) रात के शुरू के हिस्से से (जिसमें लोग क़याम करते हैं) बेहतर है।[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने तीन रात क़याम रमज़ान कराके लोगों से फ़रमाया कि : "तुम अपने घरों में पढ़ा करो।" घरों आदि में अलग अलग पढ़ने के बारे में इमाम ज़ोहरी फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० की वफ़ात के बाद भी यही तरीक़ा जारी रहा। हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० की ख़िलाफ़त और हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० के शुरू के दौर में भी इसी पर अमल होता रहा। फिर उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने जमाअत से पढ़ने का तरीक़ा मुक़र्रर फ़रमाया।[3]

नसाई, 3/83, 202-203, इसे इमाम इब्ने हिबान (919) और इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (2206) ने सहीह कहा है।

1. बुख़ारी, जमाअत वल इमामत, हदीस 731, 6113, 729, मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 781।

2. बुख़ारी, सलातुत्तरावीह, हदीस 2010।

3. बुख़ारी, सलातुत्तरावीह, हदीस 2009 व मुस्लिम सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 759। इस तरीक़े पर सहाबा किराम रज़ि० और उनके बाद सारी उम्मत का अमल रहा और जिस चीज़ को सहाबा किराम रज़ि० की अधिक पुष्टि हासिल हो जाए वह बिदअत नहीं हुआ करती। और उम्मत सहमति की वजह से भी यह बिदअत नहीं है वैसे भी हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० ख़ुलफ़ाए राशिदीन रज़ि० में से हैं जिनकी सुन्नत इख़्तियार करने का हुक्म स्वयं नबी अकरम सल्ल० फ़रमा गए थे। (अबू दाऊद, सुन्नत, हदीस 4607 व तिर्मिज़ी, अलइल्म, हदीस 2681) अतः जब किसी ख़ुलफ़ाए राशिदीन की सुन्नत को अन्य सहाबा किराम रज़ि० क़ुबूल कर लें तो वह बाक़ी उम्मत के लिए हुज्जत बन जाती है इस हिसाब से भी पूरे रमज़ान में क़यामुल्लैल का जमाअत के साथ आयोजन बिदअत नहीं है। दरअस्ल हज़रत उमर रज़ि० ने इसे जो बिदअत कहा है तो इससे मुराद बिदअत का शाब्दिक अर्थ है। लेकिन अफ़सोस कि कुछ लोग अपनी बिदआत को जाइज़ साबित करने के लिए सहाबा किराम रज़ि० को भी बिदअती साबित करने पर डटे हुए हैं। अल्लाह

रसूलुल्लाह सल्ल० ने रमज़ान में तहज्जुद नहीं पढ़ी :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने 27वीं रमज़ानुल मुबारक को इतना लम्बा क़याम किया कि सहाबा किराम रज़ि० को ख़तरा महसूस हुआ, कहीं सहरी का समय ख़त्म न हो जाए।[1]

अगर क़याम रमज़ान के अलावा रसूलुल्लाह सल्ल० तहज्जुद भी पढ़ा करते थे तो फिर बताइए कि आपने 27वीं रमज़ान को तहज्जुद क्यों न पढ़ी, जबकि तहज्जुद की नमाज़ एक कथन के मुताबिक़ आप पर फ़र्ज़ थी।[2] मालूम हुआ कि माहे रमज़ान में तहज्जुद और क़याम रमज़ान अलग अलग नहीं, बल्कि एक ही नमाज़ है। (सिरे से मंक़ूल ही नहीं है कि आप सल्ल० ने रमज़ानुल मुबारक की किसी रात को तहज्जुद और क़याम रमज़ानुल मुबारक का अलग अलग आयोजन किया हो।)

क़यामे रमज़ान : ग्यारह रकअतें :

अबू सलमा ने हज़रत आइशा रज़ि० से पूछा कि रमज़ानुल मुबारक में रसूलुल्लाह सल्ल० की रात वाली नमाज़ कैसी थी? सिद्दीक़ा कुबरा रज़ि० ने फ़रमाया : "रमज़ान और ग़ैर रमज़ान में रसूलुल्लाह सल्ल० रात की नमाज़ (सामान्यता) ग्यारह रकआत से ज़्यादा नहीं पढ़ते थे।"[3]

"हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने हमें रमज़ान में आठ रकआत क़याम रमज़ान पढ़ाया फिर वित्र पढ़ाए।"[4]

हम सबको हिदायत दे। आमीन।

1. तिर्मिज़ी, सोम, हदीस 806। वक़ाला तिर्मिज़ी हसन सहीह अबू दाऊद, सलात, हदीस 1275।

2. रसूलुल्लाह सल्ल० पर तहज्जुद की फ़र्ज़ियत महल नज़र है क्योंकि यह बात क़ुरआन मुक़द्दस या किसी भी सहीह हदीस से साबित नहीं है।

3. बुख़ारी, तहज्जुद, हदीस 1147, 2013 व मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 738।

4. इब्ने ख़ुज़ैमा, 1070, इब्ने हिबान 920, अबू याला अलमूसली 1802, इमाम इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है।

अतः साबित हुआ कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने तीन रात जो नमाज़ पढ़ाई थी वह ग्यारह रकअत ही थीं।

हज़रत साइब बिन यज़ीद से रिवायत है कि हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने हज़रत अबी बिन काअब और तमीम दारी रज़ि० को हुक्म दिया कि लोगों को ग्यारह रकअत क़याम रमज़ान पढ़ाएं।[1]

साबित हुआ कि हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने मदीने के क़ारियों को ग्यारह रकआत पढ़ाने का हुक्म दिया था।

अमीरुल मोमिनीन हज़रत उमर बिन ख़त्ताब, अली बिन अबी तालिब, अबी बिन काअब और अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० से 20 रकआत क़यामुल्लैल की तमाम रिवायात सनदन ज़ईफ़ हैं।

सहरी और नमाज़े फ़ज्र का बीच का समय :

हज़रत ज़ैद बिन साबित रज़ि० से रिवायत है कि :

«أَنَّهُمْ تَسَحَّرُوْا مَعَ النَّبِيِّ ﷺ ثُمَّ قَامُوْا إِلَى الصَّلَاةِ، قَدْرَ خَمْسِيْنَ أَوْ سِتِّيْنَ يَعْنِي آيَةً»

"उन्होंने रसूलुल्लाह सल्ल० के साथ सहरी खाई फिर नमाज़े फ़ज्र के लिए खड़े हो गए (और नमाज़ पढ़ी)। सहरी से फ़रागत और नमाज़ में दाख़िल होने का समय इतना था जितनी देर में कोई व्यक्ति क़ुरआन हकीम की पचास या साठ आयतें पढ़ लेता है।"[2]

---

1. मोत्ता इमाम मालिक, सलात फ़ी रमज़ान, अध्याय माजा फ़ी क़याम रमज़ान 1/115। ज़ियाउल मुक़द्दसी और शैख़ अलबानी ने इसे सहीह कहा है।

2. बुख़ारी, मवाक़ीतुस्सलात, अध्याय वक़्त फ़ज्र, हदीस 575-576, 1134।

सफ़र की नमाज़

सफ़र में ज़ोहर, अस्र और इशा की चार चार फ़र्ज़ रकअतों को दो दो पढ़ना क़स्र (कम करना) कहलाता है। फ़ज्र और मग़रिब में क़स्र नहीं है। जो व्यक्ति सफ़र का इरादा करके अपने घर से चले और गांव या शहर की आबादी से निकल जाए तो वह शरीअत के हिसाब से मुसाफ़िर है। और अपनी फ़र्ज़ नमाज़ में क़स्र कर सकता है। अतएव हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है :

«أَنَّ رَسُولَ اللهِ ﷺ صَلَّى الظُّهْرَ بِالْمَدِينَةِ أَرْبَعًا وَصَلَّى الْعَصْرَ بِذِي الْحُلَيْفَةِ رَكْعَتَيْنِ»

रसूलुल्लाह सल्ल० ने मदीना में ज़ोहर की नमाज़ चार रकअतें पढ़ीं और ज़ुल हलीफ़ा में अस्र की नमाज़ दो रकअतें पढ़ीं।[1]

ज़ुल हुलीफ़ा एक मक़ाम का नाम है जो मदीना मुनव्वरा से छः मील के फ़ासले पर है। नबी सल्ल० मक्का के लिए रवाना हुए तो ज़ुल हलीफ़ा पहुंच कर नमाज़ अस्र का समय हो गया। तो आपने वहां अस्र में क़स्र कर लिया।

रसूलुल्लाह सल्ल० जब तीन मील या तीन फ़रसंग की दूरी पर निकलते तो नमाज़ दो रकअतें पढ़ते।[2]

इस हदीस में रावी हदीस ने पूरी ईमानदारी से काम लेते हुए तीन मील या तीन फ़रसंग कहा है। अर्थात रावी को शक है कि आप सल्ल० तीन मील की दूरी पर क़स्र करते थे या तीन फ़रसंग (नौ मील) पर। अतः मुसाफ़िर को चाहिए कि सावधानी हेतु नौ मील पर क़स्र कर लें (अर्थात अपने शहर की हुदूद से निकलने के बाद अगर मंज़िल मक़्सूद 9 मील या उससे ज़्यादा दूरी पर स्थित हो तो मुसाफ़िर क़स्र कर सकता है।)[3]

---

1. बुख़ारी, तक़्सीरुस्सलात, हदीस 1089, 1546, 1547, 1548, 1551, 1712, 1714, 1715 व मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 690 व शब्द मुस्लिम।

2. मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 691।

3. इसकी वजह यह है कि इस्लाम जब कोई हुक्म देता है तो समाज के ग़रीब और कमज़ोर लोगों का लिहाज़ करता है।

हज़रत इब्ने उमर रज़ि० से रिवायत है कि मैं, रसूलुल्लाह सल्ल०, अबूबक्र सिद्दीक़, उमर फ़ारूक़ और उसमान ग़नी रज़ि० के साथ सफ़र में रहा, ये सब (चार की बजाए) दो रकअतें ही पढ़ा करते थे।[1]

हज़रत याला बिन उमैया रज़ि० से रिवायत है कि मैंने हज़रत उमर रज़ि० से पूछा कि अल्लाह तआला तो फ़रमाता है : "अगर तुम्हें कुफ़्फ़ार से ख़ौफ़ हो तो नमाज़ क़स्र कर लो तुम पर कोई गुनाह नहीं।" (अल क़ुरआन) आज हम अम्न में हैं नमाज़ क़स्र क्यों करें? हज़रत उमर रज़ि० ने फ़रमाया कि "(अम्न की हालत में क़स्र की इजाज़त देना) अल्लाह का एहसान है इसे क़ुबूल करो।"[2]

हज़रत हारिसा बिन वहब रज़ि० कहते हैं कि नबी करीम सल्ल० ने हमें मिना में क़स्र नमाज़ पढ़ाई यद्यपि हम तादाद में ज़्यादा और हालते अम्न में थे।[3]

क़स्र की हद :

अगर कोई मुसाफ़िर किसी इलाक़े में असमंजस में ठहरे, कि आज जाऊंगा या कल। तो नमाज़ क़स्र करता रहे। चाहे कई महीने लग जाएं। हज़रत अनस रज़ि०, अब्दुल मलिक बिन मरवान के हमराह दो माह (बहैसियत संकुचित मुसाफ़िर) शाम में रहे और नमाज़ दो रकअतें पढ़ते रहे।[4]

अबू जुमरा नसर बिन इमरान से रिवायत है कि मैंने इब्ने अब्बास रज़ि० से सवाल किया कि हम ग़ज़वा की मन्शा से ख़ुरासान में लम्बी दूरी करते हैं। क्या हम पूरी नमाज़ पढ़ें? आपने फ़रमाया : "दो रकअतें ही पढ़ा करो चाहे तुम्हें (किसी जगह संकुचित मुसाफ़िर की हैसियत से) दस साल क़याम करना पड़े।[5]

---

1. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, अध्याय सलातुल मुसाफ़िर, व क़स्र हा, हदीस 689।

2. मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 686।

3. बुख़ारी, तक़्सीरुस्सलात, हदीस 1083, 1656, मुस्लिम सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 696।

4. बैहेक़ी, 3/152।

5. लेखक इब्ने अबी शैबा।

और अगर उन्नीस दिन तक ठहरने का इरादा हो तो नमाज़ में क़स्र करे। और अगर उन्नीस दिन से ज़ायद ठहरने का इरादा हो तो फिर (पहले ही रोज़ से) नमाज़ पूरी पढ़नी चाहिए।[1]

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने एक सफ़र किया। फिर आप उन्नीस दिन ठहरे और दो दो रकअतें नमाज़ पढ़ते रहे। इब्ने अब्बास रज़ि० ने फ़रमाया : कि हम अपने और मक्का के बीच किसी मंज़िल में (इक़ामत के दौरान) उन्नीस दिन दो दो रकअतें पढ़ते हैं। अतः जब उस (उन्नीस दिन) से ज़्यादा ठहरते हैं तो चार रकआत पढ़ते हैं।[2]

सफ़र में अज़ान और जमाअत :

मालिक बिन हुवेरिस रज़ि० कहते हैं कि मैं और मेरा चचाज़ाद भाई आप सल्ल० की ख़िदमत में हाज़िर हुए तो आपने फ़रमाया कि : "जब तुम सफ़र पर जाओ तो अज़ान और इक़ामत कहो फिर तुममें जो बड़ा हो वह इमामत कराए।"[3]

सफ़र में दो नमाज़ें जमा करना :

इब्ने उमर रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० दौराने सफ़र ज़ोहर और अस्र को और मग़रिब और इशा को जमा करते थे।[4]

जमा की दो सूरतें हैं :

जमा तक़्दीम : अर्थात ज़ोहर के साथ अस्र और मग़रिब के साथ इशा

---

1. इसकी बाबत मतभेद है। एक मत तो यही है जिसका हवाला इस किताब में दिया गया है कि 19 रोज़ क़याम की नीयत हो तो नमाज़ कस्र की जाए। एक दूसरा मत 15 दिन का और चौथा मत 3 दिन का है। इसी आख़िरी मत को उलमा की बड़ी संख्या ने सही क़रार दिया और इख़्तियार किया है। विवरण के लिए देखिए "इतहाफ़ुल किराम शरह बुलूग़ुल मराम" किताबुस्सलात, अध्याय सलातुल मुसाफ़िर वल मरीज़ अहादी नम्बर अरबी एडीशन 421-425, उर्दू एडीशन 344-346।

2. बुख़ारी, तक़्सीरुस्सलात, हदीस 1080, 4298, 4299।

3. बुख़ारी, अल अज़ान, हदीस 630।

4. बुख़ारी, तक़्सीरुस्सलात, हदीस 1107 व मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 706।

की नमाज़ पढ़ना।

जमा ताख़ीर : अर्थात अस्र के साथ ज़ोहर और इशा के साथ मग़रिब की नमाज़ पढ़ना।

हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ि० से रिवायत है कि ग़ज़वा तबूक के मौक़े पर अगर रसूलुल्लाह सल्ल० सूरज ढलने के बाद सफ़र शुरू करते तो ज़ोहर और अस्र को इस समय जमा फ़रमा लेते और अगर सूरज ढलने से पहले सफ़र शुरू करते तो ज़ोहर को टाल कर अस्र के साथ अदा फ़रमाते। इसी तरह अगर सूरज अस्त होने के बाद सफ़र शुरू करते तो मग़रिब और इशा उसी समय पढ़ लेते और अगर सूरज अस्त होने से पहले सफ़र शुरू करते तो मग़रिब को टाल करके इशा के साथ पढ़ते।[1]

मुआज़ बिन जबल रज़ि० वाली हदीस की पुष्टि, इब्ने अब्बास रज़ि० की हदीस से होती है जिसे बैहेक़ी ने रिवायत किया और उसे सहीह कहा है। और इस बारे में इब्ने उमर रज़ि० और अनस रज़ि० से भी रिवायत मरवी हैं।[2]

सफ़र में सुन्नतें माफ़ हैं :

हज़रत हफ़स बिन आसिम रह० से रिवायत है कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० ने उनसे कहा : "ऐ मेरे भतीजे! मैं रसूलुल्लाह सल्ल० के हमराह सफ़र में रहा। मगर आपने दो रकअतों से ज़्यादा नमाज़ न पढ़ी यहां तक कि अल्लाह तआला ने आपकी रूह क़ब्ज़ कर ली। और मैं हज़रत अबू बक्र रज़ि० के हमराह, सफ़र में रहा, हज़रत उमर रज़ि० के हमराह, सफ़र में रहा और हज़रत उसमान रज़ि० के हमराह, सफ़र में रहा। उन सबने सफ़र में दो रकअतों से ज़्यादा नमाज़ नहीं पढ़ी यहां तक कि अल्लाह तआला ने उनकी रूह क़ब्ज़ कर ली। और अल्लाह ने इरशाद फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्ल० का अनुसरण ही तुम्हारे लिए बेहतर है।"[3]

---

1. अबू दाऊद, अबवाब सलातुस्सफ़र, हदीस 1220, तिर्मिज़ी, अलजुमा, हदीस 552। इसे इमाम इब्ने हिबान (4/413-414) ने सहीह कहा है।

2. बुख़ारी, तक़्सीरुस्सलात, हदीस 1091, 1111, 1112 व मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 703-704।

3. बुख़ारी, तक़्सीरुस्सलात, हदीस 1101-1102, मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 689।

मालूम हुआ कि सफ़र में सुन्नतें, नफ़्ल सब माफ़ हैं। इब्ने उमर रज़ि० दो रकअतें (अर्थात नमाज़ क़स्र) पढ़कर अपने बिस्तर पर चले जाते थे। हफ़स कहते हैं कि मैंने कहा चचा जान! अगर उसके बाद आप दो रकअतें (सुन्नत) पढ़ लिया करें तो क्या हरज है? फ़रमाया : अगर मुझे यह करना होता तो (फ़र्ज़) नमाज़ ही पूरी पढ़ लेता।[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० मुज़दल्फ़ा तशरीफ़ ले गए तो एक अज़ान और दो इक़ामतों से नमाज़ मग़रिब और इशा जमा कीं और बीच में सुन्नतें नहीं पढ़ीं।[2]

हज़र (बिना सफ़र के) में दो नमाज़ों का जमा करना :

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने मदीना में ज़ोहर और अस्र को जमा करके पढ़ा। यद्यपि वहां (दुश्मन का) ख़ौफ़ था न सफ़र की हालत थी। (रावी) अबू ज़ुबैर कहते हैं मैंने सईद बिन जुबैर से पूछा आप सल्ल० ने ऐसा क्यों किया था। सईद ने जवाब दिया। जिस तरह तुमने मुझसे मालूम किया उसी तरह मैंने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० से पूछा था तो उन्होंने यह जवाब दिया था कि आप सल्ल० अपनी उम्मत को दुश्वारी में नहीं रखना चाहते थे।[3]

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि : रसूलुल्लाह सल्ल० ने दुश्मन के ख़ौफ़ और सफ़र के बिना ज़ोहर और अस्र को और मग़रिब व इशा को मिलाकर पढ़ा।

अब्दुल्लाह बिन शफ़ीक़ से रिवायत है कि एक बार हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० ने बसरा में अस्र के बाद हमें ख़ुतबा देना शुरू किया यहां तक कि सूरज अस्त हो गया और सितारे चमकने लगे। किसी ने कहा कि नमाज़ (मग़रिब) का समय हो चुका है। आपने फ़रमाया, मुझे सुन्नत न सिखाओ, मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को ज़ोहर व अस्र और मग़रिब व इशा मिलाकर पढ़ते हुए देखा है। अब्दुल्लाह बिन शफ़ीक़ कहते हैं कि मुझे सन्देह पैदा हुआ मैंने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से मालूम किया तो उन्होंने उनकी पुष्टि की।[4]

---

1. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 694।
2. मुस्लिम, अलहज, अध्याय हुज्जतुन्नबी, हदीस 1218।
3. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 705।

शेष अगले पृष्ठ पर

नमाज़े जुमा

जुमा, बेहतरीन दिन :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«خَيْرُ يَوْمٍ طَلَعَتْ عَلَيْهِ الشَّمْسُ يَوْمُ الْجُمُعَةِ فِيهِ خُلِقَ آدَمُ، وَفِيهِ أُدْخِلَ الْجَنَّةَ، وَفِيهِ أُخْرِجَ مِنْهَا وَلاَ تَقُومُ السَّاعَةُ إِلاَّ فِي يَوْمِ الْجُمُعَةِ»

"बेहतरीन दिन, जिस पर सूरज उदय होकर चमके, जुमा का दिन है। इसी दिन आदम अलैहिस्सलाम पैदा हुए, इसी दिन जन्नत में दाख़िल किए गए, इसी दिन जन्नत से (ज़मीन पर) उतारे गए और क़ियामत भी जुमा के दिन क़ायम होगी।"[1]

जुमा की फ़र्ज़ियत :

इरशाद बारी तआला है :

﴿يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوٓاْ إِذَا نُودِيَ لِلصَّلَوٰةِ مِن يَوۡمِ ٱلۡجُمُعَةِ فَٱسۡعَوۡاْ إِلَىٰ ذِكۡرِ ٱللَّهِ وَذَرُواْ ٱلۡبَيۡعَۚ ذَٰلِكُمۡ خَيۡرٞ لَّكُمۡ إِن كُنتُمۡ تَعۡلَمُونَ﴾ (الجمعة ٦٢/٩)

"ऐ ईमान वालो! जब जुमा के दिन नमाज़ (जुमा) के लिए अज़ान दी जाए तो अल्लाह के ज़िक्र (ख़ुतबा और नमाज़) की तरफ़ दौड़ो और (उस समय) कारोबार छोड़ दो। अगर तुम समझो तो यह तुम्हारे हक़ में बहुत बेहतर है।"

---

4. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 706। अर्थात कि अत्यन्त ज़रूरी क़िस्म के हालात में हालत इक़ामत में भी दो नमाज़ें जमा करके पढ़ी जा सकती हैं। फिर भी सख़्त ज़रूरत के बिना ऐसा करना जाइज़ नहीं। जैसे कारोबारी लोगों का आम रवैया है कि वह सुस्ती या कारोबारी व्यस्तता की वजह से दो नमाज़ों को जमा कर लेते हैं। यह सहीह नहीं, बल्कि गुनाह है। हर नमाज़ को उसके समय पर ही पढ़ना ज़रूरी है, सिवाए ज़रूरी हालात के।

1. मुस्लिम, अलजुमा, अध्याय फ़ज़्ल यौमुल जुमा, हदीस 854।

हज़रत अबुल जाअद ज़मरी रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति सुस्ती की वजह से तीन जुमा छोड़ दे तो अल्लाह तआला उसके दिल पर मुहर लगा देता है।"[1]

आप सल्ल० ने फ़रमाया : "लोग जुमा छोड़ने से बाज़ आ जाएं वरना अल्लाह तआला उनके दिलों पर मुहर लगा देगा फिर वे ग़ाफ़िल हो जाएंगे।"[2]

हज़रत इब्ने मसऊद रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने उन लोगों के घरों को जो (अकारण) जुमा से पीछे रह जाते हैं, जला देने का इरादा किया।[3]

मालूम हुआ कि जुमा का छोड़ना बहुत बड़ा गुनाह है, इस पर कड़ी चेतावनी है। अतः हर मुसलमान पर जुमा पढ़ना फ़र्ज़ है। इसमें कदापि सुस्ती नहीं करनी चाहिए। जब ख़तीब मिंबर पर चढ़े, और अज़ान हो जाए तो सारे कारोबार हराम हो जाते हैं।

जुमा के मसाइल :

(1) रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिसका अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान है उस पर जुमा फ़र्ज़ है रोगी, मुसाफ़िर, औरत, नाबालिग़ लड़का और ग़ुलाम जुमा की फ़र्ज़ियत से अपवाद हैं।" (अगर चाहें तो पढ़ लें वरना ज़ोहर की नमाज़ अदा करें।)[4]

(2) नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति जुमा के दिन ख़ूब अच्छी तरह नहाए, और पैदल (मस्जिद में) जाए इमाम के नज़दीक होकर दिल लगाकर ख़ुत्बा सुने और कोई बेकार बात न करे तो उसको हर क़दम पर एक वर्ष के रोज़े का और उसकी रातों के क़याम का सवाब होगा।"[5]

---

1. अबू दाऊद, अबवाबुल जुमा, हदीस 1052, तिर्मिज़ी, हदीस 499। इसे हाकिम (1/280) इब्ने ख़ुज़ैमा, हदीस 185, 1858, इब्ने हिबान (हदीस 553, 554) और इमाम ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

2. मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 865।

3. मुस्लिम, अल-मस्जिदों, हदीस 652।

4. अबू दाऊद, अबवाबुल जुमा, हदीस 1067। इमाम नववी ने इसे सहीह कहा है।

5. तिर्मिज़ी, अल-जुमा, हदीस 495, अबू दाऊद, तहारत, हदीस 345, इब्ने हिबान (559) इमाम हाकिम (1/281-282) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ि० से रिवायत है कि, रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति जुमा को नहाए और जिस क़द्र पाकी हासिल हो सके करे, (मूछें कतराए, नाख़ुन कटाए, ज़ेरे नाफ़ बाल मूंढे और बग़लों के बाल दूर करे, आदि) फिर तेल या अपने घर से ख़ुश्बू लगाए और (जुमा के लिए) मस्जिद को जाए। (वहां) दो आदमियों के बीच रास्ता न बनाए (बल्कि जहां जगह मिले बैठ जाए) फिर अपने मुक़द्दर की नमाज़ पढ़े। फिर दौराने ख़ुतबा ख़ामोश रहे तो उसके पिछले जुमा से लेकर इस जुमा तक के गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया है : "जो व्यक्ति ग़ुस्ल करके जुमा के लिए आता है और ख़ुतबा शुरू होने तक जितना हो सके नवाफ़िल अदा करता है, फिर ख़ुतबाए जुमा, शुरू से आख़िर तक ख़ामोशी के साथ सुनता है तो उसके पिछले जुमा से लेकर इस जुमा तक और अधिक 3 दिन के गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।"[2]

(3) हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० फ़रमाते हैं : मस्जिदे नबवी के बाद जो सबसे पहला जुमा पढ़ा गया वह बहरीन के गांव जुवासा में अब्दुल क़ैस की मस्जिद में था।[3]

इससे साबित हुआ कि गांव में भी जुमा पढ़ना ज़रूरी है अगर लोग गांव में जुमा नहीं पढ़ेंगे तो गुनाहगार होंगे।

असद बिन ज़रारा रज़ि० ने "नक़ीउल ख़ज़मात" के इलाक़े में बनू बयाज़ा की बस्ती "हज़्मुन नबीत" (जो मदीने से एक मील के फ़ासले पर थी) में जुमा क़ायम किया।[4]

---

1. बुख़ारी, अलजुमा, हदीस 883, 910। यह हदीस ख़ुतबाए जुमा से पहले मस्जिद का वह अंदरूनी मंज़र पेश कर रही है जो शरीअत को दरकार है अर्थात जब यह तैयार होकर जाए तो मस्जिद में बहुत से लोग पहले से मौजूद हों जो सुन्नतों से फ़ारिग होकर ख़ुतबा के लिए तैयार बैठे हों (इसी लिए फ़रमाया कि वह लोगों की गर्दनें फलांगकर रास्ता न बनाए) फिर भी इतना समय हो कि यह (आने वाला) सुन्नतें पढ़ ले, बाद में ख़ुतबा शुरू हो, अल्लाह तौफ़ीक़ दे।

2. मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 857।

3. बुख़ारी, अलजुमा, हदीस 892, 4371।

4. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1069, हाकिम (1/281) इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1724) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० मक्का और मदीना के बीच बसने वाले लोगों को जुमा पढ़ते देखते तो आपत्ति न करते।[1]

(4) हुनैन के दिन बारिश हो रही थी तो रसूलुल्लाह सल्ल० ने अपने मुनादी को हुक्म दिया : "आज अपनी, अपनी क़यामगाहों में नमाज़ पढ़ने का एलान कर दो, और वह जुमा का दिन था।"[2]

मालूम हुआ कि बारिश के दिन जुमा की नमाज़ पढ़नी वाजिब नहीं। अर्थात अगर बारिश के दिन जुमा पढ़ लिया जाए तो जाइज़ है और बारिश के कारण अगर जुमा छोड़ कर ज़ोहर पढ़ ली जाए तो जुमा छोड़ने का गुनाह नहीं होगा।

(5) अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि नबी अकरम सल्ल० ने फ़रमाया : "आज के दिन दो ईदें (ईद और जुमा) इकट्ठी हो गई हैं। जो व्यक्ति केवल ईद पढ़ना चाहे तो उसे वह काफ़ी है, लेकिन हम (ईद और जुमा) दोनों पढ़ेंगे।[3]

अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० के ज़माने में जुमा के दिन ईद हुई। तो उन्होंने नमाज़ ईद पढ़ाई जुमा न पढ़ाया। इस घटना की ख़बर इब्ने अब्बास रज़ि० को मिली तो उन्होंने फ़रमाया : उनका यह अमल सुन्नत के मुताबिक़ है।[4]

(6) रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अगर गुंजाइश हो तो जुमा के लिए रोज़ाना इस्तेमाल होने वाले कपड़ों के अलावा कपड़े बनाओ।"[5]

(7) नबी सल्ल० ने दौराने ख़ुत्बा गूट मारकर बैठने से मना फ़रमाया।[6]

---

1. अब्दुर्रज़्ज़ाक़ 3/170, हाफ़िज़ इब्ने हजर ने इसे सहीह कहा है।

2. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1057, 1059, इसे इमाम हाकिम (1/293) इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (1863), इमाम इब्ने हिबान (439-440) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1070-1071, 1073, इसे इमाम हाकिम व हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

4. नसाई, सलातुल ईदैन, हदीस 1593, इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा ने इसे सहीह कहा है।

5. इब्ने माजा, इक़ामतिस्सलात, हदीस 1095-1096, इमाम इब्ने हिबान और इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (1765) ने इसे सहीह कहा है।

6. तिर्मिज़ी, अलजुमा, हदीस 513, इमाम तिर्मिज़ी ने इसे हसन कहा है।

गूट मारना उस तरह बैठने को कहते हैं कि हाथ या कपड़े के साथ रानों को पेट से मिलाकर बैठें। इस तरह बैठने से आम तौर पर नींद आ जाती है फिर आदमी ख़ुतबा नहीं सुन सकता। इसके अलावा इस हालत में आदमी अकसर गिर पड़ता है। (और शर्मगाह के बेहिजाब होने की संभावना होती है।)

(8) जाबिर बिन समरा रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० खड़े होकर ख़ुतबा देते और दो ख़ुत्बों के बीच बैठते। जो व्यक्ति यह कहे कि आप बैठकर ख़ुतबा देते थे उसने ग़लत बयान किया।[1]

(9) हज़रत काअब बिन उजरा रज़ि० से रिवायत है कि वह मस्जिद में दाखिल हुए और अब्दुर्रहमान बिन उम्मुल हकम बैठे हुए ख़ुतबा दे रहे थे। काअब रज़ि० ने कहा : इस ख़बीस की तरफ़ देखो, बैठे हुए ख़ुतबा देता है। यद्यपि अल्लाह तआला फ़रमाता है :

﴿ وَإِذَا رَأَوْا تِجَارَةً أَوْ لَهْوًا انفَضُّوا إِلَيْهَا وَتَرَكُوكَ قَائِمًا ﴾ (الجمعة ٦٢/١١)

"और जब ये लोग कोई सौदा बिकता देखते हैं या कोई तमाशा देखते हैं तो उसकी तरफ़ भाग उठते हैं और आपको (ख़ुत्बे में) खड़ा ही छोड़ देते हैं।"[2]

मालूम हुआ कि बैठकर ख़ुतबा देना ख़िलाफ़े सुन्नत है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने जुमा का ख़ुतबा दिया। आपके सर पर सियाह रंग की पगड़ी थी। उसके दोनों सिरे आप ने कंधों के बीच छोड़े हुए थे।[3]

(10) रसूलुल्लाह सल्ल० ने जुमा के दिन मस्जिद में नमाज़े जुमा से पहले हल्क़ा बनाने से मना फ़रमाया।[4]

अतः जो उलमा ख़ुतबा जुमा से पहले तक़रीर करते हैं उन्हें इस अमल को तर्क कर देना चाहिए।

(11) हज़रत अनस रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० शिद्दत की सर्दी में जुमा की नमाज़ सवेरे पढ़ते थे। और शिद्दत की गर्मी में देर से पढ़ते

---

1. मुस्लिम, अलजुमा, हदीस हदीस 862।
2. मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 864।
3. मुस्लिम, अलहज, हदीस 1359।
4. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1079, तिर्मिज़ी सलात, हदीस 322, वक़ाल : हदीस सन, इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (1816) ने इसे सहीह कहा है।

थे।[1]

(12) हज़रत जाबिर रज़ि० कहते हैं कि जब रसूलुल्लाह सल्ल० ख़ुतबा इरशाद फ़रमाते तो आपकी आंखें सुर्ख़ हो जातीं, आवाज़ बुलन्द होती और जोश में आ जाते थे। मानो कि आप हमें किसी ऐसे लश्कर से डरा रहे हैं जो सुबह या शाम हम पर हमला करने वाला है और फ़रमाते कि : "मैं और क़ियामत साथ साथ इस तरह भेजे गए हैं।" आप अपनी शहादत की और बीच की उंगली को मिलाते।[2]

(13) नबी सल्ल० ने फ़रमाया : (इमाम के साथ) जितनी नमाज़ मिले वह पढ़ो और जो रह जाए उसे पूरा करो।"[3]

इस हदीस की रू से नमाज़े जुमा की दूसरी रकअत के सज्दा या तशह्हुद को पाने वाला (सलाम फिरने के बाद उठकर) दो रकअतें ही पढ़ेगा (चार नहीं) क्योंकि उसकी छूटी हुई नमाज़ दो रकअतें है चार रकअतें नहीं।

ख़ुतबे के दौरान दो रकअतें पढ़कर बैठो :

रसूलुल्लाह सल्ल० जुमा का ख़ुतबा इरशाद फ़रमा रहे थे कि एक व्यक्ति (सलीक ग़ितफ़ानी रज़ि०) मस्जिद में आए। और दो रकअतें पढ़े बिना बैठ गए। नबी सल्ल० ने पूछा : "क्या तुमने दो रकअतें पढ़ी हैं? उसने अर्ज़ किया : "नहीं या रसूलल्लाह!" आप सल्ल० ने हुक्म दिया : "खड़े हो जाओ और दो रकअतें पढ़कर बैठो।"[4]

फिर आपने (सारी उम्मत के लिए) हुक्म दे दिया : "जब तुम में से कोई ऐसे समय मस्जिद में आए कि इमाम ख़ुतबा (जुमा) दे रहा हो तो उसे दो मुख़्तसर सी रकअतें पढ़ लेनी चाहिएं।"[5]

जुमा से पहले नवाफ़िल की तादाद मुक़र्रर नहीं बल्कि नबी सल्ल० ने इजाज़त दी है कि जितने आसानी से पढ़ सकते हैं, पढ़ लें।[6]

---

1. बुख़ारी, अलजुमा, हदीस 906।
2. मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 867।
3. मुस्लिम, अलमस्जिदों, हदीस 602।
4. बुख़ारी, अलजुमा, हदीस 930-931, मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 875।
5. मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 875।
6. सहीह मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 857।

मगर कम से कम तादाद अर्थात दो रकअतें ज़रूरी हैं।

गर्दनें न फलांगो :

हज़रत अब्दुल्लाह बिन बसर रज़ि० से रिवायत है कि जुमा के दिन रसूलुल्लाह सल्ल० ख़ुतबा दे रहे थे कि एक व्यक्ति लोगों की गर्दनें फलांगता हुआ आने लगा तो आपने यह देखकर फ़रमाया, "बैठ जाओ! तुमने (लोगों को) यातना दी और देर लगाई है।"[1]

मालूम हुआ कि नमाज़े जुमा के लिए आने वालों को चाहिए उन्हें जहां जगह मिले वहीं बैठ जाएं।

जुमा में पहले आने वालों को सवाब :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते हैं कि रसूलल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "फ़रिश्ते जुमा के दिन मस्जिद के दरवाज़े पर (सवाब लिखने के लिए) ठहरते हैं और सबसे पहले आने वाले का नाम लिख लेते हैं फिर उसके बाद आने वाले का (इसी तरह क्रमशः लिखते जाते हैं।) जो व्यक्ति नमाज़े जुमा के लिए अव्वल समय मस्जिद में आता है उसको उतना सवाब मिलता है जितना मक्का में क़ुरबानी के लिए ऊंट भेजने वाले को सवाब मिलता है। फिर जो बाद में आता है उसको उतना सवाब मिलता है जितना मक्का में क़ुरबानी के लिए गाय भेजने वाले को सवाब मिलता है। उसके बाद आने वाले को दुंबा भेजने वाले के बराबर। उसके बाद आने वाले को मुर्ग़ी और उसके बाद आने वाले को अंडा सदक़ा करने वाले की तरह अज्र मिलता है। फिर जब इमाम, ख़ुत्बा देने के लिए निकलता है तो फ़रिश्ते दफ़्तर (लिखे हुए पृ०) लपेट लेते हैं और ख़ुतबा सुनने लगते हैं।[2]

---

1. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1118, इमाम हाकिम (1/288) इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1816, 1811), इब्ने हिबान (572) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

2. बुख़ारी, अलजुमा, हदीस 929, 3211, मुस्लिम, हदीस850। इस हदीस में क्रमशः पांच चीज़ों का ज़िक्र है ऊंट, गाय, दुंबा, मुर्ग़ी और अंडा। इसकी सूरत यह होगी कि जुमा के दिन जो लोग पहले पहल मस्जिद में पहुंचेंगे उनको सबसे ज़्यादा सवाब मिलेगा और बाद में आने वालों को क्रमशः उनसे कम सवाब मिलेगा। "अव्वल समय" के शब्द से स्पष्टीकरण की पुष्टि होती है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जुमा के दिन एक घड़ी ऐसी है कि जो मुसलमान उस घड़ी में अल्लाह तआला से भलाई का सवाल करे तो अल्लाह तआला उसको क़ुबूल करता है।"[1]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जुमा की स्वीकृति की घड़ी इमाम के (मिंबर पर) बैठने से लेकर नमाज़ के ख़ात्मे तक है।"[2]

ख़ुतबा जुमा के मसाइल :

(1) रसूलुल्लाह सल्ल० दो ख़ुत्बे इरशाद फ़रमाते, उनके बीच बैठते, ख़ुतबा में क़ुरआन मजीद पढ़ते और लोगों को नसीहत करते। आप सल्ल० की नमाज़ भी औसत दर्जे की और ख़ुतबा भी औसत दर्जे का होता था।[3]

आपने फ़रमाया कि : "आदमी की लम्बी नमाज़ और मुख़्तसर ख़ुतबा अक़्लमन्दी की अलामत है तो नमाज़ (आम नमाज़ों की तरह) लम्बी करो और ख़ुतबा (आम ख़ुत्बों की तरह) संक्षिप्त करो।"[4]

(2) नबी सल्ल० ख़ुतबाए जुमा में सूरह क़ाफ़ की तिलावत फ़रमाते थे।[5]

(3) हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जुमा के ख़ुत्बे में जब तू अपने पास बैठने वाले को (नसीहत के तौर पर) कहे "चुप रहो" तो निःसन्देह तूने भी व्यर्थ (काम) किया।"[6]

इससे साबित हुआ कि दौराने ख़ुतबा (लोगों को आपस में) किसी क़िस्म

---

1. बुख़ारी, अलजुमा, हदीस 935, मुस्लिम, हदीस 852।

2. मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 853। एक क़ौल के मुताबिक़ नमाज़ अस्र से लेकर सूरज अस्त के बीच आती है। कुछ रिवायतों से मालूम होता है कि वह घड़ी बड़ी छोटी सी है उस पर मैंने (जामेअ लाहौर इस्लामिया में दर्स तिर्मिज़ी के दौरान) उस्ताद मोहतरम क़ारी नईमुल हक़ नईम हफ़िज़ुल्लाह से सवाल किया : "इस छोटी सी घड़ी में पूरी दुआ मांगने की नौबत ही नहीं आएगी। केवल (अलहम्दुलिल्लाह) ही कहेंगे और वह ख़त्म हो जाएगी?" उन्होंने फ़रमाया : "अगर किसी की (अलहम्दुलिल्लाह) ही क़ुबूल हो जाए तो बड़ी सआदत की बात है।"

3. मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 866।

4. मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 969।

5. मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 872-873।

6. बुख़ारी, अलजुमा, हदीस 934 व मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 851।

की बात करनी जाइज़ नहीं है। बड़ी ख़ामोशी से ख़ुतबा सुनना चाहिए। (अलबत्ता इमाम और मुक़्तदी ज़रूरत के समय एक दूसरे से मुख़ातिब हो सकते हैं)।

(4) हज़रत इब्ने उमर रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने इससे मना फ़रमाया है कि आदमी अपने भाई को उठाकर उसकी जगह पर बैठे। नाफ़ेअ से पूछा गया कि केवल जुमा में मना है? फ़रमाने लगे जुमा में और उसके अलावा भी।[1]

(5) हज़रत अम्मारा बिन रवेबा रज़ि० से रिवायत है कि उन्होंने बशीर बिन मरवान को जुमा के दिन मिंबर पर दोनों हाथ उठाते हुए देखा, तो फ़रमाया : अल्लाह तआला इन दोनों हाथों को हलाक करे। नबी सल्ल० ख़ुतबा में केवल एक हाथ की शहादत वाली उंगली से इशारा करते थे।[2]

(6) नबी सल्ल० ने खड़े होकर ख़ुतबा दिया और आपके हाथ में असा या कमान थी।[3]

नबी अकरम सल्ल० दो ख़ुत्बे देते और उनके बीच बैठते थे।[4]

ज़ोहर की बिदअत :

कुछ लोग नमाज़े जुमा के अलावा "ज़ोहर एहतियाती" पढ़ते और उसका फ़तवा भी देते हैं, यद्यपि रसूलुल्लाह सल्ल० की ज़ात पाक और आपके असंख्य सहाबा किराम रज़ि० से जुमा के बाद नमाज़ ज़ोहर का पढ़ना कहीं साबित नहीं। हम हैरान हैं कि नमाज़े जुमा अदा कर लेने के बाद (सावधानी हेतु) ज़ोहर के फ़र्ज़ पढ़ने वाले और पढ़ने का हुक्म देने वाले अल्लाह तआला को क्या जवाब देंगे मआज़ल्लाह, क्या रसूलुल्लाह सल्ल० जुमा के बाद ज़ोहर पढ़ना और लोगों को बताना भूल गए थे जो बाद में आने वाले लोगों ने ईजाद करके तक्मीले दीन की है? एहतियाती पढ़ने वालो अल्लाह से डरो। और रसूलुल्लाह सल्ल० से आगे न बढ़ो। नबी अकरम सल्ल० की आवाज़ से अपनी

---

1. बुख़ारी, अलजुमा, हदीस 911, 6269, 6270।
2. मुस्लिम, अलजुमा, हदीस 874, अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1104।
3. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1096। इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा ने इसे सहीह कहा है।
4. बुख़ारी, हदीस 928।

आवाज़ ऊंची न करो।

(मात्र) जुमा के दिन रोज़ा रखना :

नबी सल्ल० ने जुमा का दिन रोज़ा के लिए और जुमा की रात (जमेरात और जुमा की बीच की रात) को इबादत के लिए ख़ास करने से मना फ़रमाया।[1]

जुमा का दिन और दुरूद शरीफ़ की अधिकता :

आप सल्ल० ने फ़रमाया : जुमा के दिन मुझ पर अधिकता से दुरूद भेजो तुम्हारा दुरूद मुझे पहुंचाया जाता है।"[2]

जुमा की अज़ान :

हज़रत साइब बिन यज़ीद रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल०, हज़रत अबूबक्र और उमर रज़ि० के ज़माने में जुमा की अज़ान उस समय होती थी जब इमाम, ख़ुतबा के लिए मिंबर पर बैठता। जब हज़रत उसमान रज़ि० ख़लीफ़ा बने और लोग ज़्यादा हो गए तो ज़ोरा (जगह) पर एक और अज़ान दी जाने लगी। इमाम बुख़ारी रह० फ़रमाते हैं : ज़ोरा मदीना के बाज़ार में एक मक़ाम है।[3]

मस्जिद के अंदर इमाम के ख़ुत्बे से पहले केवल एक अज़ान है। अधिकांश मस्जिदों में उससे पहले दी जाने वाली अज़ान का सुबूत हज़रत उसमान रज़ि० के दौर से भी नहीं है। अतः इससे बचना चाहिए।

---

1. मुस्लिम, अलसियाम, हदीस 144 की ज़ेली हदीस।

2. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1047। इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, अलजुमा, हदीस 912, 913, 915, 916। जुमा के दिन पहली अज़ान की पृ०भूमि यह है कि नबवी काल में मदीना मुनव्वरा और उसकी आबादी की भीड़ कुछ कम थी, लोगों को आसानी से अज़ान का इल्म हो जाता था, उसमानी काल में जब आबादी ज़्यादा हो गई तो तमाम लोग अज़ान की आवाज़ सुन नहीं पाते थे जिसका लाज़मी नतीजा यह निकला कि बढ़ती व्यस्तता का शिकार, कई लोग मस्जिद में समय रहते पहुंचने से विवश हो गए उसका इंतिज़ामी हल यह निकाला गया कि पहले मस्जिद से बाहर बाज़ार

शेष अगले पृष्ठ पर

नमाज़ ईदैन

मसाइल व आदेश :

(1) हज़रत अली रज़ि० फ़रमाते हैं :

«اَلْغُسْلُ... يَوْمَ الْجُمُعَةِ وَيَوْمَ عَرَفَةَ وَيَوْمَ النَّحْرِ وَيَوْمَ الْفِطْرِ»

"जुमा, अरफ़ा, क़ुरबानी और ईदुल फ़ित्र के दिन ग़ुस्ल करना चाहिए।"[1]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० ईद के दिन ईदगाह की तरफ़ निकलने से पहले ग़ुस्ल किया करते थे।[2]

इमाम नववी फ़रमाते हैं कि ईद के दिन ग़ुस्ल के मसले में हज़रत इब्ने उमर रज़ि० के असर से विवेचन और जुमा के ग़ुस्ल पर क़यास किया गया है।

(2) ईदुल फ़ित्र के लिए घर से निकलने से पहले सदक़ा फ़ित्र अदा करना चाहिए।[3]

इससे मालूम हुआ कि ईदगाह में पहुंचकर सदक़तुल फ़ित्र अदा करना सहीह नहीं है, बल्कि उसे नमाज़े ईद के लिए निकलने से पहले अदा करना चाहिए।

(3) ईद अगर जुमा के दिन हो तो नमाज़े ईद पढ़ने के बाद जुमा पढ़ लें

के अंदर, ज़ोरा के मक़ाम पर अज़ान दी जाती, उसके कुछ ही देर बाद मस्जिद नबवी में (दूसरी) अज़ान हो जाती। हज़रत उसमान रज़ि० का यह कार्य बिदअत नहीं है क्योंकि हज़रत उसमान रज़ि० ख़ुल्फ़ाए राशिदीन में से हैं, उनके दौर में मदीना मुनव्वरा में जब पहली बार इस अज़ान की ज़रूरत महसूस की गई तो उन्होंने उसे शरई हुक्म के तौर पर नहीं, मात्र प्रबन्धकीय हल के तौर पर जारी किया था जिसे बाक़ी सहाबा किराम रज़ि० की ख़ामोश पुष्टि हासिल थी और ज़ाहिर है कि जिस चीज़ पर सहाबा किराम रज़ि० की उमूमी सहमति हो जाए वह बिदअत नहीं हुआ करती।

1. बैहेक़ी (3/278) इसकी सनद सहीह है।
2. मोत्ता इमाम मालिक, ईदैन, (1/177) इसकी सनद असहुल सानीद है।
3. बुख़ारी, ज़कात, हदीस 1503 व मुस्लिम, हदीस 986।

या ज़ोहर, इख़्तियार है।[1]

(4) रसूलुल्लाह सल्ल० ने ईदैन की नमाज़, अज़ान और तकबीर के बिना पढ़ी।[2]

जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ि० फ़रमाते हैं : नमाज़े ईद के लिए अज़ान है न तकबीर, पुकारना है न कोई और आवाज़।[3]

(5) आप सल्ल० ने ईदगाह में सिवाए ईद की दो रकअतों के न पहले नफ़्ल पढ़े न बाद में।[4]

(6) नबी सल्ल० ईदुल फ़ित्र में कुछ खाकर नमाज़ को निकलते और ईदुल अज़्हा में नमाज़ पढ़कर खाते।[5]

रसूलुल्लाह सल्ल० ईदुल फ़ित्र के दिन ताक़ खजूरें खाकर ईदगाह जाया करते थे।[6]

(7) हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० जब शहर जाकर ईद की नमाज़ जमाअत से अदा न कर सकते तो अपने ग़ुलामों और बच्चों को जमा करते और अपने ग़ुलाम अब्दुल्लाह बिन अबी उतबा को शहर वालों की नमाज़ की तरह नमाज़ पढ़ाने का हुक्म देते।[7]

(8) रसूलुल्लाह सल्ल० के पास एक सवार आया उसने गवाही दी कि उन्होंने कल चांद देखा था तो आपने हमें रोज़ा इफ़्तार करने का हुक्म दिया और दूसरे दिन ईद की नमाज़ पढ़ी, क्योंकि रोयते हिलाल की ख़बर इतनी देर में पहुंची कि नमाज़े ईद का समय निकल चुका था।[8]

---

1. इब्ने माजा, इक़ामतिस्सलात, हदीस 1310, अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1070। इसे इब्ने मदनी, इमाम हाकिम, इब्ने ख़ुज़ैमा (1464) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

2. मुस्लिम, ईदैन, हदीस 885।

3. मुस्लिम, सलातुल ईदैन, हदीस 886।

4. बुख़ारी, ईदैन, हदीस 964, 989 व मुस्लिम, सलातुल ईदैन, हदीस 884।

5. तिर्मिज़ी, ईदैन, हदीस 541, इब्ने माजा, हदीस 1756, इब्ने हिबान (593), इब्ने ख़ुज़ैमा 1426) ईब्नुल क़तान, हाकिम (1/294) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा।

6. बुख़ारी, ईदैन, हदीस 953।

7. बुख़ारी, ईदैन, बैहेक़ी, 3/305।

8. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1157, इमाम नसाई, इब्ने हज़म और बैहेक़ी ने इसे सहीह कहा है।

(9) ईद के दिन मस्जिद में सहाबा ने जंगी खेलों का तमाशा किया।[1]

(10) अब्दुल्लाह बिन बसर रज़ि० ईदुल फ़ित्र के दिन नमाज़ के लिए गए। इमाम ने नमाज़ में देर कर दी तो वह फ़रमाने लगे : "रसूलुल्लाह सल्ल० के ज़माने में हम इस समय नमाज़ से फ़ारिग हो चुके होते थे, रावी कहता है कि यह चाश्त का समय था।[2]

(11) ईदगाह में जिस रास्ते से जाएं, वापसी पर रास्ता तब्दील करें।[3]

ईदगाह में औरतें :

(12) हज़रत उम्मे अतिया रज़ि० कहती हैं कि हमें हुक्म दिया गया कि हम (सब औरतों को यहां तक कि) हैज़ वालियों और पर्दा वालियों को (भी) दोनों ईदों में (घरों से) निकालें ताकि वे (सब) मुसलमानों की जमाअत (नमाज़) और उनकी दुआ में हाज़िर हों। और फ़रमाया हैज़ वालियां नमाज़ की जगह से अलग रहें। (अर्थात वे नमाज़ न पढ़ें) लेकिन मुसलमानों की दुआओं और तकबीरों में शामिल रहें। ताकि अल्लाह की रहमत और बख़्शिश से हिस्सा पाएं। एक औरत ने अर्ज़ किया कि अगर हममें से किसी के पास चादर न हो (तो फिर वह कैसे ईदगाह में जाए?) फ़रमाया : "उसको उसकी साथ वाली औरत चादर उढ़ा दे। (अर्थात किसी दूसरी औरत से चादर मांग कर चले।)"[4]

रसूलुल्लाह सल्ल० सहाबा और सहाबियात को (यहां तक कि हैज़ वाली औरतों को भी) साथ लेकर ईदगाह की तरफ़ जाते। आपकी ईदगाह मस्जिदे नबवी से हज़ार फिट (ज़राअ) के फ़ासले पर थी। (फ़त्हुल बारी) यह ईदगाह बक़ीअ की तरफ़ थी।[5]

(13) रसूलुल्लाह सल्ल० और हज़रत अबूबक्र व उमर रज़ि० ईदैन की नमाज़ ख़ुत्बे से पहले पढ़ते थे।[6]

---

1. बुख़ारी, सलात, हदीस 454-455, मुस्लिम, ईदैन, हदीस 892।

2. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1135, इसे हाकिम और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, ईदैन, हदीस 986।

4. बुख़ारी, हैज़, हदीस 324, 351, 971, 974 व मुस्लिम, सलातुल ईदैन, हदीस 890।

5. बुख़ारी फ़तह, 2/465, हदीस 976, किताबुल ईदैन।

6. बुख़ारी, ईदैन, हदीस 962, 963 व मुस्लिम, सलातुल ईदैन, हदीस 884।

ईद की तकबीरें :

हाफ़िज इब्ने हजर रह० तकबीरों के पढ़ने के बारे में फ़रमाते हैं : "रसूलुल्लाह सल्ल० से इस बारे में कोई हदीस साबित नहीं। सहाबा रज़ि० से जो सहीह तरीन रिवायत मरवी है, वह हज़रत अली रज़ि० का कथन है।"

(1) हज़रत अली रज़ि० अरफ़ा के दिन (9 ज़िल हिज्जा) की फ़ज्र से लेकर तेरह ज़िल हिज्जा की अस्र तक तकबीरात कहते।[1]

(2) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० ईदुल फ़ित्र के दिन घर से ईदगाह तक तकबीरात कहते।[2]

(3) इमाम ज़ोहरी कहते हैं कि लोग ईद के दिन अपने घरों से ईदगाह तक तकबीरात कहते, फिर इमाम के साथ तकबीरात कहते।[3]

(4) अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि० 9 ज़िल हिज्जा नमाज़े फ़ज्र से लेकर 13 ज़िल हिज्जा नमाज़े अस्र तक इन शब्दों में तकबीरात कहते :

«اَللّٰهُ أَكْبَرُ كَبِيْرًا، اَللّٰهُ أَكْبَرُ كَبِيْرًا، اَللّٰهُ أَكْبَرُ وَأَجَلُّ، اَللّٰهُ أَكْبَرُ وَلِلّٰهِ الْحَمْدُ»

"अल्लाह सबसे बड़ा है, बहुत बड़ा, अल्लाह सबसे बड़ा है, बहुत बड़ा, अल्लाह सबसे बड़ा है और सबसे ज़्यादा साहिब हलाल है, अल्लाह सबसे बड़ा है, अल्लाह ही के लिए सारी प्रशंसा हैं"[4]

(5) हज़रत सलमान रज़ि० यूं तकबीरात कहते[5] :

«اَللّٰهُ أَكْبَرُ، اَللّٰهُ أَكْبَرُ، اَللّٰهُ أَكْبَرُ كَبِيْرًا»

---

1. बैहेक़ी (3/279) इसे हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा।

2. बैहेक़ी (3/279) इमाम बैहेक़ी फ़रमाते हैं कि हदीस इब्ने उमर रज़ि० मौक़ूफ़न महफ़ूज़ है।

3. लेखक इब्ने अबी शीबा, 1/489।

4. इब्ने अबी शीबा, 1/489-490, इसे इमाम हाकिम (1/299) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

5. बैहेक़ी (3/316) हाफ़िज़ इब्ने हजर कहते हैं कि इस बारे में सहीह तरीन कथन हज़रत सलमान रज़ि० का है।

रसूलुल्लाह सल्ल० से तकबीर के शब्दों की स्पष्टता दारे क़ुतनी में यूं आई है :

«اَللّٰهُ أَكْبَرُ، اَللّٰهُ أَكْبَرُ لاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللّٰهُ وَاللّٰهُ أَكْبَرُ، اللّٰهُ أَكْبَرُ وَلِلّٰهِ الْحَمْدُ»

ईद की नमाज़ का तरीक़ा :

रसूलुल्लाह सल्ल० ईदुल फ़ित्र और ईदुल अज़्हा के दिन ईदगाह जाते, सबसे पहले नमाज़ पढ़ते, फिर ख़ुतबा देते जबकि लोग पंक्तियों में बैठे रहते। ख़ुतबा में लोगों को नसीहत, वसीयत करते और हुक्म देते फिर वापस लौटते।[1]

वुज़ू करके क़िब्ला की तरफ़ मुंह करके अल्लाहु अकबर कहते हुए रफ़अ यदैन करें।[2]

फिर सीने पर हाथ बांध कर दुआए इफ़्तताह पढ़ें।

फिर दुआए इफ़्तताह ख़त्म करके क़िरअत से पहले (ठहर ठहर कर) सात तकबीरें कहें।[3]

हर तकबीर पर रफ़अ यदैन करें और हर तकबीर के बाद हाथ बांधें। फिर इमाम ऊंची आवाज़ से और मुक़तदी आहिस्ता अलहम्दु शरीफ़ पढ़ें, फिर इमाम ऊंची आवाज़ से क़िरअत पढ़े, और मुक़तदी चुप चाप सुनें।

नबी सल्ल० ने ईदुल अज़्हा और ईदुल फ़ित्र में सूरह (क़ाफ़ वल क़ुरआनिल मजीद) और (इक़्त-र-ब तिस्साअतु वन शक़्क़ल क़मर) पढ़ी। एक और रिवायत में (सब्बिहिस-म रब्बिकल आला) और (हल अता-क) पढ़ना भी आया है।[4]

बेहतर है कि सूरह फ़ातिहा के बाद मसनून क़िरअत की जाए, जब पहली रकअत पढ़कर आप दूसरी रकअत के लिए खड़े हों, और क़याम की

---

1. बुख़ारी, ईदैन, हदीस 956 व मुस्लिम, सलातुल ईदैन, हदीस 889।
2. बुख़ारी, सिफ़तुस्सलात, हदीस 738।
3. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1149, 1152, इसे इमाम अहमद और अली बिन मदीनी ने सहीह कहा है।
4. मुस्लिम, सलातुल ईदैन, हदीस 891, वलजुमा, हदीस 878।

तकबीर कह चुकें तो क़िरअत शुरू करने से पहले पांच तकबीरें कहें।[1]

इन तकबीरों में भी रफ़अ यदैन करें। और हर तकबीर के बाद हाथ बांधें। इमाम बैहेक़ी रह० ने नमाज़ ईदैन की ज़ायद तकबीरात में रफ़अ यदैन करने पर जिस हदीस से विवेचन किया है उसमें हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० हर उस तकबीर में हाथ उठाते जो रुकूअ में जाने से पहले कहते, यहां तक कि आपकी नमाज़ मुकम्मल हो जाती।[2]

फिर दो रकअत पढ़कर सलाम फेर दें।

रसूलुल्लाह सल्ल०, हज़रत अबूबक्र व उमर व उसमान रज़ि० पहले नमाज़ पढ़ते फिर ख़ुतबा देते।[3]

ईदैन का ख़ुतबा मिंबर पर न पढ़ें। बुख़ारी (ईदैन, हदीस 956) और मुस्लिम (सलातुल ईदैन, हदीस 889) में अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० की हदीस से मालूम होता है कि ईदगाह में मिंबर का आयोजन मरवान बिन हकम के कार्य काल में किया गया।

अबू दाऊदु और इब्ने माजा में है कि एक व्यक्ति ने मरवान के इस क़ार्य पर आपत्ति करते हुए कहा "तुमने ईद के रोज़ मिंबर लाकर सुन्नत की मुख़ालिफ़त की क्योंकि इस रोज़ इसे नहीं लाया जाता था। इसकी असल सहीह मुस्लिम (अल ईदैन, हदीस 989) में है।"[4]

हज़रत आइशा रज़ि० के पास बच्चियां दफ़ बजाकर अच्छे अशआर गा रही थीं। अबूबक्र रज़ि० ने उन्हें मना किया। नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "ऐ अबूबक्र! इन्हें कुछ न कह बेशक आज ईद का दिन है। निःसन्देह हर क़ौम

---

1. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1149, 1152, इमाम अहमद ने इसे सहीह कहा है।

2. अबू दाऊद, इस्तफ़ताहुस्सलात, हदीस 722, इब्नुल जारूद ने इसे सहीह कहा, मुसनद अहमद (2/133-134) और दारे क़ुतनी (1/289)।

3. मुस्लिम, सलातुल ईदैन, हदीस 884।

4. अबू दाऊद, अलजुमा, हदीस 1140, इब्ने माजा, इक़ामतिस्सलात, हदीस 1275।

की एक ईद होती है और आज हमारी ईद है।"[1]

ईदुल अज़्हा के दिन नमाज़े ईद पढ़कर क़ुरबानी करनी चाहिए :

हज़रत बराअ रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया "जिस व्यक्ति ने नमाज़ के बाद क़ुरबानी की उसकी क़ुरबानी भी हो गई और उसने मुसलमानों के तरीक़े को भी अपना लिया और जिसने नमाज़ से पहले क़ुरबानी की उसकी क़ुरबानी नहीं होगी वह मात्र गोश्त की एक बकरी है जो उसने अपने घर वालों के लिए ज़ब्ह की है।"[2]

आप सल्ल० ने फ़रमाया : "जिस व्यक्ति ने नमाज़े ईद से पहले क़ुरबानी की वह नमाज़ के बाद दूसरी क़ुरबानी करे।"[3]

---

1. बुख़ारी, अलईदैन, हदीस 952, 949। इस हदीस से मालूम हुआ कि अगर पढ़ने वाली छोटी बच्चियां हों, संगीत के संयत्रों में से केवल दफ़ (या उससे कमतर कोई संयत्र) हो और अशआर ख़िलाफ़े शरीअत न हों और ईद का मौक़ा हो तो ऐसे अशआर पढ़ने या सुनने में कोई हरज नहीं है लेकिन स्वार्थी गवैयों ने इस हदीस शरीफ़ से अपना उल्लू सीधा करने में कोई कसर नहीं उठा रखी अतएव उन्होंने बच्चियों से हर उमर की पेशावर गाने वाली साबित कर दी, दफ़ से संगीत के नये संयत्र जाइज़ क़रार दिए, अच्छे अशआर से गानों का जवाज़ निकाला गया और ईद के दिन से "रूह की ग़िज़ाइयत" ढूंढ निकाली और यह न सोचा कि अल्लाह ख़ालिक़ व मालिक है उसने अपने बन्दों के लिए जायज़ होने की जो हद चाही मुक़र्रर कर दी और उसके उल्लंघन को हराम कर दिया।
2. बुख़ारी, ईदैन, हदीस 951, 955, 956, 968 व मुस्लिम, हदीस 1960।
3. बुख़ारी, ईदैन, हदीस 984, 985 व मुस्लिम, हदीस 1961।

नमाज़े कसूफ़ :
सूरज और चांद ग्रहण की नमाज़

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«إِنَّ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ لاَ يَنْكَسِفَانِ لِمَوْتِ أَحَدٍ مِنَ النَّاسِ، وَلٰكِنَّهُمَا آيَتَانِ مِنْ آيَاتِ اللهِ، فَإِذَا رَأَيْتُمُوهَا فَقُومُوا فَصَلُّوا»

"सूरज और चांद किसी के मरने से ग्रहण नहीं होते। यह तो अल्लाह की क़ुदरत की दो निशानियां हैं जब उन्हें ग्रहण होते देखो तो नमाज़ के लिए उठ खड़े हो।"[1]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "चांद और सूरज ग्रहण क़ुदरत की निशानियां है। किसी के मरने, जीने (या किसी और वजह) से प्रकट नहीं होते। बल्कि अल्लाह (अपने) बन्दों को सचेत करने के लिए प्रकट करता है। अगर तुम ऐसे चिन्ह देखो तो जल्द से जल्द दुआ, इस्तग़फ़ार, और अल्लाह की याद की तरफ़ पलटो।"[2]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से रिवायत है कि जब सूरज ग्रहण हुआ तो आप सल्ल० ने एक व्यक्ति को यह एलान करने का हुक्म फ़रमाया :

((إِنَّ الصَّلاَةَ جَامِعَةٌ))

---

1. बुख़ारी, कसूफ़, हदीस 1041, 1057 व मुस्लिम, कसूफ़, हदीस 901, 904, 907। जाहिलों का अक़ीदा था कि सूरज या चांद उसी समय ग्रहण होते हैं जब कोई अहम व्यक्ति पैदा हो या मर जाए या दुनिया में कोई महत्वपूर्ण घटना घटित हो। नबी अकरम सल्ल० ने इसी असत्य अक़ीदे को नकारा।

2. बुख़ारी, कसूफ़, हदीस 1059 व मुस्लिम, कसूफ़, हदीस 912। अर्थात सूरज या चांद के ग्रहण होने का संबंध कायनात की घटनाओं से नहीं बल्कि सीधे अल्लाह तआला की मन्शा और क़ुदरत से है और वह अल्लाह जो तुम्हारे सामने उन्हें प्रकाश रहित कर सकता है वह क़ियामत के क़रीब भी उन्हें बेनूर करके लपेट देने पर समर्थ है। अतः उससे डरते रहो।

"नमाज़ (तुम्हें) जमा करने वाली है" (तुम्हें बुला रही है।)[1]

सूरज ग्रहण की नमाज़ का तरीक़ा :

अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि नबी सल्ल० के ज़माने में सूरज ग्रहण हुआ। आपने जमाअत के साथ दो रकअतें नमाज़ पढ़ी। आपने सूरह बक़रा तिलावत करने की मात्रा के क़रीब लम्बा क़याम किया फिर लम्बा रुकूअ किया। फिर सर उठाकर लम्बा क़याम किया।[2] फिर पहले रुकूअ से कम लम्बा रुकूअ किया। फिर (क़ौमा करके) दो सज्दे किए। फिर खड़े होकर लम्बा क़याम किया, फिर दो रुकूअ किए फिर दो सज्दे करके और तशह्हुद पढ़कर सलाम फेरा, फिर ख़ुतबा दिया जिसमें अल्लाह की प्रशंसा और स्तुति की और फ़रमाया : "सूरज और चांद अल्लाह की निशानियों में से दो निशानियां हैं। किसी के मरने या पैदा होने से उनको ग्रहण नहीं लगता। जब तुम ग्रहण देखो तो अल्लाह से दुआ करो, तकबीर कहो, नमाज़ पढ़ो और सदक़ा करो। (दौराने नमाज़) मेंने जन्नत देखी। अगर मैं उसमें से एक अंगूर का ख़ोशा ले लेता तो तुम रहती दुनिया तक उसमें से खाते और मैंने जहन्नम (भी) देखी, उससे बढ़कर हौलनाक मंज़र मेंने (कभी) नहीं देखा। (और) मैंने जहन्नम में ज़्यादा तादाद औरतों की देखी क्योंकि वे पतियों की कुफ़राने नेमत करती हैं। अगर तू एक मुद्दत तक उनके साथ नेकी करता रहे फिर उनकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कोई काम करे तो कहती हैं कि मैंने तुझसे कभी भलाई नहीं देखी।"[3]

सूरज व चांद के ग्रहण पर आप सल्ल० घबरा उठते और नमाज़ पढ़ते। हज़रत असमा रज़ि० बयान करती हैं कि आपके ज़माने में (एक बार) सूरज ग्रहण हुआ तो आप घबरा गए और घबराहट में घर वालों में से किसी का

---

1. बुख़ारी, कसूफ़, हदीस 1045, 1051 व मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 910।

2. रुकूअ के बाद क़ौमा करने की बजाए दोबारा क़िरअत शुरू कर देना एक ही रकअत का क्रम है अतः इस मौक़े पर नए सिरे से फ़ातिहा नहीं पढ़ी जाएगी।

3. बुख़ारी, कसूफ़, हदीस 1052 व मुस्लिम, कसूफ़, हदीस 907। इससे मालूम हुआ कि मोहसिन की एहसान फ़रामोशी गुनाहे कबीरा है। जब किसी बन्दे की एहसान फ़रामोशी कबीरा गुनाह है तो जो अल्लाह की एहसान फ़रामोशी करता है उसका गुनाह कितना ख़तरनाक होगा? अल्लाह हम सबको हिदायत दे। आमीन

कुर्ता ले लिया। बाद में चादर मुबारक आपको पहुंचाई गई। असमा रज़ि० भी मस्जिद में गईं और औरतों की पंक्ति में खड़ी हो गईं। आपने इतना लम्बा क़याम किया कि उनकी नीयत बैठने की हो गई लेकिन उन्होंने इधर उधर से कमज़ोर औरतों को खड़े देखा तो वह भी खड़ी रहें।[1]

हज़रत जाबिर रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० के ज़माने में एक सख़्त गर्मी के दिन सूरज ग्रहण हुआ, आपने सहाबा किराम रज़ि० को साथ लेकर नमाज़ पढ़ी। आपने इतना लम्बा क़याम किया कि लोग गिरने लगे।[2]

हज़रत असमा रज़ि० कहती हैं कि (एक बार सूरज ग्रहण की नमाज़ में) आपने इतना लम्बा क़याम किया कि मुझे (औरतों की पंक्ति में खड़े खड़े) कमज़ोरी आ गयी। मैंने बराबर में अपनी मश्क से पानी लेकर सर पर डालना शुरू किया (फिर जल्द ही दोबारा क़याम नमाज़ में शामिल हो गई)।[3]

सोचा आपने! कि नबी सल्ल० कितना शौक़ व लगन से सूरज ग्रहण की नमाज़ पढ़ते थे, लेकिन हमने कभी इस नमाज़ की तरफ़ ध्यान नहीं किया। रसूलुल्लाह सल्ल० के पीछे औरतें भी सूरज ग्रहण की नमाज़ पढ़ती थीं। हमें भी चाहिए कि हम मस्जिद में सूरज ग्रहण की नमाज़ बाजमाअत का आयोजन करें और हमारी औरतें भी ज़रूर मस्जिद में जाकर नमाज़ में शामिल हों।

---

1. मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 906। आपका घबराना अल्लाह के डर की वजह से था। जब आप अल्लाह के प्यारे नबी होकर घबरा उठते थे तो अफ़सोस है उन उम्मतियों पर जो हज़ारों गुनाहों के बावजूद ऐसे मौक़े पर अल्लाह की तरफ़ नहीं पलटते।

2. मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 904।

3. बुख़ारी, अलजुमा, हदीस 922, 1093 व मुस्लिम, हदीस 905।

नमाज़ इस्तिसक़ा

अगर अकाल हो, वर्षा न बरसे तो उस समय मुसलमानों को चाहिए कि एक दिन तय करके सूरज निकलते ही पुराने कपड़े पहनकर विनम्रता और रोते हुए आबादी से बाहर किसी खुली जगह में निकलें और मिंबर भी रखा जाए। इब्ने अब्बास रज़ि० फ़रमाते हैं :

«خَرَجَ رَسُوْلُ اللهِ ﷺ مُتَبَذِّلاً مُتَوَاضِعًا مُتَضَرِّعًا حَتّٰى أَتَى الْمُصَلّٰى»

"रसूलुल्लाह सल्ल० पुराने कपड़े पहने, विनम्रता और आहिस्तगी से चलते हुए, विनय और रोते गिड़गिड़ाते हुए निकले और नमाज़ (इस्तिसक़ा) की जगह पहुंचे।[1]

हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है कि सहाबा किराम रज़ि० ने आप सल्ल० से अकाल की शिकायत की तो आपने ईदगाह में मिंबर रखने का हुक्म दिया। जब सूरज का किनारा प्रकट हुआ तो आप निकले और मिंबर पर बैठे, अल्लाह की बड़ाई और हम्द बयान की, फिर फ़रमाया : "तुमने अपने इलाक़ों में अकाल और समय पर बारिश न होने की शिकायत की है, जबकि अल्लाह तआला की तरफ़ से तुमको हुक्म है कि तुम उसको पुकारो और उसने तुम्हारी दुआ क़ुबूल करने का वायदा किया है।" फिर फ़रमाया :

«اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ – اَلرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ – مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ – لَا إِلٰهَ إِلَّا اللهُ يَفْعَلُ مَا يُرِيْدُ – اَللّٰهُمَّ أَنْتَ اللهُ لَا إِلٰهَ إِلَّا أَنْتَ الْغَنِيُّ وَنَحْنُ الْفُقَرَآءُ، أَنْزِلْ عَلَيْنَا الْغَيْثَ وَاجْعَلْ مَا أَنْزَلْتَ لَنَا قُوَّةً وَّبَلَاغًا إِلٰى حِيْنٍ»

"सब प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो तमाम जहानों का परवरदिगार है, बहुत दया करने वाला बड़ा मेहरबान है। बदले के दिन का मालिक है। जो

---

1. अबू दाऊद, सलातुल इस्तिसक़ा, हदीस 1165, तिर्मिज़ी, अलजुमा, हदीस 557। इमाम तिर्मिज़ी, इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1405,, 1408, 1419) इमाम इब्ने हिबान (हदीस 603) इमाम हाकिम (1/326) और इमाम नववी ने इसे सहीह कहा है।

चाहता है वह करता है। ऐ अल्लाह तू (सच्चा) उपास्य है, तेरे सिवा कोई उपास्य (वास्तविक) नहीं। तू दाता और बेपरवा है और हम (तेरे) मोहताज और फ़क़ीर (बन्दे) हैं हम पर बारिश बरसा और जो बारिश तू नाज़िल फ़रमाए उसे हमारे लिए एक मुद्दत तक ताक़त और (उद्देश्य तक) पहुंचने का साधन वना।"[1]

हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़े इस्तिसक़ा के अलावा किसी दुआ में अपने दोनों हाथ नहीं उठाते थे। आपने दोनों हाथ उठाए, हाथों को लम्बा किया, यहां तक कि बग़लें दिखाई दीं।[2]

हाथों को सर से ऊंचा न ले जाएं।[3]

आप सल्ल० के हाथों की पुश्त आसमान की तरफ़ थी।[4] और खड़े होकर दुआएं करते रहें।

फिर इमाम लोगों की तरफ़ पीठ करके क़िब्ला रुख़ हो जाए। (और हाथ उठाए रखे) और निम्न दुआएं बड़ी विनम्रता से रो रोकर पढ़े। और सब लोग भी बड़े विनय से गिड़गिड़ाकर हाथों को उलटा करके उठाएं और दुआ मांगें। दुआएं ये हैं :

---

1. अबू दाऊद, सलातुल इस्तिसक़ा, हदीस 1173, इमाम हाकिम (1/268) इब्ने हिबान (हदीस 604) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है। इससे मालूम हुआ कि सय्यदुल मुरसलीन सल्ल० और उनके सहाबा रज़ि० भी अपना दानी और दाता केवल अल्लाह ही को समझते थे, वह उसी के दर के मोहताज, उसी से डरने वाले और सीधे उसी से दुआएं मांगते रहे। क़ुरआन मजीद ने भी इसी अक़ीदे की शिक्षा दी है। (फ़ातिर 35/14-15) अतः हम गुनाहगारों को भी चाहिए कि किताब व सुन्नत के मुताबिक़ केवल अल्लाह ही को अपना दानी और दाता मानें और उससे सीधे दुआएं मांगें। यही नबी अकरम सल्ल० से सच्ची मुहब्बत और उनके अनुसरण का मतलब है।

2. बुख़ारी, इस्तिसक़ा, हदीस 1031 व मुस्लिम, सलातुल इस्तिसक़ा, हदीस 895-896। इसका मतलब यह है कि जितना बुलन्द हाथ आप सल्ल० दुआ इस्तिसक़ा में उठाते थे उतने किसी और दुआ में नहीं उठाते थे, विवरण के लिए देखिए "मिंहाज फ़ी शरह सहीह मुस्लिम बिन हिजाज" अज़ इमाम नववी रह०।

3. अबू दाऊद, सलातुल इस्तिसक़ा, हदीस 1168, इमाम इब्ने हिबान (हदीस 601-602) ने इसे सहीह कहा है।

4. मुस्लिम, सलातुल इस्तिसक़ा, हदीस 895।

«اَللّٰهُمَّ اسْقِنَا، اَللّٰهُمَّ اسْقِنَا، اَللّٰهُمَّ اسْقِنَا»

"ऐ अल्लाह! हमें पानी पिला, ऐ अल्लाह! हमें पानी पिला, ऐ अल्लाह! हमें पानी पिला।"[1]

«اَللّٰهُمَّ اسْقِنَا غَيْثًا مُغِيثًا مَرِيئًا مَرِيعًا نَافِعًا غَيْرَ ضَارٍّ عَاجِلًا غَيْرَ آجِلٍ»

"ऐ हमारे अल्लाह! हमें पानी पिला, हम पर ऐसी बारिश कर जो हमारी प्यास बुझा दे। हल्की फुवारें बनकर अनाज उगाने वाली, लाभ देने वाली हो न कि हानि पहुंचाने वाली, जल्द आने वाली हो न कि देर लगाने वाली।"[2]

"ऐ अल्लाह! अपने बन्दों और जानवरों को सैराब कर, अपनी रहमत को फैला और अपने मुर्दा शहरों को ज़िंदा कर दे।"[3]

«اَللّٰهُمَّ اسْقِ عِبَادَكَ وَبَهَائِمَكَ وَانْشُرْ رَحْمَتَكَ وَأَحْيِ بَلَدَكَ الْمَيِّتَ»

सलातुल इस्तिसक़ा में एक अहम मसला चादर का पलटना है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ैद रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० इस्तिसक़ा के लिए निकले, आपने अपनी पीठ लोगों की तरफ़ की ओर क़िब्ला रुख़ होकर दुआ करने लगे फिर अपनी चादर को पलटा।[4]

आप सल्ल० पर सियाह चादर थी आपने इसका निचला हिस्सा ऊपर लाना चाहा मगर मुश्किल पेश आई तो आपने उसे अपने कंधों पर ही उलट दिया।[5]

चादर पलटते समय चादर का अंदर का हिस्सा बाहर किया जाए और दायां किनारा बाएं कंधे पर और बायां किनारा दाएं कंधे पर डाल लिया जाए।

---

1. बुख़ारी, इस्तिसक़ा, अध्याय 5 व 8, हदीस 1013।

2. अबू दाऊद, सलातुल इस्तिसक़ा, हदीस 1169, इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (1416) इमाम हाकिम (1/327) और ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. अबू दाऊद, हवाला साबिक़ (हदीस 1176) इसकी सनद हसन है।

4. बुख़ारी, इस्तिसक़ा, हदीस 1025 व मुस्लिम, सलातुल इस्तिसक़ा, हदीस 894।

5. अबू दाऊद, सलातुल इस्तिसक़ा, हदीस 1164, इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (1416) और इमाम इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है।

इमाम के साथ लोग भी अपनी चादरें उलटें।[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० लोगों को लेकर बारिश तलब करने के लिए ईदगाह की तरफ़ निकले और उनको दो रकअत नमाज़ पढ़ाई और उसमें बुलन्द आवाज़ से क़िरअत की।[2]

नबी अकरम सल्ल० ने नमाज़े ईद की तरह लोगों को दो रकअतें नमाज़ इस्तिसक़ा पढ़ाई।[3]

नमाज़ पढ़ाकर इमाम ख़ुतबा दे। (अर्थात नमाज़े ईद की तरह)[4]

उलमा का अमल इसी पर है मगर ख़ुतबा नमाज़ से पहले भी जाइज़ है।[5]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन यज़ीद अंसारी रज़ि० ने नमाज़ इस्तिसक़ा बिना अज़ान और इक़ामत के पढ़ाई।[6]

इब्ने बताल ने कहा कि उलमा की इस बात पर सहमति है कि नमाज़ इस्तिसक़ा में अज़ान और इक़ामत नहीं है।

---

1. मुस्नद अहमद (4/21) इब्ने दक़ीक़ुल अीद ने इसे सहीह कहा है। उलटे हाथों से दुआ करना और चादर पलटना असल में फ़ेअली दुआ है कि ऐ मौला करीम! इस चादर और हाथों की तरह हमारे हालात पलट दे और अकाल को सम्पन्नता से बदल दे निश्चय ही इस सारी कायनात के सारे हालात केवल तेरे ही इख़्तियार में है।

2. बुख़ारी, इस्तिसक़ा, हदीस 1024, 1025, 1005।

3. तिर्मिज़ी, अलजुमा, हदीस 557 व अबू दाऊद, सलातुल इस्तिसक़ा, हदीस 1165। इसे इमाम तिर्मिज़ी, इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (1405) और इमाम नववी ने सहीह कहा है।

4. मुसनद इमाम अहमद 4/41।

5. इब्ने ख़ुज़ैमा, हदीस 1407।

6. बुख़ारी, इस्तिसक़ा, हदीस 1022

नमाज़ इशराक़

ज़ुहा के मायना हैं दिन का चढ़ना और इशराक़ के मायना हैं सूरज का उदय। अतः जब सूरज उदय होकर एक बांस के बराबर ऊंचा हो जाए तो उस समय नवाफ़िल का पढ़ना नमाज़े इशराक़ कहलाता है। ज़ैद बिन अरक़म रज़ि० से मरवी हदीस में इस नमाज़ को सलातुल अव्वाबीन भी कहा गया है। (मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन हदीस 748)

(नोट) : मग़रिब और इशा के बीच पढ़ी जाने वाली नमाज़ को जिस रिवायत में सलातुल अव्वाबीन कहा गया है, वह मुरसल है (अर्थात ज़ईफ़ है)।

हज़रत अबूज़र रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«يُصْبِحُ عَلَى كُلِّ سُلَامَى مِنْ أَحَدِكُمْ صَدَقَةٌ، فَكُلُّ تَسْبِيحَةٍ صَدَقَةٌ وَكُلُّ تَحْمِيدَةٍ صَدَقَةٌ، وَكُلُّ تَهْلِيلَةٍ صَدَقَةٌ وَكُلُّ تَكْبِيرَةٍ صَدَقَةٌ وَأَمْرٌ بِالْمَعْرُوفِ صَدَقَةٌ، وَنَهْيٌ عَنِ الْمُنْكَرِ صَدَقَةٌ، وَيُجْزِىءُ مِنْ ذَلِكَ رَكْعَتَانِ يَرْكَعُهُمَا مِنَ الضُّحَى»

"हर आदमी पर लाज़िम है कि अपने (शरीर के) हर बन्द (जोड़) के बदले सदक़ा ख़ैरात करे। तो हर तस्बीह सदक़ा हे, हर तहमीद सदक़ा है, हर तहलील सदक़ा है, हर तकबीर सदक़ा है, अम्र बिन मारूफ़ सदक़ा है और नह्य अनिल मुंकर सदक़ा है। और इन सब चीज़ों से ज़ुहा की दो रकअतें किफ़ायत करती हैं।"[1] (मफ़्हूम)

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अल्लाह तआला फ़रमाता है! ऐ आदम के बेटे ख़ालिस मेरे लिए चार रकअतें अव्वल दिन में पढ़ (अर्थात

1. सहीह मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 720। तस्बीह अर्थात सुब्हानल्लाह कहना, तहमीद : अल्लाहु अकबर कहना, तहलील : ला इला-ह इल्लल्लाहु कहना, तकबीर : अल्लाहु अकबर कहना, अम्र बिन मारूफ़ : नेकी का हुक्म या प्रेरणा देना, नह्य अनिल मुंकर : बुराई से रोकना या नफ़रत दिलाना। इस हदीस से मालूम हुआ कि चाश्त (इशराक़) की नमाज़ की कम से कम तादाद दो रकअतें हैं।

इशराक़ की) मैं तुझको उस दिन की शाम तक किफ़ायत करूंगा।''[1]

मुआज़ रज़ि० ने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० से मालूम किया। रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़े ज़ुहा कितनी रकअतें पढ़ते थे? हज़रत आइशा रज़ि० ने कहा : चार रकअतें और जिस क़द्र अल्लाह तआला चाहता आप (इससे) ज़्यादा (भी) पढ़ते।''[2]

उम्मे हानी रज़ि० फ़रमाती हैं : रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़तह मक्का के दिन ग़ुस्ल किया और आठ रकआत नमाज़ ज़ुहा पढ़ी।[3]

मालूम हुआ कि इशराक़ की रकअतें दो, चार या आठ हैं।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० ने फ़रमाया : ''मुझे मेरे प्यारे दोस्त नबी सल्ल० ने तीन चीज़ों की वसीयत की, जब तक मैं ज़िंदा रहूंगा उनको नहीं छोड़ूंगा : हर (अरबी) महीना (में अय्यामे बैज़ : 13, 14, और 15) के तीन रोज़े, चाश्त की नमाज़ और सोने से पहले वित्र पढ़ना।[4]

---

1. अबू दाऊद, अबवाबुत्तुलूअ, हदीस 1289 व तिर्मिज़ी, वित्र, हदीस 474। हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे हसन और क़वी अस्नाद जबकि इमाम इब्ने हिबान ने सहीह कहा है। किफ़ायत का एक मतलब यह भी है कि तेरे काम संवारूंगा।

2. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 719।

3. बुख़ारी, तहज्जुद, हदीस 1176 व मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 330।

4. बुख़ारी, तहज्जुद, हदीस 1178, 2181 व मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 721।

नमाज़ इस्तिख़ारा का बयान

जब किसी को कोई (जाइज़) काम हो और वह उसमें संकोच करता हो कि उसे करूं या न करूं, या जब किसी काम का इरादा करे तो उस मौक़े पर इस्तिख़ारा करना सुन्नत है। इसकी सूरत यह है कि दो रकअत नफ़्ल विनम्रता व भय और दिल से पढ़े। रुकूअ व सुजूद और क़ौमा व जल्सा बड़े इत्मीनान से करे। फिर फ़ारिग होकर यह दुआ पढ़े :

«اَللّٰهُمَّ إِنِّیْ أَسْتَخِيْرُكَ بِعِلْمِكَ، وَأَسْتَقْدِرُكَ بِقُدْرَتِكَ، وَأَسْئَلُكَ مِنْ
فَضْلِكَ الْعَظِيْمِ، فَإِنَّكَ تَقْدِرُ وَلاَ أَقْدِرُ، وَتَعْلَمُ وَلاَ أَعْلَمُ، وَأَنْتَ عَلاَّمُ
الْغُيُوْبِ، اَللّٰهُمَّ إِنْ كُنْتَ تَعْلَمُ أَنَّ هٰذَا الْأَمْرَ خَيْرٌ لِّیْ فِیْ دِيْنِیْ
وَمَعَاشِیْ وَعَاقِبَةِ أَمْرِیْ فَاقْدُرْهُ لِیْ، وَيَسِّرْهُ لِیْ ثُمَّ بَارِكْ لِیْ فِيْهِ، وَإِنْ
كُنْتَ تَعْلَمُ أَنَّ هٰذَا الْأَمْرَ شَرٌّ لِّیْ فِیْ دِيْنِیْ وَمَعَاشِیْ وَعَاقِبَةِ أَمْرِیْ
فَاصْرِفْهُ عَنِّیْ وَاصْرِفْنِیْ عَنْهُ، وَاقْدُرْ لِیَ الْخَيْرَ حَيْثُ كَانَ، ثُمَّ رَضِّنِیْ
بِهٖ»

"या इलाही निःसन्देह में (इस काम में) तुझसे तेरे इल्म की मदद से ख़बर मांगता हूं और (हुसूले ख़ैर के लिए) तुझसे तेरी क़ुदरत के ज़रिए ताक़त मांगता हूं और मैं तुझसे तेरा फ़ज़्ल अज़ीम मांगता हूं, बेशक तू (हर चीज़ पर) क़ादिर है और मैं (किसी चीज़ पर) क़ादिर नहीं। तू (हर काम के अंजाम को) जानता है और मैं (कुछ) नहीं जानता और तू तमाम ग़ैबों का जानने वाला है। इलाही! अगर तू जानता है कि यह काम (जिसका मैं इरादा रखता हूं) मेरे लिए मेरे दीन, मेरी ज़िंदगी और मेरे अंजाम कार के हिसाब से बेहतर है तो इसे मेरे लिए मुक़द्दर कर और आसान कर फिर इसमें मेरे लिए बरकत पैदा फ़रमा और अगर तेरे इल्म में यह काम मेरे लिए मेरे दीन, मेरी ज़िंदगी और मेरे अंजाम के हिसाब से बुरा है तो इस (काम) को मुझसे और मुझे इससे फेर दे और मेरे लिए भलाई उपलब्ध कर जहां (कहीं भी) हो। फिर मुझे उसके साथ राज़ी

कर दे।" नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि फिर अपनी हाजत बयान करो।[1]

जब आप यह मसनून इस्तिख़ारा करके कोई काम करेंगे तो अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से ज़रूर इसमें बेहतरी की सूरत पैदा करेगा और बुराई से बचाएगा।

इस्तिख़ारा रात या दिन की जिस घड़ी में भी आप चाहें कर सकते हैं, सिवाए मकरूह समयों के।

---

1. बुख़ारी, तहज्जुद, हदीस 1162, 6382, 7390। कुछ लोग ख़ुद इस्तिख़ारा करने की बजाए दूसरों से इस्तिख़ारा करवाते हैं यह रविश एक महामारी की शक्ल इख़्तियार कर गई है जिसने जगह जगह दूसरों के लिए इस्तिख़ारा करने वाले स्पेशलिस्ट पैदा करा दिए हैं यद्यपि अपने लिए स्वयं इस्तिख़ारा करने की बजाए किसी और से इस्तिख़ारा करवाना क़ुरआन व सुन्नत से साबित नहीं बल्कि यह ऐसी हालत में ख़ास तौर से ग़लत है जबकि इस्तिख़ारा करवाने वाला इस्तिख़ारा करवाता ही इस नीयत से है कि मुझे इन "बुज़ुर्गों" से कोई पक्की ख़बर या स्पष्ट जानकारी मिलेगी जिसे बाद में वह ठीक वैसा ही सच्चा जानकर किसी काम के करने या न करने का फ़ैसला करता है। यद्यपि इस्तिख़ारे के लिए न तो यह लाज़िमी है कि यह सोने से पहले किया जाए और न यह लाज़िमी है कि सपने में कोई स्पष्ट इशारा होगा। सीधी सी बात है कि ज़रूरतमंद यदा कदा इस्तिख़ारा करता रहे यहां तक कि अल्लाह तआला इसका सीना खोल दे और अधिक चाहता है तो किसी अच्छे व्यक्ति से मशवरा कर ले फिर वह जो काम करेगा अल्लाह तआला उसमें बेहतरी पैदा करेगा इंशाअल्लाह तआला।

नमाज़ तस्बीह

अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि नबी सल्ल० ने अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब से फ़रमाया :

«يَاعَبَّاسُ! يَاعَمَّاهُ! اَلاَ أُعْطِيكَ؟ اَلاَ اَمْنَحُكَ؟ اَلاَ اَحْبُوكَ؟ اَلاَ اَفْعَلُ بِكَ عَشْرَ خِصَالٍ إِذَا أَنْتَ فَعَلْتَ ذٰلِكَ غَفَرَاللهُ لَكَ ذَنْبَكَ أَوَّلَهُ وَآخِرَهُ قَدِيمَهُ وَحَدِيثَهُ خَطَأَهُ وَعَمْدَهُ صَغِيرَهُ وَكَبِيرَهُ سِرَّهُ وَعَلاَنِيَتَهُ، عَشْرَ خِصَالٍ أَنْ تُصَلِّيَ أَرْبَعَ رَكَعَاتٍ تَقْرَأُ فِيْ كُلِّ رَكْعَةٍ فَاتِحَةَ الْكِتَابِ وَسُوْرَةً فَإِذَا فَرَغْتَ مِنَ الْقِرَاءَةِ فِيْ أَوَّلِ رَكْعَةٍ وَأَنْتَ قَائِمٌ قُلْتَ: سُبْحَانَ اللهِ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ وَلاَ إِلٰهَ إِلاَّ اللهُ وَاللهُ أَكْبَرُ، خَمْسَ عَشْرَةَ مَرَّةً، ثُمَّ تَرْكَعُ فَتَقُوْلُهَا وَأَنْتَ رَاكِعٌ عَشْرًا، ثُمَّ تَرْفَعُ رَأْسَكَ مِنَ الرُّكُوْعِ فَتَقُوْلُهَا عَشْرًا، ثُمَّ تَهْوِيْ سَاجِدًا فَتَقُوْلُهَا وَأَنْتَ سَاجِدٌ عَشْرًا، ثُمَّ تَرْفَعُ رَأْسَكَ مِنَ السُّجُوْدِ فَتَقُوْلُهَا عَشْرًا، ثُمَّ تَسْجُدُ فَتَقُوْلُهَا عَشْرًا، ثُمَّ تَرْفَعُ رَأْسَكَ فَتَقُوْلُهَا عَشْرًا، فَذٰلِكَ خَمْسٌ وَسَبْعُوْنَ فِيْ كُلِّ رَكْعَةٍ، تَفْعَلُ ذٰلِكَ فِيْ أَرْبَعِ رَكَعَاتٍ، إِنِ اسْتَطَعْتَ أَنْ تُصَلِّيَهَا فِيْ كُلِّ يَوْمٍ مَرَّةً فَافْعَلْ، فَإِنْ لَمْ تَفْعَلْ فَفِيْ كُلِّ جُمُعَةٍ مَرَّةً، فَإِنْ لَمْ تَفْعَلْ فَفِيْ كُلِّ شَهْرٍ مَرَّةً فَإِنْ لَمْ تَفْعَلْ فَفِيْ كُلِّ سَنَةٍ مَرَّةً، فَإِنْ لَمْ تَفْعَلْ فَفِيْ عُمُرِكَ مَرَّةً»

"ऐ चचा जान अब्बास! क्या मैं आपको कुछ प्रदान न करूं? क्या आपको कुछ इनायत न करूं? क्या मैं आपको कोई तोहफ़ा पेश न करूं? क्या मैं आपको (निम्न अमल की वजह से) दस अच्छी आदतों वाला न बना दूं? कि जब आप यह अमल करें तो अल्लाह ज़ुल जलाल आपके अगले पिछले, पुराने नए, अंजाने में और जान बूझकर किए गए तमाम छोटे बड़े, छुपे और खुले गुनाह माफ़ फ़रमा दे? (वह यह) कि :

आप चार रकआत नफ़्ल इस तरह अदा करें कि हर रकअत में सूरह फ़ातिहा और कोई दूसरी सूरह पढ़ें। जब आप इस क़िरअत से फ़ारिग हो जाएं

तो क़याम की हालत में ही यह कलिमात पंद्रह बार पढ़ें (सुब्हानल्लाहि वल हम्दुलिल्लाहि वला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर) फिर आप रुकूअ में जाएं (रुकूअ की तस्बीह से फ़ारिग होकर) रुकूअ में इन्हीं कलिमात को दस बार दोहराएं। फिर आप रुकूअ से उठ जाएं और (समिअल्लाहु लिमन हमिदा/आदि से फ़ारिग होकर) दस बार यही कलिमात पढ़ें। फिर सज्दे में जाएं (सज्दे की तस्बीहात और दुआएं पढ़ने के बाद) यही कलिमात दस बार पढ़ें। फिर सज्दे से सर उठाएं (और उस जल्से में जो दुआएं हैं वह पढ़के) दस बार इन्ही कलिमात को दोहराएं और फिर (दूसरे) सज्दे में चले जाएं। (पहले सज्दे की तरह) दस बार फिर उस तस्बीह को अदा करें। फिर सज्दे से सर उठाएं (और जल्साए इस्तराहत में कुछ और पढ़े बिना) दस बार इस तस्बीह को दोहराएं। एक रकअत में 75 तस्बीहात हुईं इसी तरह चारों रकआत में यह अमल दोहराएं।

अगर आप ताक़त रखते हों तो नमाज़ तस्बीह रोज़ाना एक बार पढ़ें, अगर आप ऐसा न कर सकते हों तो हर जुमा एक बार पढ़ें।[1] यह भी न कर सकते हों तो हर महीने एक बार पढ़ें। यह भी न कर सकें तो साल में एक बार, अगर आप साल में भी एक बार न कर सकते हों तो ज़िंदगी में एक बार ज़रूर पढ़ें।"[2]

---

1. अहले दुनिया को सात दिनों की मुद्दत मालूम है मुसलमानों के यहां जुमा है, यहूदियों के यहां हफ़्ता है और ईसाइयों के यहां इतवार के दिन से इस मुद्दत का आरंभ होता है। जिस तरह "हफ़्ता" एक ख़ास दिन का नाम है और इस सात दिनों की मुद्दत को भी हफ़्ता कहते हैं इस तरह "जुमा" भी एक ख़ास दिन का नाम है और इस सात दिनों की मुद्दत को भी "जुमा" कहते हैं। अरबी में इस मुद्दत को "अस्बूअ" भी कहते हैं। इस स्पष्टीकरण को सामने रखें तो मालूम होता है कि इस हदीस का मंशा यह नहीं है कि नमाज़े तस्बीह हर जुमा के दिन पढ़ो बल्कि मक़्सद यह है कि पूरे सात दिनों की मुद्दत में किसी समय भी पढ़ लो, अतएव केवल जुमा का दिन नमाज़े तस्बीह के लिए ख़ास करना सहीह नहीं।

2. अबू दाऊद, हदीस 1297, इब्ने माजा, हदीस 1386, इमाम इब्ने ख़ुज़ैमा (हदीस 1216) और हाकिम (1/318) ने इसे सहीह कहा है। याद रहे कि इस हदीस शरीफ़ में नमाज़े तस्बीह को जमाअत के साथ अदा करने का ज़िक्र नहीं है केवल व्यक्तिगत कर्म

शेष अगले पृष्ठ पर

हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० फ़रमाते हैं कि यह हदीस अधिक छोड़ने की विना पर हसन दर्जे की है, शैख़ अलबानी फ़रमाते हैं कि इमाम हाकिम और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इस हदीस की मज़बूती की तरफ़ इशारा किया है और यह हक़ है क्योंकि इसके बहुत से तर्क हैं। अल्लामा मुबारकपुरी और शैख़ अहमद शाकिर ने भी इसे हसन कहा है। जबकि ख़तीब बग़दादी, इमाम नववी और इब्ने सलाह ने इसे सहीह कहा है।

नोट : नमाज़ तस्बीह में तस्बीहात, तशह्हुद में अत्तहिय्यात से पहले पढ़ें दूसरे अरकान के मुक़ाबले।

नमाज़ तस्बीह के बाद पढ़ी जाने वाली दुआ की सनद सख़्त ज़ईफ़ है इसके रावी अब्दुल क़ुद्दूस बिन हबीब को हाफ़िज़ हैशमी ने छोड़ने वाला और अब्दुल्लाह बिन मुबारक ने झूठा कहा है।

के तौर पर नबी सल्ल० ने अपने चचाजान को इसकी तर्ग़ीब दी है अतः जो मुसलमान नमाज़े तस्बीह अदा करना चाहे उसे चाहिए कि पहले नमाज़े तस्बीह का तरीक़ा सीखे, फिर उसे एकान्त में अकेला पढ़े। और यह रवैया भी अत्यन्त विनाशकारी है कि बन्दा फ़र्ज़ नमाज़ों पर तो ध्यान न दे मगर नमाज़े तस्बीह (जमाअत से) अदा करने के लिए हर क्षण व्याकुल रहे, अतः फ़र्ज़ नमाज़ों के छोड़ने वाले को पहले सच्ची तौबा करनी चाहिए फिर वह नमाज़े तस्बीह पढ़े तो उसे यक़ीनन फ़ायदा होगा इंशाअल्लाहुल अज़ीज़।

जनाइज़ के आदेश

बीमार का हाल पूछना

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि :

«حَقُّ الْمُسْلِمِ عَلَى الْمُسْلِمِ خَمْسٌ، رَدُّ السَّلَامِ وَعِيَادَةُ الْمَرِيضِ وَاتِّبَاعُ الْجَنَائِزِ وَإِجَابَةُ الدَّعْوَةِ وَتَشْمِيتُ الْعَاطِسِ»

"मुसलमान के मुसलमान पर पांच हक़ हैं : (1) (जब मिले तो उसे सलाम कहे या उसके) सलाम का जवाब दे। (2) जब बीमार हो तो उसका हाल पूछे। (3) जब मर जाए तो उसका जनाज़ा पढ़े। (4) जब दावत दे तो उसे क़ुबूल करे। (5) अगर वह छींक पर (अलहम्दुलिल्लाह) कहे, तो जवाब में (यरहमुकल्लाहु) कहे।"[1]

हज़रत अली रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो मुसलमान दूसरे मुसलमान का दिन के अव्वल हिस्से में (दोपहर से पहले) हाल मालूम करता है तो सत्तर हज़ार फ़रिश्ते उसके लिए शाम तक रहमत व मग़फ़िरत की दुआ करते हैं और जो मुसलमान दिन के आख़िरी हिस्से में (दोपहर के बाद) हाल मालूम करता है तो सत्तर हज़ार फ़रिश्ते उसके लिए सुबह तक रहमत और मग़फ़िरत की दुआ करते हैं और उसके लिए जन्नत में बाग़ है।"[2]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया है : "मुसलमान जब अपने मुसलमान भाई की तीमारदारी के लिए जाता है तो वह वापस लौटने तक जन्नत के मेवे चुनता है।"[3]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अल्लाह तआला जिस व्यक्ति के साथ

---

1. बुख़ारी, अलजनाइज़, हदीस 1240 व मुस्लिम, सलाम, हदीस 2162।

2. तिर्मिज़ी, जनाइज़, हदीस 970 व अबू दाऊद, जनाइज़, हदीस 3098। इसे इब्ने हिबान (710) इमाम हाकिम (1/341-342) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है।

3. मुस्लिम, हदीस 2568।

भलाई का इरादा करता है उसे तकलीफ़ का शिकार कर देता है।"[1]

आपने फ़रमाया : "मुसलमान को रंज, दुख, फ़िक्र और ग़म पहुंचता है यहां तक कि अगर उसे कांटा (भी) लगता है तो वह तकलीफ़ उसके गुनाहों का कफ़्फ़ारा बन जाती है।"[2]

और फ़रमाया : "जब किसी मुसलमान को कोई तकलीफ़ पहुंचती है तो अल्लाह तआला उसकी वजह से उसके गुनाहों को इस तरह मिटाता है जिस तरह पेड़ के पत्ते झड़ते हैं।"[3]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "बुख़ार (हो जाए तो उस) को बुरा न कहो क्योंकि बुख़ार आदमी के गुनाह इस तरह दूर करता है जिस तरह भट्टी लोहे के मैल को दूर करती है।"[4]

नबी सल्ल० का इरशाद है : "अल्लाह तआला मुसाफ़िर और मरीज़ को उन आमाल के बराबर अज्र देता है जो वह घर में और स्वस्थ हालत में किया करता था।"[5]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला फ़रमाते हैं : "जब मैं किसी बन्दे को उसकी दो महबूब चीज़ों (आंखों) में आज़माता हूं (उसे बीनाई से महरूम करता हूं) फिर अगर वह सब्र करे तो उसके बदले में उसे जन्नत दूंगा।"[6]

रसूलुल्लाह सल्ल० के पास एक काली औरत आई और अर्ज़ किया कि मिर्गी का दौरा पड़ता है और मेरा सतर खुल जाता है, आप मेरे लिए अल्लाह से दुआ करें। आपने फ़रमाया : "अगर तू सब्र करेगी तो तेरे लिए जन्नत है और अगर चाहे तो दुआ किए देता हूं।" वह कहने लगी : "मैं सब्र करूंगी।" फिर कहा, "मेरा सतर खुल जाता है अल्लाह से दुआ करें कि वह न खुले।

1. बुख़ारी, मुस्लिम, हदीस 5645।
2. बुख़ारी, हवाला साबिक, हदीस 5640, 5641, 5642, 5647, 5648 व मुस्लिम, हदीस 2571।
3. बुख़ारी, हदीस 5647 व मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 2571।
4. मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 2575।
5. बुख़ारी, जिहाद व सीर, हदीस 2996।
6 बुख़ारी, मुस्लिम, हदीस 5653।

(ताकि मैं बेपर्दा न होऊं)''' अतएव आप सल्ल० ने उसके लिए दुआ फ़रमाई।[1]

बीमार के लिए दुआएं :

जब मरीज़ की अयादत के लिए जाएं तो रसूलुल्लाह सल्ल० की ज़बान मुबारक से निकली हुई निम्न दुआएं उसके हक़ में करें :

पहली दुआ : रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : ''जो व्यक्ति अपने मुसलमान भाई की तीमारदारी के लिए जाता है और उसके सर के पास बैठकर सात बार यह कलिमात पढ़ता है तो वह ठीक हो जाता है या यह कि उसकी मौत का समय ही आ चुका हो।''

«أَسْئَلُ اللهَ الْعَظِيْمَ، رَبَّ الْعَرْشِ الْعَظِيْمِ أَنْ يَّشْفِيَكَ»

''मैं! बुज़ुर्ग व बरतर अल्लाह, अर्शे अज़ीम के रब से सवाल करता हूं कि तुझे शिफ़ा से नवाज़े।''[2]

दूसरी दुआ : रसूलुल्लाह सल्ल० एक आराबी की अयादत के लिए तशरीफ़ ले गए और उससे यह कलिमात कहे :

«لاَ بَأْسَ طَهُوْرٌ إِنْ شَاءَ اللهُ»

''डर नहीं (ग़म न कर) अगर अल्लाह ने चाहा तो (यही बीमारी तुझे गुनाहों से) पाक करने वाली है।''[3]

तीसरी दुआ : हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० फ़रमाती हैं कि नबी सल्ल० रोगी (के जिस्म) पर अपना दायां हाथ फेरते और यह दुआ पढ़ते थे :

«أَذْهِبِ الْبَأْسَ رَبَّ النَّاسِ، وَاشْفِ أَنْتَ الشَّافِيْ لاَ شِفَاءَ إِلاَّ شِفَاؤُكَ شِفَاءً لاَ يُغَادِرُ سَقَمًا»

''ऐ इंसानों के रब! बीमारी को दूर कर और शिफ़ा दे। तू ही शिफ़ा देने वाला है। तेरी शिफ़ा के सिवा कोई शिफ़ा नहीं ऐसी शिफ़ा (दे) जो किसी

---

1. बुख़ारी, मरज़ी, हदीस 5652, मुस्लिम, हदीस 2576।

2. अबू दाऊद, जनाइज़, हदीस 3106, इसे इब्ने हिबान, इमाम हाकिम (1/342, 2/416) और इमाम नववी ने सहीह कहा है।

3. बुख़ारी, मनाक़िब, हदीस 3616, 5656, 6562।

बीमारी को नहीं छोड़ती।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब किसी मुसलमान को तकलीफ़ (मुसीबत या नुक़्सान) पहुंचे तो वह यह कहे :

«إِنَّا لِلّٰهِ وَإِنَّا إِلَيْهِ رَاجِعُونَ، اَللّٰهُمَّ أْجُرْنِي فِي مُصِيبَتِي وَأَخْلِفْ لِي خَيْرًا مِنْهَا»

"हम सब अल्लाह के लिए हैं और उसी की तरफ़ लौट कर जाने वाले हैं। ऐ अल्लाह मुझे मेरी मुसीबत में अज्र और अच्छा बदला (दोनों) अता फ़रमा।" तो अल्लाह तआला उसके बदले में उससे अच्छी चीज़ प्रदान कर देता है।[2]

चौथी दुआ : मुअव्विज़ात का दम :

हज़रत आइशा रज़ि० रिवायत करती हैं कि नबी सल्ल० बीमार होते तो अपने आप पर मुअव्विज़ात (क़ुरआन की आख़िरी दो सूरतें) से दम करते और अपने शरीर पर अपना हाथ फेरते। हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० भी मुअव्विज़ात पढ़कर रसूलुल्लाह सल्ल० पर बीमारी की हालत में दम करती थीं।[3]

पांचवीं दुआ : हज़रत उसमान बिन अबी अलआस रज़ि० से रिवायत है कि उन्होंने नबी अकरम सल्ल० से शरीर के दर्द की शिकायत की। आपने फ़रमाया : "अपना हाथ दर्द की जगह पर रखो फिर तीन बार बिस्मिल्लाह कहो और सात बार यह कलिमात पढ़ो :

«أَعُوذُ بِعِزَّةِ اللهِ وَقُدْرَتِهِ مِنْ شَرِّ مَا أَجِدُ وَأُحَاذِرُ»

"मैं अल्लाह की ताक़त और क़ुदरत के साथ पनाह मांगता हूं उस चीज़ की बुराई से जो मैं पाता (महसूस करता) हूं और उससे डरता हूं।" (उसमान फ़रमाते हैं कि) मैंने इसी तरह किया तो अल्लाह तआला ने मेरी तकलीफ़ दूर

---

1. बुख़ारी, हदीस 5675, 5743, 5750 व मुस्लिम, सलाम, हदीस 2191।
2. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 918।
3. बुख़ारी, फ़ज़ाइले क़ुरआन, हदीस 5016, 5735, 5751 व मुस्लिम, सलाम, हदीस 291।

कर दी।[1]

छठी दुआ : रसूलुल्लाह सल्ल० हज़रत हसन और हुसैन रज़ि० को इन शब्दों के साथ दम किया करते थे :

«أُعِيذُكُمَا بِكَلِمَاتِ اللهِ التَّامَّةِ مِنْ كُلِّ شَيْطَانٍ وَهَامَّةٍ، وَمِنْ كُلِّ عَيْنٍ لَامَّةٍ»

"मैं तुम दोनों को अल्लाह के पूरे कलिमात के साथ (उसकी) पनाह में देता हूं हर शैतान और ज़ेहरीले जानवर की बुराई से और हर बुरी नज़र की बुराई से।"

फिर फ़रमाया : "तुम्हारे बाप इब्राहीम अलैहि० (भी) इन कलिमात के साथ इस्माईल और इसहाक़ अलैहि० के लिए (अल्लाह की) पनाह तलब किया करते थे (उन्हें दम करते थे)।"[2]

सातवीं दुआ : जिब्रील अमीन अलैहि० का दम :

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० के पास जिब्रील अलैहि० ने आकर कहा ऐ मुहम्मद सल्ल०! क्या आप बीमार हैं? आपने फ़रमाया, हां। तो जिब्रील अलैहि० ने (यह) पढ़ा (और आप पर दम किया) :

«بِسْمِ اللهِ أَرْقِيكَ مِنْ كُلِّ شَيْءٍ يُؤْذِيكَ، مِنْ شَرِّ كُلِّ نَفْسٍ أَوْ عَيْنِ حَاسِدٍ، اللهُ يَشْفِيكَ، بِاسْمِ اللهِ أَرْقِيكَ»

"अल्लाह तआला का नाम लेकर मैं आप पर दम करता हूं हर उस चीज़ से जो आपको तकलीफ़ दे, हर नफ़्स और हर हसद करने वाली आंखों के शर से, अल्लाह तआला आपको शिफ़ा दे। मैं अल्लाह का नाम लेकर आप पर दम करता हूं।"[3]

---

1. मुस्लिम, सलाम, हदीस 2202।

2. बुख़ारी, अहादीस अंबिया, अध्याय 10, हदीस 3371। अबू दाऊद, हदीस 4733 व तिर्मिज़ी, हदीस 2060।

3. मुस्लिम, सलाम, हदीस 2186। इन अहादीस से मालूम हुआ कि 1 अपने आप पर ख़ुद दम करना 2 जो दम करवाने आए उसे दम सिखाना कि वह ख़ुद ही अपने आप

शेष अगले पृष्ठ पर

पर दम करे। 3 मरीज़ के मुतालबे के बिना उसे दम करना 4 या रोगी का किसी से दम करवाना सब जाइज़ है। लेकिन अफ़सोस कि मुसलमान केवल आख़िरी जाइज़ (दम करवाने) पर ही अमल करते हैं अपने आपको दम करने की सुन्नत लगभग ख़त्म हो चुकी है क्योंकि इसमें एक आध दुआ याद करनी पड़ती है। याद रखिए, सीधे अल्लाह तआला से मांगना बड़े सौभाग्य की बात है, यह ठीक ठाक इबादत है और रोगी की दुआ तो वैसे भी बहुत क़ुबूल होती है अतः उसे चाहिए कि न केवल स्वयं दम करे बल्कि इस्तग़फ़ार को नीयती बनाए इससे तकलीफ़ से जल्द निजात मिलेगी या दर्जात बढ़ेंगे और ख़ूब दुआएं करे अल्लाह क़ुबूल करेगा इंशाअल्लाह।

कफ़न व दफ़न

अन्तिम सांसों में नसीहत :

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : उन लोगों को जो मरने के क़रीब हों (ला इला-ह इल्लल्लाहु) की नसीहत करो।"[1]

आप सल्ल० ने फ़रमाया कि : "जिसका आख़िरी कलाम (ला इला-ह इल्लल्लाहु) हो वह जन्नत में दाख़िल होगा।"[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम बीमार या मय्यित के पास जाओ तो भलाई की बात कहो क्योंकि उस समय तुम जो कुछ कहते हो फ़रिश्ते उस पर आमीन कहते हैं।"[3]

मरने वाले के पास सूरह यासीन पढ़ने वाली रिवायत (अबू दाऊद हदीस 3121) को इमाम नववी ने ज़ईफ़ कहा और दारे क़ुतनी ने कहा, इस बारे में नबी सल्ल० से कोई स्पष्ट हदीस नहीं है।[4]

मौत की इच्छा करना :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "मौत की इच्छा न करो। अगर तुम

---

1. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 916-917। अर्थात उनके क़रीब (ला इला-ह इल्लल्लाहु पढ़ो) ताकि उसे सुनकर वह भी पढ़ें लेकिन अफ़सोस कि जाहिल ज़िंदा, मरने के क़रीब को तो इसकी नसीहत नहीं करते अलबत्ता मौत के बाद चारपाई को कंधा देते समय कहते जाते हैं "कलिमा शहादत" यद्यपि पहले ज़माने के मुसलमानों में से किसी ने भी यह काम नहीं किया फिर यह आज हमारे दीन का हिस्सा कैसे बन सकता है?

2. अबू दाऊद, जनाइज़, अध्याय फ़िल तल्क़ीन, हदीस 3116। इसे हाकिम (1/351, 500) और ज़ेहबी ने सहीह कहा है। क्योंकि इस मरने वाले ने अल्लाह की तौफ़ीक़ से मौत से पहले (ला इला-ह इल्लल्लाहु) पढ़ा फिर उसी हाल पर अल्लाह की क़ज़ा आ गई और (ला इला-ह इल्लल्लाहु) उसकी ज़िंदगी का आख़िरी क़लिमा बन गया। अल्लाह तआला सबको इसका सौभाग्य प्रदान करे। आमीन!

3. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 919।

4. तल्ख़ीस हबीर 2/104।

नेक हो तो शायद ज़्यादा नेकी कर सकोगे और अगर बदकार हो तो, तौबा करके अल्लाह को राज़ी कर सकोगे।"[1]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : मौत की इच्छा करो न मौत की दुआ करो, क्योंकि जब कोई व्यक्ति मर जाता है तो उसकी (नेकी करने की) उम्मीद ख़त्म हो जाती है और मोमिन की लम्बी उम्र से उसकी नेकियां बढ़ती हैं।"[2]

इब्ने उमर रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने मेरा कंधा पकड़ कर फ़रमाया : "दुनिया में इस तरह रह मानो कि तू बेवतन या राही है।" अतएव इब्ने उमर रज़ि० फ़रमाया करते थे, जब शाम हो तो सुबह का इंतिज़ार न कर। जब सुबह हो तो शाम का इंतिज़ार न कर। स्वास्थ्य को बीमारी और ज़िंदगी को मौत से पहले ग़नीमत जान।[3]

आत्महत्या सख़्त गुनाह है :

नबी करीम सल्ल० ने फ़रमाया : "जो व्यक्ति अपने आपको गला घोंटकर मारता है वह जहन्नम में अपना गला घोंटता रहेगा और जो व्यक्ति भाला चुभोकर अपनी जान देता है वह जहन्नम में अपने आपको भाला मारता रहेगा।"[4]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "अल्लाह तआला ने फ़रमाया : मेरे बन्दे ने अपनी जान मुझसे पहले स्वयं ली इसलिए मैंने उस पर जन्नत हराम कर दी।"[5]

मय्यित को चूमना :

जिसका कोई क़रीबी दोस्त, रिश्तेदार मर जाए तो उसका मय्यित को

---

1. बुख़ारी, हदीस 7235।
2. मुस्लिम, ज़िक्र व दुआ, हदीस 2682।
3. बुख़ारी, रिक़ाक़, हदीस 6416।
4. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1365, 5778।
5. बुख़ारी, हवाला साबिक़, हदीस 1364, 3463। सहीह मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 978। में है : "नबी अकरम सल्ल० ने आत्महत्या करने वाले की नमाज़े जनाज़ा नहीं पढ़ी" अत: विशिष्ठ विद्वान इसकी नमाज़े जनाज़ा में शरीक न हों ताकि बाक़ी लोगों को इबरत हासिल हो।

मुहब्बत की वजह से बोसा देना जाइज़ है क्योंकि हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने रसूलुल्लाह सल्ल० की वफ़ात पर आप को बोसा दिया था।[1]

मय्यित का ग़ुस्ल :

उम्मे अतिया रज़ि० ने कहा, हम रसूलुल्लाह सल्ल० की बेटी को नहला रहे थे तो आपने फ़रमाया : "इसको 3, 5 या 7 बार पानी और बेरी के पत्तों से ग़ुस्ल दो और आख़िरी बार (पानी में) कुछ काफ़ूर भी मिला लो।" एक रिवायत में है कि "ग़ुस्ल दाईं तरफ़ वुज़ू वाले अंगों से शुरू करो।" (उम्मे अतिया कहती हैं) हमने (ग़ुस्ल के बाद) उसके बालों की तीन चोटियां गूंधीं और उनको पीछे डाल दिया।[2]

---

1. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1241, 1242, 5709, 5710, 5711।

2. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1258, 1259, 1255, 1256, 1257 व मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 939। इस हदीस से मालूम हुआ कि औरत को औरतें ही ग़ुस्ल देंगी अलबत्ता पति पत्नी एक दूसरे को ग़ुस्ल दे सकते हैं : (इब्ने माजा, जनाइज़, हदीस 1464-1465) याद रहे कि ग़ुस्ले मय्यित का तरीक़ा भी लगभग ग़ुस्ल जनाबत वाला है अलबत्ता ग़ुस्ल के दौरान मय्यित के सम्मान का बहुत ख़्याल रखना चाहिए, विवरण यह है :

(1) मौत के फ़ौरन बाद मय्यित का मुंह और आंखें बन्द की जाएं, बाज़ू, टाकें और हाथ पांव की उंगलियां भी सीधी कर ली जाएं और क़मीज़ और बनियान आदि उतार कर चादर से मय्यित का बदन ढांप दिया जाए। मय्यित के बाज़ू, गले, या पिंडली में कोई (शिर्किया) तावीज़ धागा या कड़ा आदि हो तो उसे उतार दें। (इस सूरत में बेहतर यह है कि अगर मरने वाले ने उसे जानते बूझते इख़्तियार किया था तो दीनदार लोग उसे ग़ुस्ल दें न उसके जनाज़े में शरीक हों।)

पानी और बेरी के पत्ते उबाल लिए जाएं फिर हल्का गर्म इस्तेमाल किया जाए और पानी कम से कम इस्तेमाल किया जाए। लकड़ी का एक तख़्ता ऐसी जगह रखा जाए जहां पानी का निकास, और गंदगी को ठिकाने लगाना आसान हो, मय्यित को उस तख़्ते पर लिटाया जाए। नाफ़ से घुटनों तक की जगह कपड़े से ढांप दी जाए और दौराने ग़ुस्ल, सिवाए मजबूरी के मय्यित की शर्मगाह पर नज़र न पड़े, न कपड़े के बिना उसे हाथ लगे।

अगर शरीर घायल हो और उस पर पट्टियां बंधी हों तो एहतियात से पट्टियां खोल कर रूई और हल्के गर्म पानी से आहिस्ता आहिस्ता घाव धोए जाएं। हर काम की शुरूआत

शेष अगले पृष्ठ पर

मय्यित का कफ़न :

रसूलुल्लाह सल्ल० को तीन (सफ़ेद) कपड़ों में कफ़न दिया गया उनमें कुर्ता था न अमामा।[1]

मय्यित का सोग :

हज़रत ज़ैनब बिन्ते जहश रज़ि० के भाई का इंतिक़ाल हो गया। तीन दिन बाद उन्होंने ख़ुश्बू मंगवाई और उसको मला। फिर कहा मुझे ख़ुश्बू की ज़रूरत नहीं थी मगर मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० से सुना कि जो औरत अल्लाह तआला और क़ियामत पर ईमान रखती हो उसके लिए हलाल नहीं कि तीन दिन से ज़्यादा किसी मय्यित पर सोग करे, सिवाए पति के जिसका सोग चार माह दस दिन है।[2]

उम्मे अतिया रज़ि० का लड़का मर गया। तीसरे दिन उन्होंने ज़र्दी मंगवा कर बदन पर मली और कहा "हमारे लिए पति के अलावा किसी और (की

दायीं तरफ़ से करें इल्ला यह कि केवल बायीं जानिब ध्यान देने की हक़दार हो।

नाफ़ की तरफ़ हाथ से मय्यित का पेट दो या तीन बार दबाया जाए (ताकि अंदर रुकी हुई गंदगी तक निकल जाए) फिर बाएं हाथ पर कपड़े का दस्ताना आदि (जो कफ़न के साथ बनाया जाता है) पहन कर पहले मिट्टी के तीन ढेलों और फिर पानी से उसका इस्तिंजा करें। अगर नाफ़ के नीचे के बालों की सफ़ाई बाक़ी हो तो कर ली जाए।

नाक, दांत, मुंह का ख़िलाल और कानों में अच्छी तरह गीली रूई फेरकर उनकी अलग से सफ़ाई कर ली जाए ताकि बाद में वुज़ू के दौरान तीन बार से ज़्यादा न धोना पड़े।

बिस्मिल्लाह पढ़कर मय्यित को मसनून वुज़ू कराया जाए (सर का मसह और पांव रहने दें)।

तीन बार अच्छी तरह सर धोएं।

ज़रूरत भर साबुन इस्तेमाल करते हुए पूरे शरीर को तीन या पांच या सात बार अच्छी तरह धोएं। आख़िरी बार नहलाते समय पानी में कुछ काफ़ूर मिला लें। सबसे आख़िर में पांव धोएं। (मुहम्मद अब्दुल जब्बार)

1. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1264, 1271, 1272, 1273, 1287।
2. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1282, 5335।

मौत) पर तीन दिन से ज़्यादा सोग करना मना है।"[1]

मय्यित पर रोना :

अगर मय्यित को देखकर रोना आए और आंसू जारी हों तो मना नहीं, इसलिए कि यह आप से आप रोना है जो जाइज़ है। नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "अल्लाह तआला आंख के रोने और दिल के परेशान होने की वजह से अज़ाब नहीं करता बल्कि ज़बान के चलाने और वावेला करने से अज़ाब करता है।"[2]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : (अल्लाह के यहां) वह सब्र भरोसे योग्य है जो सदमा के शुरू में हो।[3]

अर्थात वावेल और बैन करने के बाद सब्र करना, सब्र नहीं है। असल सब्र यह है कि मुसीबत के समय सब्र का प्रदर्शन किया जाए और दुख प्रकट करने के फ़ितरी तरीक़े के अलावा और कुछ न किया जाए।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "वह हममें से नहीं है जो गाल पीटे, गरेबान फाड़े और जिहालत की पुकार पुकारे।" (अर्थात नोहा और वावेला करे)।[4]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "मैं विरक्त हूं उससे जो (मय्यित की मुसीबत में) सर के बाल नोचे और चिल्लाकर रोए और अपने कपड़े फाड़े।"[5]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : अल्लाह तआला फ़रमाता है : "मेरे (उस) मोमिन बन्दे के लिए जन्नत है जिसके प्यारे को मैं अहले दुनिया से क़ब्ज़ करता हूं और वह (उसकी मौत पर) सब्र करता है।"[6]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिहालत के चार काम ऐसे हैं जिन्हें मेरी उम्मत के लोग भी करेंगे। (1) (अपने) वंश में गर्व करना। (2) (किसी के) वंश में तान करना। (3) सितारों के ज़रिए पानी तलब करना। (4) नोहा

---

1. बुख़ारी, हवाला साबिक़, हदीस 1278, 313।
2. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1304 व मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 924। अर्थात नोहा, मातम और बैन करना मना और अज़ाब का कारण है।
3. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1302 व मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 926।
4. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1294, 1297, 1298 व मुस्लिम, ईमान, हदीस 103।
5. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1296 व मुस्लिम, ईमान, हदीस 104।
6. बुख़ारी, रिक़ाक़, हदीस 6424।

करना।" (और यह भी फ़रमाया) "अगर नोहा करने वाली औरत मरने से पहले तौबा न करे तो क़ियामत के दिन उस पर गंधक और ख़ारिश का कुर्ता होगा।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० के बेटे इब्राहीम जब अन्तिम घड़ी में थे तो आपने उसे उठाया और फ़रमाया : "आंख आंसू बहा रही है और दिल दुखी है मगर इसके बावजूद हम कुछ नहीं कहेंगे सिवाए उस (बात) के जिससे हमारा रब राज़ी हो। और ऐ इब्राहीम! हम तेरी जुदाई के सबब दुखी हैं।"[2]

रसूलुल्लाह सल्ल० का नवासा मर गया तो आपकी आंखों से आंसू जारी हो गए। हज़रत साअद बिन उबादा रज़ि० ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! यह क्या है? आपने फ़रमाया : "यह वह रहमत है जो अल्लाह ने अपने बन्दों के दिलों में पैदा की है और अल्लाह अपने बन्दों में से रहमत करने वालों पर ही रहमत करता है।"[3]

नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जिस औरत के तीन बच्चे मर जाएं तो वह (उसके लिए) जहन्नम की आग से आड़ बनेंगे एक औरत ने पूछा अगर दो बच्चे मर जाएं तो? आपने फ़रमाया : "दो बच्चे भी।" हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि इससे मुराद वे बच्चे हैं जो अभी बालिग़ न हुए हों।[4]

एक और रिवायत में है कि अल्लाह तआला उन बच्चों पर (अपनी)

---

1. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 934। जाहिलों का अक़ीदा था कि सितारों की चलत फिरत और उदय व अस्त का बारिश और अन्य ज़मीनी घटनाओं के साथ गहरा संबंध है आजकल ज्योतिष विद्या भी उन्ही शिर्किया ख़ुराफ़ात जैसी है। अल्लाह तआला महफ़ूज़ रखे आमीन।

2. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1303 व मुस्लिम, फ़ज़ाइल, हदीस 2315। मालूम हुआ कि अल्लाह तआला महबूब की मुहब्बत में आकर अपने फ़ैसले नहीं बदलता बल्कि जो चाहता है सो करता है। वह किसी की ताक़त से प्रभावित होता है न किसी की मुहब्बत से मग़लूब। ग़फ़ूर रहीम है तो हर एक के लिए और बेनियाज़ है तो सबके लिए।

3. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1284, 5655, 6602, 6655 व मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 923।

4. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1240, 1250 व मुस्लिम, हदीस 2633, 2634। यह तब है जब वह औरत अल्लाह के फ़ैसले (बच्चों की मौत) पर सब्र व रज़ा का प्रदर्शन करे।

रहमत और फ़ज़्ल के सबब उस व्यक्ति को (अर्थात उनके बाप को) जन्नत में दाख़िल करेगा।[1]

शोक प्रकाश के शब्द :

«إِنَّ لِلّٰهِ مَا أَخَذَ وَلَهُ مَا أَعْطٰى وَكُلٌّ عِنْدَهُ بِأَجَلٍ مُسَمًّى، فَلْتَصْبِرْ وَلْتَحْتَسِبْ»

"निश्चय ही अल्लाह का (माल) है जो उसने ले लिया और उसी का है जो उसने दे रखा है उसके यहां हर चीज़ (के ख़त्म होने) का समय निर्धारित है (अतः) सब्र करके उसका अज्र व सवाब हासिल करना चाहिए।"[2]

1. बुख़ारी, हदीस 1248, 1381। बशर्ते कि बाप का अक़ीदा सही हो।
2. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1284।

नमाज़े जनाज़ा

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया :

«مَا مِنْ رَجُلٍ مُسْلِمٍ يَمُوتُ فَيَقُومُ عَلَى جَنَازَتِهِ أَرْبَعُونَ رَجُلاً لاَ يُشْرِكُونَ بِاللهِ شَيْئًا إِلاَّ شَفَّعَهُمُ اللهُ فِيهِ»

"जिस मुसलमान के जनाज़े में ऐसे चालीस आदमी शामिल हों जिन्होंने अल्लाह के साथ शिर्क न किया हो तो अल्लाह तआला उस (मय्यित के हक़) में उनकी सिफ़ारिश क़ुबूल करता है।"[1]

नमाज़े जनाज़ा पढ़ने के लिए मय्यित की चारपाई इस तरह रखें कि मय्यित का सर उत्तर की ओर और पांव दक्षिण की ओर हों, फिर वुज़ू करके पंक्ति बांधें। मय्यित अगर मर्द है तो इमाम (उसके) सर के सामने खड़ा हो और अगर औरत है तो उसके बीच खड़ा हो।[2]

फिर दिल मे नीयत करके दोनों हाथ कंधों या कानों तक उठाएं और पहली तकबीर कहकर सूरह फ़ातिहा पढ़ें।

जनाज़े में सूरह फ़ातिहा :

अबू उमामा बिन सहल रज़ि० से रिवायत है कि नमाज़े जनाज़ा में सुन्नत तरीक़ा यह है कि पहले तकबीर कही जाए, फिर फ़ातिहा पढ़ी जाए, फिर नबी सल्ल० पर दुरूद और मय्यित के लिए दुआ (की जाए) उसके बाद सलाम (फेरा जाए)।[3]

तलहा बिन अब्दुल्लाह बिन औफ़ कहते हैं कि मैंने इब्ने अब्बास रज़ि० के पीछे नमाज़े जनाज़ा पढ़ी तो आपने सूरह फ़ातिहा पढ़ी, और फ़रमाया : मैंने

---

1. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 948।

2. तिर्मिज़ी, जनाइज़, हदीस 1035, 1036, व अबू दाऊद, जनाइज़, हदीस 3194, तिर्मिज़ी ने इसे हसन कहा हे।

3. लेखक अब्दुर्रज़्ज़ाक़, हदीस 6428, (3/489-490) हाफ़िज़ इब्ने हजर ने इसे सहीह कहा है।

यह इसलिए किया ताकि तुम जान लो कि यह सुन्नत है।"[1]

तलहा बिन अब्दुल्लाह की एक रिवायत में फ़ातिहा के बाद दूसरी सूरह पढ़ने का भी ज़िक्र है।[2]

मालूम हुआ तकबीरे ऊला के बाद सूरह फ़ातिहा का पढ़ना सुन्नत है। सूरह फ़ातिहा और दूसरी सूरह पढ़कर इमाम को दूसरी तकबीर कहनी चाहिए। और फिर नमाज़ वाला दुरूद शरीफ़ पढ़ें। इसके बाद तीसरी तकबीर कहकर इन दुआओं में से कोई दुआ पढ़ें :

पहली दुआ :

«اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِحَيِّنَا وَمَيِّتِنَا وَصَغِيْرِنَا وَكَبِيْرِنَا وَذَكَرِنَا وَأُنْثَانَا، وَشَاهِدِنَا وَغَائِبِنَا اَللّٰهُمَّ مَنْ أَحْيَيْتَهُ مِنَّا فَأَحْيِهِ عَلَى الْإِيْمَانِ، وَمَنْ تَوَفَّيْتَهُ مِنَّا فَتَوَفَّهُ عَلَى الْإِسْلَامِ، اَللّٰهُمَّ لَا تَحْرِمْنَا أَجْرَهُ وَلَا تُضِلَّنَا بَعْدَهُ»

"ऐ अल्लाह! हमारे ज़िंदा और मुर्दे को, छोटे और बड़े को, मर्द और औरत को, हाज़िर और ग़ायब को बख़्श दे। ऐ अल्लाह! हममें से जिसको तू ज़िंदा रखे उसे इस्लाम पर ज़िंदा रख और हममें से जिसको तू मौत दे उसे ईमान पर मौत दे। ऐ अल्लाह! हमें इस (मय्यित) के अज्र से महरूम न रख और उसके बाद हमें किसी आज़माइश में न डाल।"[3]

दूसरी दुआ :

«اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لَهُ وَارْحَمْهُ وَعَافِهِ وَاعْفُ عَنْهُ وَأَكْرِمْ نُزُلَهُ وَوَسِّعْ مُدْخَلَهُ، وَاغْسِلْهُ بِالْمَاءِ وَالثَّلْجِ وَالْبَرَدِ، وَنَقِّهِ مِنَ الْخَطَايَا كَمَا نَقَّيْتَ الثَّوْبَ الْأَبْيَضَ مِنَ الدَّنَسِ، وَأَبْدِلْهُ دَارًا خَيْرًا مِّنْ دَارِهِ، وَأَهْلًا خَيْرًا مِّنْ أَهْلِهِ، وَزَوْجًا خَيْرًا مِّنْ زَوْجِهِ، وَأَدْخِلْهُ الْجَنَّةَ وَأَعِذْهُ مِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ [وَقِهِ فِتْنَةَ الْقَبْرِ وَعَذَابَ النَّارِ]»

---

1. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1335। इससे जहरी क़िरअत भी साबित हुई, हैरत है जो लोग उठते बैठते "फ़ातिहा" का नाम लेते हैं वह नमाज़े जनाज़ा में इसे पढ़ते ही नहीं।
2. नसाई (4/74-75) इब्ने तुर्कमानी ने इसे सहीह कहा है।
3. अबू दाऊद, जनाइज़, हदीस 3201, इसे इमाम इब्ने हिबान ने सहीह कहा है।

"इलाही! इसे माफ़ फ़रमा, इस पर दया कर, इसे आफ़ियत में रख, इससे दरगुज़र फ़रमा, इसकी बेहतरीन मेहमानी फ़रमा, इसकी क़ब्र कुशादा कर, इसके (गुनाह) पानी, ओलों और बर्फ़ से धो डाल, इसे गुनाहों से इस तरह साफ़ कर दे जैसे तू सफ़ेद कपड़े को मैल से साफ़ करता है। इसे इसके (दुनिया वाले) घर से बेहतर घर, (दुनिया के) लोगों से बेहतर लोग और इसकी पत्नी से बेहतर जोड़ा प्रदान कर, इसे जन्नत में दाख़िल कर और फ़ितनाए क़ब्र, अज़ाबे क़ब्र और अज़ाबे जहन्नम से बचा।"[1]

तीसरी दुआ :

«اَللّٰهُمَّ إِنَّ فُلَانَ بْنَ فُلَانٍ فِيْ ذِمَّتِكَ وَحَبْلِ جِوَارِكَ فَقِهِ مِنْ فِتْنَةِ الْقَبْرِ، وَعَذَابِ النَّارِ، وَأَنْتَ أَهْلُ الْوَفَاءِ وَالْحَمْدِ اَللّٰهُمَّ فَاغْفِرْلَهُ وَارْحَمْهُ، إِنَّكَ أَنْتَ الْغَفُوْرُ الرَّحِيْمُ»

"इलाही यह फ़लां बिन फ़लां तेरे ज़िम्मे और तेरी रहमत के साए में है। इसे फ़ितना क़ब्र, अज़ाबे क़ब्र और आग के अज़ाब से बचा, तू (अपने वायदे) वफ़ा करने वाला और प्रशंसा योग्य है। इलाही इसे माफ़ कर दे और इस पर दया कर निःसन्देह तू बख़्शने और रहम करने वाला है।"[2]

चौथी दुआ :

«اَللّٰهُمَّ عَبْدُكَ وَابْنُ أَمَتِكَ، اِحْتَاجَ إِلٰى رَحْمَتِكَ، وَأَنْتَ غَنِيٌّ عَنْ عَذَابِهِ، إِنْ كَانَ مُحْسِنًا فَزِدْ فِيْ حَسَنَاتِهِ، وَإِنْ كَانَ مُسِيْئًا فَتَجَاوَزْ عَنْهُ»

"इलाही तेरा यह बन्दा, तेरी बन्दी का बेटा, तेरी रहमत का मोहताज है, तू इसे अज़ाब न दे तो तुझे क्या परवाह अगर यह नेक था तो इसकी

1. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 963।

2. अबू दाऊद, जनाइज़, हदीस 3202, इब्ने माजा, जनाइज़, हदीस 1499। इमाम इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है। लेकिन इसकी सनद वलीद बिन मुस्लिम की तदरीस की वजह से ज़ईफ़ है।

नेकियों में वृद्धि कर और अगर गुनाहगार था तो इसे माफ़ फ़रमा।"[1]

जनाज़े के मसाइल :

(1) रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जो मोमिन सवाब की नीयत से किसी मुसलमान के जनाज़े के साथ जाता, उसके साथ रहता, उसका जनाज़ा पढ़ता और उसको दफ़न करके फ़ारिग होता है तो उसके लिए दो क़ीरात सवाब है। हर क़ीरात उहुद पहाड़ के बराबर है और जो (केवल) जनाज़ा पढ़कर वापस आ जाता है तो उसके लिए एक क़ीरात है।"[2]

(2) रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "मय्यित को जल्द दफ़न करो। अगर वह नेक है तो जिस तरफ़ तुम उसे भेज रहे हो वह उसके लिए लाभदायक है और अगर वह बुरा है तो उसको अपनी गर्दनों से उतार दोगे।"[3]

(3) सुन्नत यह है कि नमाज़े जनाज़ा में सूरह फ़ातिहा और दुआएं आहिस्ता पढ़ी जाएं।[4]

(4) हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० ने जनाज़े में (शिक्षा हेतु) फ़ातिहा बुलन्द आवाज़ से पढ़ी।[5]

अतः जनाज़े में इमाम, शिक्षा हेतु ऊंची आवाज़ से क़िरअत कर सकता है।

(5) नबी सल्ल० ने फ़रमाया : "जब तुम जनाज़ा देखो तो खड़े हो जाओ और जो व्यक्ति जनाज़े के साथ जाए उस समय तक न बैठे जब तक जनाज़ा

---

1. हाकिम (1/359) हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा।
2. बुख़ारी, ईमान, हदीस 47, 1323, 1325 व मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 945।
3. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1315 व मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 944।
4. नसाई (4/75) हाफ़िज़ इब्ने हजर ने इसे सहीह कहा है।
5. नसाई, इसे इमाम हाकिम (1/358, 386) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह कहा है। और इसकी असल बुख़ारी में है हदीस 1335। शिक्षा के अलावा सर्वथा जाइज़ होने की बिना पर भी बुलन्द आवाज़ से जनाज़ा पढ़ाया जा सकता है, अतएव औफ़ बिन मालिक रज़ि० फ़रमाते हैं, नबी सल्ल० ने नमाज़े जनाज़ा में एक दुआ पढ़ी जो मैंने याद कर ली और मैंने तमन्ना की कि काश यह मेरा जनाज़ा होता। (मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 963।)

न रखा जाए।"[1]

(6) नबी सल्ल० ने शहीदों को ख़ून समेत दफ़नाने का हुक्म दिया, उन पर नमाज़े जनाज़ा पढ़ी न उनको ग़ुस्ल दिया।[2]

(7) हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० ने नमाज़े जनाज़ा की 4 तकबीरें रिवायत कीं।[3]

(8) हज़रत ज़ैद बिन अरक़म रज़ि० नमाज़े जनाज़ा पर चार तकबीरें कहते। एक जनाज़े पर उन्होंने पांच तकबीरें कहीं और फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्ल० इस तरह भी करते थे।[4]

(9) रसूलुल्लाह सल्ल० ने सुहेल रज़ि० और उनके भाई की नमाज़े जनाज़ा मस्जिद में पढ़ाई।[5]

(10) सिद्दीक़े अकबर रज़ि० की नमाज़े जनाज़ा भी मस्जिद में पढ़ी गई और फ़ारूक़े आज़म रज़ि० की नमाज़े जनाज़ा हज़रत सुहैब रज़ि० ने मस्जिद में पढ़ाई।[6]

(11) रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "चार मुसलमान जिस मुसलमान की प्रशंसा करें और अच्छी गवाही दें, अल्लाह उसको जन्नत में दाख़िल करेगा।" हमने अर्ज़ किया : "और तीन?" आपने फ़रमाया : "तीन भी"। हमने अर्ज़ किया "और दो?" आपने फ़रमाया : "दो भी।"[7]

ग़ायबाना नमाज़े जनाज़ा :

ग़ायबाना नमाज़े जनाज़ा पढ़ने पर नज्जाशी के क़िस्से से दलील ली जाती है यह क़िस्सा, सहीह बुख़ारी (1245, 1318, 1320, 1327, 1328, 1333) और

1. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1310। यह हुक्म इस्तहबाब के तौर पर है और कहा जाता है कि पहले मुस्तहब था बाद में निरस्त हो गया।

2. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1343, 1346, 1347।

3. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1323 व मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 951।

4. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 957।

5. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 973।

6. बैहेक़ी (4/52)।

7. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1368, 2643। यहां उन मुसलमानों की गवाही मुराद है जिनका अक़ीदा व अमल और आचरण व किरदार किताब व सुन्नत के मुताबिक़ हो।

सहीह मुस्लिम (951) में मौजूद है, मगर इससे ग़ायबाना नमाज़े जनाज़ा पर विवेचन करना सहीह नहीं है।[1]

---

1. सहीह बुख़ारी और अन्य हदीस की किताबों में यह घटना मरवी है कि हब्शा में नज्जाशी की वफ़ात हुई। और मदीना में रसूलुल्लाह सल्ल० ने सहाबा को हमराह लेकर उसकी नमाज़े जनाज़ा पढ़ाई। इससे मालूम हुआ कि मय्यित की ग़ायबाना नमाज़े जनाज़ा पढ़ी जा सकती है। यही इमाम शाफ़ई, इमाम अहमद बिन हंबल, और जमहूर सल्फ़ का मसलक है। किसी सहाबी से इसकी मनाही मरवी नहीं। कुछ लोग जिन्होंने यह हदीस क़ुबूल नहीं की उन्होंने विभिन्न क़ैदें, शर्तें और बहाने तराशे हैं, लेकिन यह सब मात्र उनके अपने अक़्ली विचार हैं। शरअन उनकी कोई दलील नहीं।

मसलन कहा जाता है कि यह अमल नबी सल्ल० के साथ ख़ास था। मगर याद रहे कि नबी सल्ल० का हर अमल पूरी उम्मत के लिए उसवा व नमूना है। इसलिए आपका कोई अमल आपके साथ उस समय तक ख़ास नहीं क़रार दिया जा सकता जब तक कि उसके ख़ास होने की कोई स्पष्ट दलील न हो। और उस अमल के ख़ास होने की कोई दलील नहीं।

यह भी कहा जाता है कि आपके लिए नज्जाशी की मय्यित से पर्दा हटा दिया गया था। मगर एक तो इसकी कोई सहीह रिवायत नहीं। दूसरी, अगर पर्दा हटा भी दिया गया हो तो यह ख़ास होने की दलील नहीं बन सकता। क्योंकि एक तो इस बात की कोई दलील नहीं कि पर्दे का हटाया जाना ही इस नमाज़ के शरअी होने की बुनियाद थी। दूसरे नबी सल्ल० ने गहन की नमाज़ पढ़ाई। दौराने नमाज़ आपको जन्नत व जहन्नम दिखलाई गई। क्या कोई कह सकता है कि चूंकि आपके बाद किसी को जन्नत व जहन्नम नहीं दिखलाई जाएगी इसलिए गहन की नमाज़ आपके साथ ख़ास हुई। और किसी और के लिए शरअी नहीं।

यह भी कहा जाता है कि यह नमाज़ नबी सल्ल० ने केवल नज्जाशी के लिए पढ़ी। दूसरे सहाबा की वफ़ात हुई और आपको ख़बर भी मिली। मगर आपने उनकी नमाज़े जनाज़ा ग़ायबाना नहीं पढ़ी। मगर यह भी सहीह नहीं। क्योंकि नज्जाशी की वफ़ात पर जब 9 हिजरी में यह नमाज़े जनाज़ा ग़ायबाना मशरूअ हुई। और उस समय से आप सल्ल० की वफ़ात तक आपको दूर दराज़ किसी सहाबी के वफ़ात पाने की कोई ख़बर नहीं मिलती। बल्कि उससे पहले के दिनों में भी शहीद होने वालों के अलावा किसी और दूर दराज़ वफ़ात का ज़िक्र मुश्किल से मिल सकेगा। और अगर किसी की वफ़ात हुई भी हो, और आपको उसका पता भी हुआ हो, और फिर भी आपने उसकी ग़ायबाना नमाज़े जनाज़ा न पढ़ी हो तो यह ज़्यादा से ज़्यादा इस बात की दलील हुई कि नमाज़े जनाज़ा

शेष अगले पृष्ठ पर

क़ब्र पर नमाज़े जनाज़ा :

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि सियाह रंग की एक औरत मस्जिद (नबवी) में झाडू फेरा करती थी। वह नज़र न आई तो आप सल्ल० ने उसके बारे में पूछा। सहाबा रज़ि० ने बताया कि वह मर गई है। आपने फ़रमाया : "तुमने मुझे ख़बर क्यों नहीं दी? मुझे उसकी क़ब्र बताओ।" सहाबा ने आपको उसकी क़ब्र बताई। फिर आपने क़ब्र पर नमाज़े जनाज़ा पढ़ी और फ़रमाया : "यह क़ब्रें तारीकी और अंधेरों से भरी होती हैं। मेरी नमाज़ के सबब अल्लाह तआला उनको रोशन कर देता है।"[1]

ग़ायबाना छोड़ी भी जा सकती है। ख़ास की दलील न होगी। बाक़ी रहे शहीद तो सामान्यता उनकी नमाज़े जनाज़ा ही नहीं पढ़ी जाती थी।

यह भी कहा जाता है कि नज्जाशी ऐसी जगह मरा था जहां कोई नमाज़े जनाज़ा पढ़ने वाला न था। मगर सीरत निगारों ने लिखा है कि मक्का में हब्शा की एक जमाअत ने आकर ईमान क़ुबूल किया था जिस पर "व इज़ा समिऊ मा उनज़ि-ल अ़लर रसूलि" और दूसरी आयात नाज़िल हुईं। (सीरत इब्ने हिशाम 2/605 व कुतुब तफ़्सीर) फिर मदीना में भी उनकी एक बड़ी मोमिन जमाअत तशरीफ़ लाई थी। (तफ़्सीर तिबरी इब्ने कसीर आदि मुताल्लिक़ा आयात)। सुदूर है कि इतने मुसलमान अपने एक सम्मानित व्यक्ति को बिला नमाज़े जनाज़ा दफ़न कर दें। अतः यह उज्र भी सहीह नहीं।

1. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1337 व मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 956। इससे मालूम हुआ कि मस्जिद की सफ़ाई करने की बड़ी श्रेष्ठता है और यह भी मालूम हुआ कि अल्लाह तआला ने नबी अकरम सल्ल० को हर प्रकार की ग़ैबी ख़बरें प्रदान नहीं की थीं।

तदफ़ीन व ज़ियारत

(1) उक़बा बिन आमिर रज़ि० कहते हैं कि :

«ثَلَاثُ سَاعَاتٍ كَانَ رَسُوْلُ اللهِ ﷺ يَنْهَانَا أَنْ نُصَلِّيَ فِيْهِنَّ أَوْ أَنْ نَقْبُرَ فِيْهِنَّ مَوْتَانَا حِيْنَ تَطْلُعُ الشَّمْسُ بَازِغَةً حَتَّى تَرْتَفِعَ، وَحِيْنَ يَقُوْمُ قَائِمُ الظَّهِيْرَةِ حَتَّى تَمِيْلَ الشَّمْسُ وَحِيْنَ تَضَيَّفُ الشَّمْسُ لِلْغُرُوْبِ حَتَّى تَغْرُبَ»

"रसूलुल्लाह सल्ल० ने तीन औक़ात में नमाज़ पढ़ने और मुर्दों को दफ़न करने से मना फ़रमाया : (अ) तुलूअ आफ़ताब के समय यहां तक कि बुलन्द हो जाए। (ब) जब सूरज दोपहर के समय ऐन सर पर हो यहां तक कि ढल जाए। (स) ग़ुरूब आफ़ताब के समय यहां तक कि ग़ुरूब हो जाए।[1]

(2) इब्ने उमर रज़ि० से रिवायत है कि नमाज़े जनाज़ा, नमाज़े फ़ज्र और नमाज़े अस्र के बाद अदा की जा सकती है।[2]

(3) क़ब्र गहरी ख़ोदें उसे हमवार और साफ़ रखें।[3]

(4) मय्यित को पांव की तरफ़ से क़ब्र में दाख़िल करें।[4]

(5) मय्यित को क़ब्र में रखते हुए यह दुआ पढ़ें :

«بِسْمِ اللهِ وَعَلَى مِلَّةِ رَسُوْلِ اللهِ ﷺ»

"अल्लाह के नाम से और रसूलुल्लाह सल्ल० के मज़हब और तरीक़े पर (इसे दफ़न करते हैं)।"[5]

---

1. मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 831।

2. मोता इमाम मालिक, जनाइज़, (1/229)।

3. तिर्मिज़ी, जिहाद, हदीस 1717, अबू दाऊद, जनाइज़, हदीस 3215, इमाम तिर्मिज़ी ने इसे सहीह कहा है।

4. अबू दाऊद, जनाइज़, हदीस 3211, बैहेक़ी ने इसे सहीह कहा है।

5. अबू दाऊद, जनाइज़, हदीस 3213। इसे हाकिम और इमाम ज़ेहबी ने सहीह कहा है। अफ़सोस कि यह सुन्नत भी मिटती चली जा रही है क्योंकि लोगों ने इसका मुतबादिल ढूंढ रखा है अर्थात वही नारा "कलिमा शहादत"।

(6) सअद बिन अबी वक़्क़ास रज़ि० ने वसीयत की कि मेरे लिए लहद बनाना और उस पर कच्ची ईंटें लगाना जैसे रसूलुल्लाह सल्ल० के लिए किया गया था।[1]

(7) आप सल्ल० की क़ब्र ऊंट की कोहान जैसी थी।[2]

(8) फिर (क़ब्र पर मिट्टी डालकर) सब लोग मय्यित के लिए बख़्शिश और साबितक़दमी की दुआ मांगें।[3]

जनाज़ा के बाद क़ब्रिस्तान से निकल कर दुआ करना रसूलुल्लाह सल्ल० से साबित नहीं अतः यह बिदअत है।[4]

क़ब्रों को पुख़्ता बनाने की मनाही

क़ब्रों को ऊंचा करना, पुख़्ता बनाना, उन पर गुंबद और क़ुब्बे बनाना हराम है।

जाबिर रज़ि० कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने पुख़्ता क़ब्रों और उन पर इमारत (गुंबद आदि) बनाने से मना किया और आपने क़ब्र पर बैठने और उनकी तरफ़ मुंह करके नमाज़ पढ़ने से (भी) मना फ़रमाया है। चाहे कोई व्यक्ति मुजाविर बनकर बैठे या चिल्लाकशी के लिए, सब नाजाइज़ है।[5]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने क़ब्रों पर लिखने से भी मना फ़रमाया है।[6]

हज़रत अली रज़ि० बयान करते हैं कि मुझे रसूलुल्लाह सल्ल० ने हुक्म दिया कि मैं हर तस्वीर (चेहरा) मिटा दूं और हर ऊंची क़ब्र बराबर कर दूं।[7]

---

1. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 966।

2. बुख़ारी, जनाइज, हदीस 1390।

3. अबू दाऊद, जनाइज़, हदीस 3221, हाकिम (1/370) और हाफ़िज़ ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा है।

4. नमाज़े जनाज़ा के फ़ौरन बाद मय्यित की चारपाइ के पास जमा होकर और इसी तरह तदफ़ीन के बाद चालीस क़दमों के फ़ासले पर पहुंचकर मय्यित के लिए दुआए मग़फ़िरत का ख़ुसूसी एहतिमाम व इल्तज़ाम करना सरासर बिदअत है।

5. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 970।

6. अबू दाऊद, जनाइज़, हदीस 3225, 3226, हाकिम (1/370) और ज़ेहबी ने इसे सहीह कहा।

7. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 969।

हज़रत उम्मे हबीबा और उम्मे सलमा रज़ि० ने रसूलुल्लाह सल्ल० से एक गिरजे का ज़िक्र किया कि उसमें तस्वीरें लगी थीं। आपने फ़रमाया कि : "जब उन लोगों का कोई नेक व्यक्ति मर जाता तो वह उसकी क़ब्र पर मस्जिद बनाते और वहां तस्वीरें बनाते। क़ियामत के दिन ये लोग अल्लाह के सामने बदतरीन मख़्लूक़ होंगे।"[1]

रसूलुल्लाह सल्ल० ने आख़िरी बीमारी (मर्ज़ुल मौत) में फ़रमाया : "अल्लाह तआला यहूद व नसारा पर लानत करे जिन्होंने अपने पैग़म्बरों की क़ब्रों को (अमलन) मस्जिदें बना लिया।" हज़रत आइशा रज़ि० ने फ़रमाया : "अगर इस बात का डर न होता कि लोग आप सल्ल० की क़ब्र को मस्जिद बना लेंगे तो आपकी क़ब्र खुली जगह में होती।"[2]

क़ब्रों की ज़ियारत :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "मैंने तुम्हें क़ब्रों की ज़ियारत से मना किया था। अब तुम उनकी ज़ियारत किया करो।"[3]

एक रिवायत में है क़ब्रों की ज़ियारत मौत याद दिलाती है।[4]

शैख़ अलबानी फ़रमाते हैं : नबी सल्ल० ने क़ब्रों की ज़ियारत करने वाली औरतों पर लानत की, मगर उसके बाद आपने इजाज़त दे दी तो उसमें मर्द, औरत दोनों शामिल हैं। आप सल्ल० एक ऐसी औरत पर से गुज़रे जो क़ब्र पर बैठी रो रही थी आपने उसे अल्लाह से डरने और सब्र करने का हुक्म दिया।[5]

---

1. मुस्लिम, मस्जिदों, हदीस 528।

2. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1390, 1330 व मुस्लिम, मस्जिदों, हदीस 529।

3. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 977। यह ज़ियारत इसलिए मशरूअ नहीं कि वहां जाकर शिर्क व बिदअत के काम किए जाएं बल्कि फ़िक्रे आख़िरत की जाए और मौहिद लोग अहले क़ुबूर के हक़ में दुआए मग़फ़िरत करते रहें।

4. मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 976।

5. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1252, 1283, 1302 व मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 926।

अगर औरतों का क़ब्रिस्तान जाना नाजाइज़ होता तो आप उसको क़ब्रिस्तान में जाने से भी मना कर देते।

हज़रत आइशा रज़ि० अपने भाई अब्दुर्रहमान की क़ब्र की ज़ियारत को गईं उनसे कहा गया, क्या नबी सल्ल० ने (औरतों को) इससे मना नहीं किया था? तो हज़रत आइशा रज़ि० ने फ़रमाया, पहले मना किया था फिर इजाज़त दे दी थी।[1]

आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० फ़रमाती हैं, मैंने नबी सल्ल० से पूछा, जब मैं क़ब्रिस्तान में जाऊं तो कौन-सी दुआ पढ़ूं? आपने दुआ सिखाई।[2] इससे भी मालूम हुआ कि औरतों का क़ब्रिस्तान जाना जाइज़ है।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि : "रसूलुल्लाह सल्ल० ने कसरत से क़ब्रों की ज़ियारत करने वाली औरतों पर लानत फ़रमाई है।"[3]

मालूम हुआ कि औरतों के लिए बकसरत ज़ियारत तो मना है मगर कभी कभार जाइज़ है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "मुर्दों को बुरा न कहो जो आमाल उन्होंने किए थे वे उन्हें मिल गए।[4]

ज़ियारत क़ुबूर की दुआएं :

जो व्यक्ति क़ब्रों की ज़ियारत करने जाए। तो वह यह दुआ पढ़े :

«اَلسَّلَامُ عَلٰى أَهْلِ الدِّيَارِ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ وَالْمُسْلِمِيْنَ وَيَرْحَمُ اللّٰهُ الْمُسْتَقْدِمِيْنَ مِنَّا
وَالْمُسْتَأْخِرِيْنَ وَإِنَّا إِنْ شَاءَ اللّٰهُ بِكُمْ لَلَاحِقُوْنَ»

"मोमिन और मुसलमान घर वालों पर सलामती हो। हममें से आगे जाने

---

1. मुस्तदरक हाकिम (1/376) इसे हाफ़िज़ ज़ेहबी ने सहीह और हाफ़िज़ इराक़ी ने जय्यद कहा है।

2. मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 974।

3. तिर्मिज़ी, जनाइज़, हदीस 1057, तिर्मिज़ी और इब्ने हिबान ने इसे सहीह कहा है। क्योंकि इनमें सब्र का माद्दा कम होता है और वह शिर्किया उमूर में भी तेज़ होती हैं।

4. बुख़ारी, जनाइज़, हदीस 1393।

वालों और पीछे रहने वालों पर अल्लाह तआला रहम फ़रमाए और अगर अल्लाह ने चाहा तो हम भी अंक़रीब तुमसे मिलने वाले हैं।[1]

मुस्लिम ही की एक रिवायत में यह अल्फ़ाज़ भी हैं : (अस्अलुल्लाहु लना व लकुमुल आफ़ियह)

"मैं अल्लाह तआला से अपने और तुम्हारे लिए आफ़ियत की दुआ करता हूं।"[2]

1. सहीह मुस्लिम, जनाइज़, हदीस 974 की उप हदीस।
2. सहीह मुस्लिम, हवाला साबिक़, हदीस 975।

अन्य नमाज़ें

नमाज़ तौबा :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जब कोई आदमी गुनाह करता है फिर उठकर वुज़ू करता है फिर नमाज़ अदा करता है और तौबा इस्तग़फ़ार करता है तो अल्लाह तआला उसके गुनाह माफ़ कर देता है।"[1]

लैलतुल क़द्र के नवाफ़िल :

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया : "जिसने लैलतुल क़द्र में ईमान और सवाब की नीयत के साथ क़याम किया उसके तमाम गुज़िश्ता गुनाह माफ़ कर दिए जाएंगे।"[2]

लैलतुल क़द्र रमज़ानुल मुबारक के आख़िरी अशरे की ताक़ रातों (21, 23, 25, 27 और 29) में से एक रात है।

पंद्रहवीं शाबान के नवाफ़िल :

पंद्रहवीं शाबान की रात (शबे बराअत) के नवाफ़िल के लिए क़याम करने और जागने का एहतिमाम करना अहादीस सहीहा से साबित नहीं। इसी तरह (केवल) पंद्रह शाबान को रोज़ा रखने वाली रिवायत भी (जो इब्ने माजा में है) सख़्त ज़ईफ़ है।

प्यारे भाइयो और बहनो! अल्लाह, क़ियामत के दिन केवल वही नमाज़ें क़ुबूल करेगा, जो नबी रहमत सल्ल० की नमाज़ के नमूने के मुताबिक़ होगी।

इस किताब में आपने नबी सल्ल० की नमाज़ का प्यारा नमूना देख लिया है। हमारी निहायत ख़ुलूस से यह दरख़्वास्त है कि आप अपनी नमाज़ें अपने

---

1. तिर्मिज़ी, सलात, हदीस 406, इब्ने माजा, इक़ामतिस्सलात, हदीस 1395, इमाम तिर्मिज़ी ने इसे हसन कहा है। और यह किसी भी काम से तौबा करने की अफ़ज़ल तरीन सूरत है।

2. बुख़ारी, ईमान, हदीस 35, 1901, 2014 व मुस्लिम, सलातुल मुसाफ़िरीन, हदीस 760।

प्यारे रसूल सल्ल० के नमूने की रोशनी में पढ़ा करें। ताकि उन नूरानी नमाज़ों को अल्लाह के पास क़ुबूल आम हासिल हो। अगर नमूने के मुताबिक़ आपको नमाज़ पढ़ते हुए देखकर कोई नुक्ता चीनी करे या अहादीसे रसूल सल्ल० के मुक़ाबिल बुज़ुर्गों और इमामों के अक़वाल पेश करे तो आप उसकी नादानी से इज्तिनाब करते हुए अमल बिल हदीस पर कारबंद रहें। क्योंकि जिस तरह नबी अकरम सल्ल० की ज़ात रूए ज़मीन के तमाम बुज़ुर्गों और इमामों से आला व अरफ़ा है इसी तरह आपकी तालीम, सुन्नत और तरीक़ा भी रूए ज़मीन के तमाम तरीक़ों से आला व अरफ़ा है।

दुआ है कि अल्लाह तुआला मुझे और तमाम क़ारईन को अमले सालेह की तौफ़ीक़ दे। (आमीन)